नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा के मानविकी संकाय (संस्कृत) द्वारा 2021 में स्वीकृत शोध प्रबंध

शोध निर्देशक

डॉ. श्रीप्रकाश राय

आचार्य एवं अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा

शोध छात्रा

अर्पिता रंजन

दिल्ली

कृति : **नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व** (पी.एचडी. हेतु शोध ग्रंथ)

शोधार्थी : **श्रीमती अर्पिता रंजन**
सहायक अधीक्षण पुरालेखविद्,
भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण धरोहर भवन, पुरालेख अनुभाग,
२४, तिलक मार्ग, नई दिल्ली – १०० ००१

संपादक : **ब्र. जयकुमार 'निशांत'**

आवृत्ति : **१००० (प्रथम संस्करण)**

उपलक्ष्य : **नवागढ़ महोत्सव वर्ष २०२२**

न्यौछावर राशि : ३००/-

सौजन्य : **स्व. श्री पद्मसेन जैन एवं श्रीमती शकुंतला जैन की पुण्य स्मृति में**
श्री मुकेश जैन-श्रीमती मधु जैन, रजत एवं आयुषी जैन
श्री राकेश जैन-श्रीमती सरिता जैन, अरिहंत, वर्धमान जैन
मिशन चौक, सोनीपत, हरियाणा

प्राप्ति स्थान

१) **श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़**
पो. सोजना तह. महरौनी, जि. ललितपुर (उ.प्र.)
कार्यालय : मो.६३९३७००३६६

२) **पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य स्मृति ट-स्ट**
पुष्पांजलि, नगर भवन के पीछे, टीकमगढ़ (म.प्र.)
फोन : ७९७४०१०१३४, ६२६०८४००८३

३) **श्री दिगंबर जैन पंचबालयति मंदिर**
मेट-ो टॉवर के पीछे, ए.बी. रोड़, इन्दौर (म.प्र.)
फोन : ०७३१-४००३५०६, ८९८९५०५१०८

प्रकाशक : श्री १००८ दि. जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ समिति, जिला ललितपुर (उ.प्र.)

मुद्रक : **मोदी प्रिन्टर्स,**
76-बी पोलोग्राउण्ड इण्डस्ट-ीयल इस्टेट, पत्रिका प्रेस के पीछे, इंदौर (मो. 98260-16543)

*सर्वाधिकार सुरक्षित प्रकाशकाधीन

NAVAGARH :
Abhilekha Evam Puratatva

Veer Kunwar Singh Vishvavidhyalaya, Aara Ke
Manviki Sankaya (Sanskrit) dwara 2021 mein
Swikrit Shodh Prabandh

Shodh Nideshak
Dr. Shri Prakash Rai
Aacharya Evam Adhyaksh, Sanskrit Vibhag
Veer Kunwar Singh Vishvavidhyalaya, Aara

Shodh Chhatra
Arpita Ranjan
Delhi

Kruti : Navagarh : Abhilekha Evam Puratatva (P.hd. Hetu Shodh Granth)

Shodharthi : Shrimati Arpita Ranjan
Sahayak Adhikshan Puralekhvid
Bhartiya Puratatva Sarvekshan Dharohar Bhavan, Puralekh Anubhag
24, Tilak Marg, New Delhi - 100 001

Sampadak : Br. Jaikumar 'Nishant'

Avrutti : 1000, Nawagarh, Mahotsava Varsh 2022

Rashi : 300/-

Punyarjak: Late Shri Padamsen Jain & Smt. Shakuntala Jain ki Punya Smriti mein
Shri Mukesh Jain-Smt. Madhu Jain, Rajat & Aayushi Jain
Shri Rakesh Jain-Smt. Sarita Jain, Arihant & Vardhaman Jain
Mishon Chowk, Sonipat (Hariyana)

Prapti Sthan

1) **Shri Digamber Jain Atishaya Kshetra Nawagarh**
Po. Sojana Tah. Mahroni, Dist. Lalitpur (U.P.)
Office : 6393700366

2) **Pt. Gulabchandra Pushpa Prtishthacharya Smriti Trust**
Pushpanjali, Behind Nagar Bhavan, Tikamgarh (M.P.)
Phone : 7974010134, 6260840083

3) **Shri Digamber Jain Panchbalyati Mandir**
Behind Metro Tower, A.B.Road,Indore (M.P.)
Phone : 0731-4003506, 8989505108

Prakashak : Shri 1008 Digamber jain Atishaya Kshetra Nawagarh Samiti,
Dist. Lalitpur (U.P.)

Mudrak : Modi Printer
76-B-Pologround Industrial Estate, Area, Behind Patrika Press, Indore
Mobile : 98260 16543

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातज़्व

समर्पण

उन महापुरुषों
को
जिन्होंने
नवागढ़ के
साक्ष्यों एवं तथ्यों के
अनुद्घाटित रूप को
उद्घाटित करके
अन्वेषण एवं संवर्धन कर
जनमानस के पटल पर
बौद्धिक रूप से
स्थापित कर
करने में
महज़्वपूर्ण भूमिका
निभाई
व
निभा रहे हैं.. ।

विषय-सूची

सम्पादकीय 17
प्रकाशकीय 19
फलित हुआ गुरु आशीष 9
आशीर्वचन 10
अभिनन्दनीय शोध ग्रन्थ
विलक्षण कर्म 12
विशिष्ट अवदान 13
सम्मति 15
अभिमत
भूमिका 20

भारत का हृदय बुन्देलखण्ड - भौगोलिक स्थिति तथा नाम
1. बुन्देलखण्ड के नाम 25
2. बुन्देलखण्ड विस्तार 27

नवागढ़ का प्राचीन स्वरूप एवं ऐतिहासिक परिचय 28
नवागढ़ की प्राचीन सीमाएँ 29

नवागढ़ का अर्वाचीन स्वरूप 33
1. विलक्षण अन्वेषण 34
2. इतिहास एवं पुरातत्त्वविदों का सान्निध्य 34
3. नवागढ़ क्षेत्र का उद्भव एवं विकास 34
4. रहस्यमय गाथा 36
5. नवागढ़ उद्भव 37
6. नवागढ़ में आयोजित पंचकल्याणक 41
7. नवागढ़ में सामाजिक स्थिति 41

कल्याणकारी योजना 42
1. श्री नवागढ़ गुरुकुलम् 43
2. अन्नपूर्णा वात्सल्य योजना 43
3. निःशुल्क चिकित्सा 43
4. देवाशीष अमृत कूप 44

बुन्देलखण्ड एवं नवागढ़ की ऐतिहासिकता
1. प्रागैतिहासिक काल 45
2. गुप्तकाल (319 ई.) 47
3. प्रतिहारकालीन काल 48
4. चन्देल शासनकाल (830 ई.) 49
5. चन्देल शासनकाल में सिंचाई साधन 51
6. साहित्यिक अवदान 53
7. नवागढ़ में मन्दिर निर्माता श्रेष्ठी 56
8. विश्व का एकमात्र अतिशय क्षेत्र 58
9. नवागढ़ का पराभव 59
10. क्षेत्रीय विध्वंस 62

ऐतिहासिक एवं पुरातात्त्विक नगर 63
1. आहार
2. पपौरा
3. कुंडेश्वर 64
4. बड़गाँव
5. मड़खेरा
6. उज्ब्रगढ़ (ऊमरी)
7. भानपुर
8. ललितपुर 66
9. सीरोनखुर्द 68
10. दुधई 69
11. चाँदपुर 70
12. खजुराहो 72
13. अतिशय क्षेत्र नवागढ़ एवं कला क्षेत्र खजुराहो का अद्भुत साम्य 74
14. मदनपुर 75
15. महोबा 76

नवागढ़ से प्राप्त प्रतिमाओं के अभिलेख
अभिलेखों का उद्भव, विकास एवं महत्त्व 81
1. अभिलेखों का महत्त्व 84
2 गुप्तकाल का अभिलेख 85
3. जैन धर्मानुसार अभिलेखीय परम्परा 85
4. नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखों एवं धातु मूर्ति अभिलेखों की सूची 87
5. नवागढ़ से प्राप्त मूर्ति अभिलेखों की सूची 88
6. नवागढ़ से प्राप्त पाषाण (प्रस्तर) 89

अभिलेखों की सूची
7. संग्रहालय में संगृहीत खण्डित पाषाण प्रतिमा 89
8. संग्रहालय में संगृहीत संवत् रहित पाषाण प्रतिमा 90
9 नवागढ़ में महत्वपूर्ण अभिलेखों का मूलपाठ 90

नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर सामाजिक एवं धार्मिक परिदृश्य का समीक्षात्मक अध्ययन

सामाजिक परिदृश्य 107
1. वर्ण व्यवस्था 107
2. आश्रम व्यवस्था 108
3. परिवार 109
4. विवाह 110
5. बाल विवाह 110
6. विधवा विवाह 110
7. बहु विवाह प्रथा 111
8. नारी की स्थिति 111
9. भोजन और पेय 111
10. वस्त्राभरण 112
11. रीति-रिवाज 113
12. आस्था एवं विश्वास 114
13. क्षेत्रीय पर्व 117
14. मनोरंजन 118
15. बुन्देलखण्ड के अङ्-शङ् 119

धार्मिक परिदृश्य 119
1 जैन धर्म का उद्भव एवं विकास 120
2. चौबीस तीर्थंकर विवरण 120

चक्रवर्ती परिचय 134
1. चक्रवर्ती का वैभव 134
2. किमिच्छिक दान 135
3. चक्रवर्ती की राजविद्या 135
4. अरनाथ चक्रवर्ती 136
5. गर्भ कल्याणक 137
6. जन्म कल्याणक 138
7. तप कल्याणक 139
8. ज्ञान कल्याणक 139
9. मोक्ष कल्याणक 140

नवागढ़ से प्राप्त साक्ष्यों के आधार पर गुरुकुल परम्परा 140
1. उपाध्याय बिम्ब 142
2. अकलंक एवं निकलंक बिम्ब 142

नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखों के आधार पर प्रतिमाओं का अध्ययन 143
1. स्वस्तिक 144
2. हनुमान प्रतिमाएँ 145
3. शिव प्रतिमाएँ 145
4. गणेशदेव की प्रतिमाएँ 146
5. सूर्य प्रतिमाएँ 147
6. शक्ति प्रतिमाएँ 147

नवागढ़ में प्राप्त शैल एवं धातु जैन मूर्तियों का अनुशीलन 150
1. जैन मूर्तिकला का विकास 150
2. प्रतिमा निर्माण विधि 150
3. शिला परीक्षण या आकर शुद्धि विधि 151
4. जिनबिम्ब निर्माण की वर्तमान प्रक्रिया 152
5. जिनबिम्ब का वास्तु विधान 152
6. जिनबिम्ब का माप 152
7. अरिहन्त एवं सिद्ध बिम्ब में अंतर 154
8. हीनांग जिनबिम्ब का फल 154
9. खंडित जिनबिम्ब का फल 156
10. जिनबिम्ब पर रेखा विचार 156
11. मूलनायक जिनबिम्ब की दृष्टि 157

नवागढ़ में प्राप्त शैल एवं धातु मूर्तियों का परिचय 160
नवागढ़ में प्राप्त मूर्ति एवं कलाशिल्पों का विवरण 161

खनन से प्राप्त पूज्य प्रतिमाएँ
1. मूलनायक अरनाथ भगवान् 163
2. पार्श्वनाथ भगवान् 164
3. शतफणी पार्श्वनाथ भगवान् 164
4. तीर्थंकर महावीर 164
5. ताम्र पार्श्वनाथ भगवान् 165
6. लघु पार्श्व बिम्ब 165
7. चौबीसी भगवान् 165
8. अरहन्त बिम्ब 166

संग्रहालय में संगृहीत मूर्तियाँ एवं कलाशिल्प 166
1. विशाल तोरण 167
2. युगादि देव आदिनाथ 167
3. पार्श्वनाथ भगवान् 167
4. शान्तिनाथ आसन 168
5. शिल्प स्तम्भ 168
6. मानस्तम्भ 168
7. उपाध्याय प्रतिमा 168
8. जैन शासक मदनवर्मन 169
9. सुसज्जित उपरि परिकर 169
10. प्रतिहार कालीन अरहन्त 169
11. महावीर प्रतिमा 169
12. चंदेल बावड़ी 169
13. रहस्यमय मन्दिर अवशेष 170
14. भावना 170

वेदी में विराजमान पूज्य प्रतिमाएँ 171
क्षेत्र में संगृहीत खंडित प्रतिमाएँ एवं आसन 173

नवागढ़ में प्राप्त शैलोत्कीर्ण चित्रकला का परिचय
1. जैनदर्शन में चित्रकला 175
2. नवागढ़ में प्राप्त शैलचित्र 176
3. नवागढ़ में प्राप्त शैलोत्कीर्ण चित्रकला 177
4. खुदे हुए चित्रांकन 179
5. शैलोत्कीर्ण चित्रकला का विश्लेषण
   1. डॉ स्नेहरानी जैन- 180
   वरिष्ठ पुरातत्वविद्, सर हरिसिंह वि. वि.सागर
   2. डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी 182
   ऐमिरेट्स प्रोफेसर काशी हिन्दू विश्व विद्यालय वाराणसी,
   3. डॉ. गिरिराज कुमार
   राष्ट्रीय रॉक आर्ट सोसायटी आगरा 183
6. शैलचित्र नष्ट होने की कगार पर 184

नवागढ़ में प्राप्त प्राकृतिक शैल गुफाएँ एवं पुरापाषाण कालीन साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन 186

नवागढ़ में प्राप्त टोरिया (लघु पहाड़ियाँ) 186
1. मैनवार टोरिया 188
2. मुंडी टोरिया 188
3. सापौन टोरिया 189
4. सिद्धों की टोरिया 189
5. बगाज टोरिया 190
6. जैन टोरिया 191
7. ग्रेनाइट बोल्डर समूह 192

नवागढ़ में प्राप्त शैलाश्रय
1. आचार्य शैलाश्रय 193
2. साधना शैलाश्रय 194
3. उपाध्याय शैलाश्रय 194
4. साधु शैलाश्रय 194
5. अध्ययन शैलाश्रय 195
6. शयन शैलाश्रय 195

नवागढ़ में प्राप्त शिलाएँ 195
1. कच्छप शिला 195
2. मटकाटोर शिला 196
3. फाइटोन शिलाएँ 196

4. बैलेंस रॉक (अधरशिला) 197
5. घंटा की ध्वनि वाली शिला 198
6. हैंगिंग रॉक (लज़्बित शिला) 198
नवागढ़ में प्राप्त पुरा सज़्पदा
1. पाषाण की कुल्हाड़ी 198
2. पेट्रोलिक कपमार्क 199
3. मिट्टी एवं पाषाण के मनके 200
4. चन्देल बावड़ी 200
5. मन्दिर अवशेष 201
6. धातु उपकरण 201
7. काष्ट उपकरण 202
8. उत्कीर्ण साधु आकृति 202
9. चरण चिह्न 202
10. नवागढ़ से प्राप्त पाषाण कालीन साक्ष्य 202
11. नवागढ़ में प्राप्त साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन 204
उपसंहार 212
परिशिष्ट
1. विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़-डॉ. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी 217
2. सन्तों की पुरातन साधना स्थलीः नवागढ़ - प्रो. डॉ. भागचन्द्र जैन भागेन्दु 222
3. नवागढ़ पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र : - प्रो. गिरिराज कुमार, आगरा 228
4. गुरुकुल परज़्परा का संवाहकः नवागढ़ - डॉ. श्रेयांसकुमार जैन 233
5. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र 237 - डॉ. स्नेहरानी जैन
6. प्राचीन जैन नंदपुर शिलालेखों के दर्पण में -डॉ. हरिविष्णु अवस्थी, टीकमगढ़ 242
7. श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़, नंदपुर - डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी 250
8. नवागढ़ की पुरासज़्पदा और मांगलिक प्रतीक - ब्र. जयकुमार जैन निशांत 254
9. प्रागैतिहासिक पुरातात्त्विक विरासत का क्षेत्र नवागढ़ - श्रीमती अर्पिता रंजन 259
10. नवागढ़ मूर्तियों का कला वैशिष्ट्य -श्रीमती अर्पिता रंजन 261
11. चन्देल शासन काल में जैनधर्म का विकास - श्रीमती अर्पिता रंजन 264
12. बुन्देलखण्ड का नवोदित प्रमुख तीर्थ नंदपुर(नवागढ़) और यहाँ के कतिपय प्रमुख शिलालेख, - डॉ. कपूरचन्द्र सुमन ,
13. Navagarh:Antiquities from the Chandel Period-Dr. Yashwant K.Malviya 274
14. Newly Discovered Rock Art Site,Navagarh In Districct Lalitpur - Giriraj Kumar, Jay Kumar Nishant & Abhimanyu Gupta 279
सन्दर्भ ग्रन्थ 285

सज़्पादकीय

भारत में संस्कृतियों का ऐसा समावेश है जहाँ सभी संस्कृतियाँ, संरक्षण, संवर्धन, बहुमान एवं गौरव को प्राप्त होती हैं। यहाँ धार्मिक, ऐतिहासिक, पुरातत्त्वीय धरोहर के असीमित भण्डार संरक्षित हैं तथा असीमित भण्डार भूमि के गर्भ में सुरक्षित हैं। काल क्रमानुसार यह धरोहर विभिन्न क्षेत्रों में उद्घाटित होती रहती है।

प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़ धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक एवं पुरातात्त्विक समन्वय का विशाल नगर रहा है, जिसका अन्वेषण प्रतिष्ठा पितामह पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' के द्वारा किया गया। इसके संवर्धन, संरक्षण का सौभाग्य मुझे प्राप्त हो रहा है। आज नवागढ़ क्षेत्र जिनशासन की गरिमा एवं प्रभावना वृद्धिंगत करने वाला भगवान् अरनाथ स्वामी मूलनायक के अतिशय से सज़्पन्न विश्व का एकमात्र क्षेत्र है।

यहाँ जिनशासन की प्रभावना करने वाला पुरासज़्पदा का विलक्षण भण्डार है, जिससे जैन पुरातत्त्व पुष्ट ही नहीं हुआ है, सज़्पूर्ण विश्व में इसकी यश कीर्ति प्रसारित हुई है। गुरुकुल पराज़्परा के साक्ष्य मानस्तज़्भ के उपाध्याय बिज़्ब, पिच्छी चिह्न वाला उपाध्याय बिज़्ब, प्रतिहारकालीन आदिनाथ बिज़्ब, रॉक आर्ट एवं रॉक पेंटिंग, चन्देल बावड़ी, कूप, विभिन्न शैलाश्रय, साधना स्थल, शयन शैलाश्रय के साथ 5 कि.मी. क्षेत्र में फैली पुरा सज़्पदा एवं 5 लाख प्राचीन पाषाण औजार नवागढ़ के प्रागैतिहासिकता को पल्लवित एवं पुष्पित कर रहे हैं।

विभिन्न विधाओं के विशेषज्ञ विद्वानों में कला, इतिहास एवं जैन प्रतिमा विज्ञान के सशक्त हस्ताक्षर डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, ऐमिरेट्स प्रोफेसर काशी हिन्दू विश्व विद्यालय वाराणसी, डॉ. गिरिराजकुमार राष्ट्रीय महासचिव रॉक आर्ट सोसायटी ऑफ इंडिया, दयाल बाग इंस्टीट्यूटशन आगरा, डॉ. यशवंत मलैया, सीनियर साइंटिस्ट कोलोराडो स्टेट यूनिवर्सिटी अमेरिका, श्री हरिविष्णु अवस्थी वरिष्ठ इतिहासविद् टीकमगढ़, डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन इतिहासविद् एवं श्रेष्ठ प्रशस्ति वाचक के अप्रतिम सहयोग से नवागढ़ क्षेत्र विज़्यात हुआ।

डॉ. संजय मंजुल डायरेज़्टर भारतीय पुरातज़्व दिल्ली के माध्यम से श्रीमती अर्पिता रंजन सहायक अधीक्षण पुरालेखविद् भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण दिल्ली ने नवागढ़ के अभिलेखों एवं पुरा सज़्पदा से प्रभावित होकर डॉ. प्रकाश राय आरा के निर्देशन में कार्य करने का संकल्प किया। आपकी जैनदर्शन के प्रति अटूट आस्था है । मूलनायक अरनाथ स्वामी के चरणों में समर्पित होकर आपने अत्यंत विपरीत परिस्थितियों में इस कार्य को सज़्पन्न करके अपनी निष्ठा एवं समर्पण का आदर्श प्रस्तुत किया है।

बहिन श्रीमती सरिता इन्दौर के श्रम के बिना यह महनीय कार्य सज़्पन्न नहीं हो सकता था। इस शोध प्रबन्ध से जैन धर्म के साथ नवागढ़ के बहुआयामी पुरा-सज़्पदा को विशेष पहचान मिलेगी। श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ समिति इस शोध प्रबन्ध में सहयोगी सभी विद्वानों, पुरातज़्वविदों, इतिहास विदों के प्रति अपना श्रद्धाभाव निवेदित करके विनम्र अनुरोध करती हैं, भविष्य में आप सभी का इसी तरह सहयोग मिलता रहे, जिससे नवागढ़ की यशकीर्ति सदैव वृद्धिंगत हो सके।

समिति के लिए एक और गौरव प्राप्त होने जा रहा है, नवागढ़ क्षेत्र की साहित्यिक एवं सांस्कृतिक विरासत के संदर्भ में श्रीमती अर्चना जैन पज़्नी बरायठा ने डॉ. अभिषेक जैन, एकलव्य विश्वविद्यालय के निर्देशन में शोधकार्य आरंभ किया है, जो हमारे लिए गौरव का विषय है ।

मैं सभी के मंगलमय निरोगी, दीर्घ जीवन की मंगल कामना करता हूँ।

भवदीय -

ब्र. जयकुमार निशांत

निर्देशक - प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़

प्रकाशकीय

जैन धर्म की पहचान श्रमण संस्कृति से हैं और श्रमण संस्कृति अनादिकाल से है। श्रमण परज़्परा का वर्तमान इतिहास बहुत गौरवशाली है। सदियों तक मुस्लिम एवं अंग्रेजों के शासन में भी जीवन्त श्रमण परज़्परा से जिनशासन अक्षुण्ण रहा है।

श्रमण अपनी आत्म साधना एकान्त जंगलों में करते थे, कभी-कभी आहार के सौभाग्य से श्रावकों को दर्शन का पुण्य लाभ प्राप्त होता था। वर्तमान पंचमकाल के हीन संहनन एवं विपरीत परिवेश के कारण हमें निरन्तर सन्त समागम का सौभाग्य अपने नगरों में प्राप्त हो रहा है। वर्तमान काल में भी श्रमण आत्मसाधना जंगलों के मध्य शैलाश्रयों में करते थे। ऐसी ही साधना स्थली का अन्वेषण प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़ में ब्र. जय निशांत भैया जी के द्वारा किया गया है।

पुरातात्त्विक साक्ष्यों के अनुसार यहाँ तीसरी सदी के पहले से संतों का आवागममन शुरू हो गया था। नवागढ़ प्राचीन नंदपुर उस काल का प्रमुख राजनगर रहा है। जहाँ संत साधना के साथ गुरुकुल पद्धति से शिक्षण-प्रशिक्षण श्रावकों एवं व्रतियों को दिया जाता था। इन साक्ष्यों के आधार पर श्रीमती अर्पिता रंजन, भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण अधिकारी ने नवागढ़ के अभिलेखों के माध्यम से अपना महज़्वपूर्ण शोध कार्य सज़्पन्न करके जैन पुरातज़्व को विशेष उपलज़्धि एवं ऊँचाई प्रदान की है।

शोध ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु आपकी सहमति से यह पुनीत कार्य करने का समिति को सौभाग्य प्राप्त हुआ है। आपने शासकीय सेवा में रहते हुए भी समय-समय पर नवागढ़ आकर यहाँ का सर्वेक्षण करके शोध ग्रन्थ को मौलिकता प्रदान की है।

आपके इस शोध ग्रन्थ में अभिलेखों के आधार पर सामाजिक, धार्मिक, परिवेश के साथ जैन इतिहास के विशेष आयाम स्थापित किए हैं जिनसे आगामी काल में अन्वेषणकर्ताओं को विशेष मार्ग निर्देशन प्राप्त होगा। आपको इस श्रम साध्य कार्य के लिए साधुवाद ।

इस कार्य में संलग्न सभी अधिकारियों, पदाधिकारियों एवं कार्यकर्ताओं के प्रति आभार ।

अध्यक्ष	**महामंत्री**	**कोषाध्यक्ष**
सनतकुमार जैन	योगेन्द्र जैन बबलू	नरेन्द्र जैन मैनवार

एवं प्रबन्धकारिणी समिति श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़

फलित हुआ गुरु आशीष

नवागढ़ क्षेत्र के पदाधिकारियों ने ग्राम टड़ा में आचार्य श्री 108 गुरुवर विद्यासागर जी महाराज का आशीर्वाद प्राप्त किया था, उनके आशीर्वाद से लखनऊ अनुसंधानशाला से संपर्क स्थापित किया गया तथा आचार्य भगवंत के ज्येष्ठ शिष्य मुनि श्री समयसागर जी महाराज के नवागढ़ प्रवास के दिन लखनऊ से नवागढ़ क्षेत्र के विषय में अनुसंधान की स्वीकृति प्राप्त हुई। पूज्य गुरुदेव के मंगल आशीर्वाद से 10 दिसम्बर 2017 से 25 दिसम्बर 2017 तक अनुसंधानशाला की 17 सदस्यीय टीम द्वारा नवागढ़ में स्थित प्राचीन शिल्प, अभिलेख, बावड़ियों, शैलचित्रों आदि पर गहन अनुसंधान किया, साथ ही उनका रासायनिक संरक्षण भी आरंभ किया, ताकि नवागढ़ क्षेत्र में स्थित हजारों वर्ष प्राचीन अतिविशिष्ट मूर्ति आदि के रूप में स्थित अवशेषों को संरक्षित किया जा सके।

नवागढ़ क्षेत्र में अनुसंधान आरंभ- प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़, जिला ललितपुर में राष्ट्रीय सांस्कृतिक संपदा का संरक्षण लखनऊ अनुसंधान शाला के महानिदेशक डॉ. बी.वी. खरबड़े के निर्देशन में तथा वरिष्ठ अधिकारी डॉ. पी. के. पांडे द्वारा आज प्रथम दिवस पर कार्य आरंभ हुआ। क्षेत्र के मूलनायक भगवान् अरनाथ स्वामी का आशीर्वाद सभी 17 सदस्यीय टीम ने आरती करके लिया तथा नवागढ़ क्षेत्र के निर्देशक भैया जय निशांत जी ने सभी को क्षेत्र की ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक महत्ता एवं क्षेत्र के अन्वेषण एवं अतिशय की जानकारी देते हुए जैनधर्म की विशेषताओं के साथ क्षेत्र की प्राचीनता पर प्रकाश डाला। जहाँ एक ओर नवागढ़ क्षेत्र के महामंत्री श्री सनत कुमार जी जैन एडवोकेट ने सभी आगत अतिथियों के प्रति आभार व्यक्त किया।

क्षेत्र की सर्वश्रेष्ठ कृति तीर्थंकर युक्त महामंडल तोरण एवं उपाध्याय परमेष्ठी की मूर्ति से अनुसंधान का कार्य आरंभ किया। इस पावन पुनीत कार्य में देश के हर कोने से चाहे वो उड़ीसा हो, तमिलनाडु हो, या बंगाल, बिहार, अरुणाचल, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, सभी जगह से अनुसंधाताओं द्वारा यह कार्य तन्मयता से सम्पन्न किया जा रहा है।

इस कार्य से नवागढ़ क्षेत्र में संरक्षित हजारों वर्ष प्राचीन शिल्पों को नया जीवनदान मिलेगा। जिनमें प्रतिहारकाल सन् 625 से लेकर 8000 हजार वर्ष प्राचीन शैलचित्र जो जैनधर्म की ऐतिहासिकता को प्रदर्शित कर रहे हैं, जैन पहाड़ी में स्थित गुफाओं में अंकित कायोत्सर्ग मुद्रा एवं चरण जो नवागढ़ में जैन संतों की प्राचीन परम्परा के विलक्षण साक्ष्य है पर अनुसंधान किया जायेगा। जो कि हमारे जैनधर्म के गौरवमयी इतिहास के लिये अति आवश्यक है।

ब्र. जयकुमार निशांत
निदेशक, प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़

आशीर्वचन

श्रीमती अर्पिता रंजन द्वारा प्रस्तुत पुस्तक नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन वास्तव में वीर कुंवरसिंह विश्वविद्यालय द्वारा आरा की 2021 की स्वीकृत पीएच.डी. शोध प्रबन्ध है, जिसका प्रकाशन जैन अतिशय क्षेत्र, नवागढ़ समिति ललितपुर ने किया है, जिसके लिए अर्पिता रंजन जी के अतिरिक्त सम्पादक और तीर्थक्षेत्र के ब्रह्मचारी जयकुमार निशांत जी दोनों को हृदय से धन्यवाद देना चाहूँगा क्योंकि यह महत्त्वपूर्ण प्रकाशन नवागढ़ में अन्वेषण की दृष्टि से उल्लेखनीय है, जहाँ अभी भी अन्वेषण की बहुत सम्भावनाएँ हैं ।

बुन्देलखण्ड में जैन समाज के अनेक तीर्थ हैं। इनमें इतिहास एवं पुरातत्त्व की अमूल्य निधियाँ संरक्षित है। नवागढ़ (जिला-ललितपुर) पुरातात्त्विक दृष्टि से अत्यंत समृद्ध क्षेत्र है। नवागढ़ के शैलाश्रय (कच्छप शिला एवं साधना गुफा) प्राकृतिक सौन्दर्य एवं शान्ति के मध्य ध्यान-साधना के विशेष स्थान है । इनमें उकेरी कायोत्सर्ग मुद्रा एवं चरण चिह्न गुप्तकालीन हैं । कच्छप गुफा के चित्रों से ज्यामितीय आकारों तथा पशुओं के चिन्ह हैं, जो ई. पू. 1000 से पूर्व के लगते हैं। उससे सिद्ध होता है कि नवागढ़ क्षेत्र में जैन सन्तों का आवागमन तीसरी-चौथी सदी में होने लगा था। यहाँ प्राप्त विभिन्न मुद्राओं वाले उपाध्याय बिम्बों एवं मानस्तम्भ में उत्कीर्ण उपाध्याय बिम्बों से प्रतीत होता है कि देवगढ़ की तरह नवागढ़ भी विद्याध्ययन एवं साधना का विशेष स्थान रहा है, जिसकी स्थापना गुप्तकाल के पूर्व हो गयी थी।

नवागढ़ में संगृहीत पुरासम्पदा से यहाँ कई जैन मन्दिरों के होने का संकेत मिलता है। आसपास के निरीक्षण से ऐसे संकेत मिलते हैं कि यहाँ जैन मन्दिरों के साथ वैष्णव एवं शैव मन्दिर भी रहे होंगे जो भारतीय संस्कृति की धार्मिक सहिष्णुता को दर्शाते हैं।

नवागढ़ साधना तीर्थ में प्राचीन काल से वर्तमान काल तक सतत् जैन सन्तों का आवागमन एवं विशाल मन्दिरों का निर्माण हुआ, जिससे स्पष्ट होता है कि यहाँ के श्रावक समृद्धशाली एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे।

नवागढ़ की जैन कला का समावेशी स्वरूप एक लम्बे इतिहास में संजोये हैं जिसमें वीतरागी तीर्थंकरों की मनोहारी मूर्तियों को पारम्परिक मुद्राओं ध्यान और कायोत्सर्ग में निरूपित किया गया है। तीर्थंकरों की शतादिक मूर्तियों में अधिकांशतः पीठिका पर उनके पारस्परिक लांछन और सिंहासन, चामरधारी सेवक तथा शीर्ष भाग में त्रिछत्र प्रातिहार्य देखे जा सकते हैं। सामान्यतः पीठिका के छोरों पर यक्ष-यक्षिणी भी

निरूपित है। ऋषभनाथ और नेमिनाथ के साथ क्रमशः पारज़्परिक यक्ष-यक्षी, गोमुख चक्रेश्वरी और कुबेर अज़्बिका की मूर्तियाँ रूपायित हैं।

अभिलेखों की दृष्टि से भी नवागढ की जैन पुरासज़्पदा महज़्त्वपूर्ण हैं। इनमें संवत् 1123 से संवत् 2059 (1066 से 1997 ई.) तक के कई मूर्तिलेख हैं। जो नवागढ़ की पुरातज़्व यात्रा के विकास पर कई दृष्टियों से महज़्त्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। इन लेखों में सामान्यतः मूर्ति की स्थापना से संदर्भित भट्टारक पद्मदेव, राजपुत्र देवपाल तथा श्रेष्ठी कुल के गोलापूर्व अन्वय से सज़्बन्धित साहू रामचन्द्र, बालू, महीचन्द,देल्हण और नारी प्रतिष्ठाकत्री के नाम महज़्त्वपूर्ण हैं।

तीर्थंकर मूर्तियों के अतिरिक्त उपाध्यायों की स्वतंत्र मूर्तियाँ शाज़ एवं शिक्षा की दृष्टि से नवागढ़ के महज़्व को प्रदर्शित करती हैं। इनके अतिरिक्त क्षेत्ररक्षक देवता के रूप में क्षेत्रपाल (13 वी शती) के शीर्ष भाग में छोटी तीर्थंकर मूर्ति है। नायिकाओं या अप्सराओं तथा तीर्थंकर मूर्तियों में सर्वालंकृत चामरधारों की आकृतियाँ कलात्मक दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

वर्तमान मन्दिर अरनाथ (18 वें तीर्थंकर) को समर्पित है जो नवागढ़ क्षेत्र का मुज़्य जैन मंदिर है। गर्भगृह में प्रतिष्ठित लगभग 4.75 फीट की कायोत्सर्ग मूर्ति सन् 1959 में उसी स्थान से खुदाई में प्राप्त हुई थी जो 10 वीं शती की प्रतीत होती है। मन्दिर प्रांगण के आवासीय भवन के ऊपरी तल के मन्दिर में भी धातु एवं प्रस्तर की कई तीर्थंकर मूर्तियाँ सुरक्षित हैं। इनमें 13 धातु मूर्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं जो आकार में एक से ग्यारह इंच की हैं। इनमें संवत् 1548 (1491 ई.) की डेढ़ इंच की पार्श्वनाथ की धातुमूर्ति में सर्पफणों का छत्र सुन्दर है।

जैन कला के विविध रूपों के साथ ही नवागढ़ क्षेत्र में वैदिक पौराणिक परज़्परा की देव मूर्तियाँ भी उपलज़्ध हैं, जो वैष्णव या शैव मन्दिरों के इस क्षेत्र में होने को प्रमाणित करती हैं। इन मूर्तियों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति, सूर्य एवं अप्सराओं की मूर्तियाँ क्षेत्र के आस-पास बिखरी हुई देखी जा सकती हैं, जिनका समुचित रख-रखाव आवश्यक है। वस्तुतः नवागढ़ का जैनकला के क्षेत्र के रूप में सज़्यक् विकास अपेक्षित हैं।

इस महज़्त्वपूर्ण पुस्तक के लिए मैं अर्पिता रंजन जी की प्रशंसा करता हूँ और आशा करता हूँ कि जैन पुरास्थलों के अध्ययन की दृष्टि से इस पुस्तक का स्वागत होना चाहिए।

– प्रो. मारुति नंदन प्रसाद तिवारी

नेशनल टैगोर फेलो इंदिरागांधी राष्ट्रीयकला केन्द्र, वाराणसी

अभिनन्दनीय शोध-ग्रन्थ

प्रस्तुत ग्रन्थ- ''नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुराताज़्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन'' एक शोध प्रबन्ध है। ''नवागढ़'' उज़रप्रदेश के ललितपुर जिला में अवस्थित है- स्थानीय जनता इसे ''नावई'' नाम से भी सज़्बोधित करती है।

नवागढ़ भारत का महज़्त्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थल है, जहाँ पुराताज़्विक सज़्पदा का विपुल भण्डागार है। यहाँ इतिहास, पुरातज़्व, संस्कृति, धर्म एवं पुराण सज़्बन्धी निधियाँ संरक्षित हैं।

उपर्युक्त महज़्त्वपूर्ण विषय पर शोध प्रबन्ध भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण धरोहर भवन, पुरालेख अनुभाग, नई दिल्ली की सहायक अधीक्षण पुरालेखविद् श्रीमती अर्पिता रंजन ने तैयार किया है। श्रीमती अर्पिता रंजन द्वारा प्रणीत यह शोध प्रबन्ध- वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा (बिहार) की ''पी-एच.डी.''- शोधोपाधि-2021 ई. से अभिमण्डित है।

पुरातन संस्कृति, कला, धर्म-विज्ञान, और इतिहास के संरक्षण तथा प्रचार-प्रसार की दृष्टि से शोधोपाधि के निर्धारित मानदण्डों की अनुपालना सहित यह अत्यन्त श्रमसाध्य शोधकार्य वैज्ञानिक ढंग से हुआ है।

अब से लगभग अस्सी वर्ष पूर्व तक पुरातज़्व, सांस्कृतिक इतिहास और जैन तथा वैदिक तीर्थक्षेत्रों के पृष्ठों से पूर्णतया ओझल, जैन तीर्थक्षेत्रों के प्रकाशित परिचयों, प्राचीन स्थलों की ''रिपोतार्ज'' आदि में अनुल्लिखित यह स्थान नावई-नन्दपुर-नवागढ़ (जिला ललितपुर, उज़रप्रदेश)- रत्नगर्भा पृथिवी के उदर में पूर्णरूप से अन्तर्गर्भित था। प्राचीन और मध्यकालीन इतिहास संस्कृति, धर्मशाज़ और पुरातज़्व को अपनी क्रोड में छिपाए इस स्थान के सर्वप्रथम आविष्कर्ताः पं. गुलाबचन्द्र जी जैन ''पुष्प'' ककरवाहा हैं। वे जैन प्रतिष्ठा विधि-विधान के पितामह-आचार्य, टीकमगढ़ (म.प्र.) निवासी के रूप में बहुत प्रज़्यात हैं और-इस महनीय केन्द्र स्थल के वर्तमान-स्वरूप के यशस्वी उद्गाता एवं प्रज़्यापक आदरणीय ब्रह्मचारी प्रज्ञापुरुष पण्डित श्री जयकुमार जी जैन ''निशान्त'' हैं। वे श्रद्धेय प्रतिष्ठा पितामह पण्डित प्रवर श्री गुलाबचन्द्र जी जैन ''पुष्प'' के चतुर्थ सुपुत्र, आजीवन बाल-ब्रह्मचारी और प्रत्युत्पन्नमतिमान् प्रतिष्ठाचार्य हैं। उनके अभूतपूर्व समर्पण, त्याग आत्मीयभाव और तपस्या का पूर्णतः परिचायक नवागढ़-नावई नन्दपुर का कण-कण तो है ही, श्रीमती अर्पिता रंजन द्वारा लिखित और ''डॉज़्टरेट'' की उपाधि से विभूषित यह शोध-प्रबन्ध भी है।

इस प्रसङ्ग में राष्ट्र भाषा हिन्दी के एक प्राचीन कवि द्वारा रचित काव्य की एक पंक्ति का स्मरण सहज ही हो रहा है, कि - ''शिव को सराहूँ कि सराहूँ शिवराज को ।''

अतः जिनके प्रत्येक श्वासोच्छास में नवागढ़-नावई नन्दपुर बसा है- रमा है-उन प्रज्ञा-पुरुष श्रद्धेय (स्व.) पण्डित, प्रतिष्ठा-पितामह श्री गुलाबचन्द्र जी जैन ''पुष्प'', पुरातज़्व के अग्रगण्य मनीषी (स्व.) श्री नीरज जी जैन सतना, और चलते फिरते उठते-बैठते, जीते-जागते केवल और केवल नवागढ़, नवागढ़ का सर्वतोभावेन उत्थान-विकास का निर्देशन जिनमें होता है, उन प्रत्युत्पन्न-मतित्व-सज़्पन्न ब्रह्मचारी श्री जयकुमार जी ''निशान्त'' का कोटि-कोटि अभिवादन करता हूँ ।

विदुषी श्रीमती अर्पिता रंजन ने अपने प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध - ''नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन''- के द्वारा नवागढ़ के अतीत और मध्यकालीन इतिहास, संस्कृति , मूर्ति-विज्ञान-अभिलेख, विविध पक्षों को विश्लेषित कर वहाँ की समृद्ध और सुरुचिपूर्ण नागरिकता, विभिन्न धर्मों एवं सज़्प्रदायों में समन्वयवादिता, सौमनस्य आदि को प्रकाशित किया है।

इस महज़्वपूर्ण विषय पर शोध प्रबन्ध लिखकर श्रीमती अर्पिता रंजन ने उल्लेखनीय कार्य किया है। एतदर्थ हम उन्हें अनेकशः बधाईयाँ एवं हार्दिक शुभ-कामनाएँ समर्पित करते हैं।

विश्वास है कि उनकी लेखनी के द्वारा इसी कोटि की अन्य रचनाएँ प्रकाशित होगी। ललितपुर जिला में अवस्थित देवगढ़ की जैन कला और संस्कृति पर भी विदुषी लेखिका का ध्यान जाना क्षेत्र नवागढ़ के विकास का अध्ययन में उपयोगी होगा ।

यह ग्रन्थ जैन तीर्थक्षेत्रों के इतिहास, संस्कृति और कला-वैभव के सर्वतोभावेन आकलन-मूल्यांकन हेतु भी बहुत उपयोगी तथा महज़्वपूर्ण है ।

इस ग्रन्थ का सर्वत्र स्वागत होना चाहिए । विश्वास है यह ग्रन्थ जैन तीर्थक्षेत्रों और कलाकेन्द्रों में एक नवीन अध्याय को जोड़ेगी ।

शुभ-कामनाओं के साथ-

प्रोफेसर डॉ . भागचन्द्र जैन भागेन्दु

प्रोफेसर एवं अध्यक्ष- संस्कृत प्राकृत तथा जैन विद्या विभाग, मध्यप्रदेश शासन उच्च शिक्षा

डायरेज़्टर- म .प्र. शासन संस्कृत अकादमी, भोपाल (म.प्र.) (से.नि.)

निदेशक- संस्कृत, प्राकृत तथा जैन विद्या अनुसंधान केन्द्र, दमोह (म.प्र.)

विलक्षण कर्म

-डॉ. भागचन्द्र जैन भास्कर, नागपुर (महाराष्ट्र)

पुरासज़्पदा का संरक्षण ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, एवं पुरातात्त्विक विरासत का संरक्षण है । पुरासज़्पदा के सूक्ष्म अन्वेषण से तत्कालीन राजनीति, संस्कृति, कला, शिल्प, शिक्षण, साहित्य आदि विधाओं का ज्ञान हो जाता है। प्रतिष्ठा पितामह पं. गुलाबचन्द्र जी पुष्प द्वारा अन्वेषित नवागढ़ में जैनधर्म के 18 वें तीर्थंकर अरनाथ स्वामी के अतिशयों से परिपूर्ण है । ब्र. जयकुमार जी निशान्त ने वहाँ की पुरासज़्पदा का अन्वेषण विशेषज्ञ पुरातज़्वविदों, इतिहासविदों एवं विद्वानों के सहयोग से पाषाणकालीन औजारों, रॉक आर्ट, रॉक पेन्टिंग, शिल्पकला के विलक्षण साक्ष्यों से इसे बहुआयामी प्रागैतिहासिक क्षेत्र के रूप में उजागर किया है ।

इसी क्रम में ब्र. निशान्त जी की प्रेरणा एवं सहयोग से डॉ. अर्पिता रंजन, सहायक अधीक्षण पुरालेख विद् भारतीय पुरातात्त्विक सर्वेक्षण दिल्ली ने नवागढ़ क्षेत्र में संगृहीत प्रतिमाओं पर अंकित अभिलेखों की श्रृंखला का अध्ययन करके नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन विषय से दीर्घकालीन,श्रमसाध्य एवं दुरूह कार्य सज़्पन्न करके नये आयाम स्थापित किये हैं।

सुदूर दिल्ली में सेवारत रहकर नवागढ़ आकर अभिलेखों जैसे गज़्भीर विषय पर कार्य करना आपकी संकल्पशक्ति, कर्ज़व्यनिष्ठा एवं समर्पण का ही सुफल है। मैं डॉ. प्रकाश राय, वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा को भी साधुवाद देता हूँ जिन्होंने इस चुनौतिपूर्ण कार्य के लिए महनीय निर्देशन देकर डॉ. अर्पिता रंजन को इस विलक्षण कार्य के लिए सज़्बल प्रदान किया है।

इस शोध ग्रन्थ की विषयावलि से सज़्पूर्ण नवागढ़ क्षेत्र एवं आसपास के परिवेश का समावेश करके डॉ . अर्पिता जी ने ऐसे पिछड़े, विस्मृत एवं उपेक्षित कला क्षेत्रों पर कार्य करने का मार्ग प्रशस्त किया है। आपके इस सफल प्रयास से नवीन शोधकर्ताओं का मार्ग ही प्रशस्त नही होगा, बल्कि उन्हें कार्य करने की प्रेरणा भी मिलेगी । आपके विलक्षण अन्वेषण, श्रम, एवं कर्ज़व्य निष्ठा से प्रागैतिहासिक नवागढ़ क्षेत्र को विश्वपटल पर पहचान मिलेगी। डॉ. अर्पिता जी के लिए बधाई, ब्र. निशांत जी, इसी प्रकार पुरातज़्व के विशेष आयाम स्थापित करते रहें साधुवाद ।

-आजाद चौक, तुकाराम चाल, कस्तूरबा लायब्रेरी के पास,

सदर, नागपुर -440 001 (महा.) मो. 9421363926

विशिष्ट अवदान

जैन परज़्परा में मूर्ति पूजा का इतिहास बहुत प्राचीन है। यहाँ चौबीस तीर्थंकरों की मूर्तियों का निर्माण, उनकी पूजा-प्रतिष्ठा, पंचकल्याणक आदि महोत्सवों का आयोजन, मन्दिरों-बसदियों के कलात्मक निर्माण आदि कराने को पुण्य का कारण माना गया है, जिसके कारण जैन समाज के सज़्पन्न और सदाशयी श्रावकगण इस कार्य को हजारों वर्षों से करते आये हैं और आज भी बहुतायत में कर रहे हैं। यही मन्दिर और मूर्तियाँ जैन संस्कृति की समृद्ध परज़्परा प्राचीनता के प्रामाणिक आधार हैं। इनकी पहचान, सुरक्षा-संरक्षण आदि करना हमारा नैतिक दायित्व है।

नवागढ़ इसी परज़्परा का प्राचीन ऐतिहासिक तीर्थ क्षेत्र है, जहाँ प्रतिष्ठा पितामह पं. गुलाबचन्द्र जी पुष्प प्रतिष्ठाचार्य ने मैनवार के नव्वी पठया, स्वरूप पठया, हल्काई सेठ, दयाचंद सेठ, कड़ोरे सेठ, ककरवाहा के मनकू सिंघई, हैदरपुर निवासी पल्टू मिठया, धर्मदास, सोजना के पन्ना सेठ, अजनौर निवासी अनंदी सिंघई, डूडा निवासी हल्के सिंघई, गुढ़ा निवासी कामता वैद्य आदि श्रद्धालु श्रावकों के साथ तीर्थंकर अरहनाथ की खडगासन प्रतिमा खोज निकाली थी और उसी समय से उक्त महानुभावों के सहयोग से नवागढ़ तीर्थ का विकास कार्य आगे बढ़ा था। विगत दशकों में ब्र. जयकुमार निशांत भैया जी प्रतिष्ठाचार्य पूर्ण समर्पण के साथ क्षेत्र का विकास कार्य देख रहे हैं। इस कार्य में जैन समाज का भी उन्हें पूर्ण सहयोग मिल रहा है ।

डॉ. (श्रीमती) अर्पिता रंजन, सहायक अधीक्षण पुरालेखविद, भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण, दिल्ली ने डॉ. श्रीप्रकाश राय के कुशल निदेशन में नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन विषय पर शोधकार्य करके वीर कुंवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा से पीएच.डी. की उपाधि प्राप्त की है। उनका यह शोधकार्य पुरातात्त्विक अध्ययन के क्षेत्र को अपने योगदान से समृद्ध करेगा और नवागढ़ क्षेत्र के पुरातात्त्विक महज़्व को जन-जन तक पहुँचाने में सहभागी बनेगा। इस उपयोगी शोध की लेखिका डॉ. अर्पिता रंजन और प्रकाशन हेतु संस्कृति प्रेमी ब्र. जय भैया तथा अतिशय क्षेत्र नवागढ़ समिति के सभी पदाधिकारियों को साधुवाद देता हूँ ।

– प्रो. ऋषभचन्द्र जैन फौजदार

पूर्व निदेशक, प्राकृत जैन शाज़ और अहिंसा शोध संस्थान, बिहार

प्रोफेसर-एकलव्य विश्वविद्यालय, दमोह (मध्यप्रदेश)

सज़्मति

संस्कृत अभिलेखों जैसे गूढ़ विषयों की विशद विवेचना तथा सहज बोधगज़्य प्रस्तुत निःसन्देह एक दुष्कर कार्य है। शोध कार्य के क्षेत्र की विशालता इसे दुरूह बना देती हैं। इसके लिये लेखिका का गहन शोधपरक अध्ययन गंभीर चिंतन एवं सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित है। नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन ग्रन्थ की लेखिका डॉ. अर्पिता रंजन इन सभी अपेक्षाओं पर शत-प्रतिशत खरी उतरी हैं ।

जैनधर्म विश्व के प्राचीनतम एवं महानतम धर्मों में से एक है। भारत की पावन भूमि में इस धर्म का उद्भव और सदियों से तीर्थंकरों की अमरवाणी, सन्देश और उपदेश यहाँ गुंजायमान हो रहे हैं । भारतीय संस्कृति को समृद्ध करने में जैन अभिलेखों की महज़्वपूर्ण भूमिका रही है । मूर्ति पूजा अंगीकार किये जाने के परिणाम स्वरूप तीर्थंकरों की दिव्य एवं अभिलेख अंकित भव्य मूर्तियों का निर्माण निर्बाध रूप से होता चला आ रही है। अभिलेख भारतीय इतिहास का एक स्वर्णिम एवं गौरवशाली अध्याय है ।

भारत के हृदय स्थल बुन्देलखण्ड में नवागढ़ से प्राप्त प्रागैतिहासिक काल से चन्देलकाल तक अवशेष विशेष रूप से संस्कृत अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्य के अलौकिक अद्वितीय, अनुपम उदाहरणों से भरा पड़ा है। ब्र. जयकुमार निशांत के पूर्ण सहयोग से डॉ. अर्पिता रंजन सहायक अधीक्षण पुरालेखविद् भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण पुरालेख अनुभाग नई दिल्ली ने नवागढ़ दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र में विराजमान एवं संग्रहालय में सुरक्षित जैन प्रतिमाएँ एवं कलावशेषों पर अंकित संस्कृत अभिलेखों का अध्ययन कर जैन पुरातज़्व इतिहास एवं धार्मिक, मूर्ति शिल्प की शाज़ोक्त विवेचना कर उसे ग्रन्थ में समाहित करने का चुनौतीपूर्णकार्य किया है । ब्र. जयकुमार निशांत द्वारा पुस्तक का सज़्पादन किया गया, इसके लिये डॉ. अर्पिता रंजन एवं ब्र. जय कुमार निशांत की जितनी प्रशंसा की जाय उतनी कम है।

भविष्य में बुन्देलखण्ड अंचल के जैन पुरा सज़्पदा पर शोध करने वाले शोधार्थियों के लिये यह ग्रन्थ सन्दर्भ ग्रन्थ बन जाएगा ।

विद्वतापूर्ण प्रमाणिक शोध कर लेखन के लिये लेखिका डॉ. अर्पिता रंजन एवं सज़्पादन के लिए ब्र. जयकुमार निशान्त को कोटिशः बधाईयाँ ।

नरेश कुमार पाठक

संग्रहाध्यक्ष (सेवा निवृज़्)

अभिमत

अनुमानतः ग्यारह-बारह सौ वर्ष पूर्व जमींदोज हुए बुन्देलखण्ड के जैन तीर्थ नवागढ़ के प्राचीन वैभव का श्रीमती अर्पिता रंजन ने समर्पित भाव से डॉ. श्री प्रकाश जी राय के निर्देशन में शोध कार्य कर शोध प्रबन्ध नवागढ़ से प्राप्त अभिलेख एवं पुरातात्त्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन कृति के माध्यम से प्राणवायु प्रदान कर नवागढ़ को नवजीवन प्रदान किया है ।

यह कृति निस्संदेह नवागढ़ के प्राचीन वैभव से जन-जन को परिचित करने में मील का पत्थर सिद्ध होगी । इस अपूर्व एवं श्लाघनीय कार्य हेतु डॉ. श्रीमती रंजन निश्चित रूप से बधाई एवं शुभाकांक्षाओं की अधिकारी हैं । उन्हें अशेष मंगल कामनाएँ।

हरिविष्णु अवस्थी
अध्यक्ष
श्री वीरेन्द्र केशव संग्रहालय परिषद्
टीकमगढ़ (म.प्र.) 472 001
सज़्पर्क - 9407873003

भूमिका

भारत विश्व के देशों के समक्ष अपना मस्तक ऊँचा कर सका है, इसलिए नहीं कि वह धनधान्य में या तकनीकी दृष्टि से इनसे ऊँचा है, वरन् इसलिए कि उसके पास वह प्राचीन, धार्मिक,पुरातात्त्विक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक धरोहर है जो विश्व भर में किसी के भी पास नहीं है। मिस्र और मेसोपोटामिया की प्राचीन संस्कृतियाँ सदैव के लिए काल के कराल गाल में ग्रसित हो गयी हैं, भारत की संस्कृति की गंगा पिछले हजारों वर्षों से अविरल रूप से बह रही है। यही है इस देश की विशेषता और इसके गर्व का प्रमुख कारण।

भारतवर्ष विभिन्न संस्कृतियों से मंडित ऐसा देश है जहाँ करोड़ों वर्ष प्राचीन साक्ष्य उपलज़्ध हैं। यहाँ सभी धर्मों के महापुरुषों ने जन्म लेकर इस पुण्यधरा को जीवन्त किया गया है। उनके जीवन चरित्र से भारतीय इतिहास सदैव जाज्वल्यमान रहेगा। आदर्श पुरुषों के चारित्र एवं गुणों की परिमल ने सज़्पूर्ण विश्व को सुगन्धित कर भारतीय संस्कृति का बहुमान किया है, जिससे भारतवर्ष को विश्वगुरु होने का गौरव प्राप्त है।

मानवीय प्रवृज़्ि सदैव नवीन कार्यों के अन्वेषण हेतु प्रेरित होती रहती है । किसी भी प्रकार की नवीन ज्ञानराशि उस समय की वस्तु के इतिहास का विकासक्रम घोषित करती है। चिरकालीन अतीत का निरीक्षण, परीक्षण, पर्यवेक्षण तथा समीक्षण से ही एक क्रमबद्ध इतिहास की संरचना होती है । ऐतिहासिक पृष्ठभूमि सदैव पुरातात्त्विक तथ्यों, साक्ष्यों एवं सामग्री पर निर्भर करती है, साथ ही लिखित साक्ष्य भी महज़्वपूर्ण हैं।

जहाँ उत्खननकर्ज़ा अथवा पुरातज़्ववेज़ा, उत्खनन के माध्यम से लुप्तप्राय इतिहास को प्रस्तुत करते हैं वही साहित्यकार, साहित्य जैसे दुर्बोध विषय का आश्रय लेकर पुरातात्त्विक विषयों की सहायता द्वारा इतिहास निर्माण का कार्य करते हैं। वस्तुतः इतिहास निर्माण के प्रमाणिक स्रोत, पुरातात्त्विक सामग्री, प्राचीन स्मारक तथा अभिलेख हैं । जिसके बारे में जानने की इच्छा मानव मस्तिष्क को अनवरत् जागृत करती रही है ।

नवागढ़ भारत का महज़्वपूर्ण ऐतिहासिक स्थल है, जहाँ विपुल संज़्या में

पुराताज़्विक सज़्पदा का भण्डार है । यहाँ ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, पुराताज़्विक एवं पौराणिक धरोहर सुरक्षित है। इस प्रदेश की भौगोलिक स्थिति सदियों से सांस्कृतिक इतिहास की संवाहक रही है। भारत के प्राचीनतम अभिलेखीय साक्ष्य सिन्धु घाटी के नगरों से प्रकाश में अवश्य आते हैं परन्तु अब तक इनका वाचन संभव नहीं हो पाया है ।

लेखन कला का आलोक मौर्यकाल से अस्तित्व में आता है, जिसमें ब्राह्मी, खरोष्ठी लिपियाँ प्रमुख माध्यम थी । इन लिपियों का उत्कीर्णन आधार अभिलेख प्रस्तर, ताम्र, मिट्टी के प्लेट्स आदि रहे हैं ।

प्रारज़्भ में इन अभिलेखों की भाषा प्राकृत थी किन्तु कालान्तर में ईसा के प्रथम व द्वितीय शताज़्दी से संस्कृत भाषा में अभिलेख उत्कीर्ण होने लगे थे।

मेरे शोध-प्रबंध को सार्थक करने हेतु मेरे शोध निर्देशक-प्रो. श्री प्रकाश राय (विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा, बिहार) ने विषय चयन करने में मेरी पूर्ण सहायता की तथा 'नवागढ़ से प्राप्त अभिलेख एवं पुराताज़्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन' पर शोध करने के लिए प्रेरित किया ।

शोध प्रबंध के प्रथम अध्याय में नवागढ़ की भौगोलिक स्थिति, नाम, विस्तार एवं नवागढ़ का प्राचीन एवं अर्वाचीन स्वरूप का विस्तृत वर्णन है । भौगोलिक विभाजन, प्राचीन नाम यथा बुन्देलखण्ड के भौगोलिक विवरण जैसे पर्वत, नदियाँ, अरण्य आदि का सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में विवरण दिया गया है। इतिहास के पुरातज़्वीय ज़ेतों के आलोक में अध्ययन क्रम प्रागैतिहासिक काल, गुप्तकाल, प्रतिहार काल, चन्देल काल से लेकर नवागढ़ क्षेत्र के उद्भव पराभव सहित नवागढ़ के अन्वेषण संक्षिप्त विवरण दिया गया है।

शोध-प्रबन्ध के द्वितीय अध्याय में अभिलेखों का अर्थ उनका महज़्व, उद्भव विकास पर संक्षिप्त आलोक है। इसमें अभिलेख की लिपि, विषय एवं भाषा का विवरण है। ब्राह्मी लिपि के निश्चित विकासक्रम के अवलोकन से अभिलेखों की प्रारज़्भिक भाषा प्राकृत थी। कालान्तर में अभिलेखीय साक्ष्य संस्कृत भाषा से उत्कीर्ण होने प्रारज़्भ हुए। नवागढ़ के अभिलेखों का मूलपाठ अधिकांशतः संस्कृत भाषा में उत्कीर्ण है ।

शोध-प्रबन्ध के तृतीय अध्याय में अभिलेखों के अध्ययन पर आधृत सामाजिक एवं धार्मिक परिदृश्य की चर्चा है। इसके अन्तर्गत वर्ण तथा आश्रम व्यवस्था, शिक्षा, स्थापत्य कला, विवाह, नारी स्थिति, भोजन तथा पेय, वज़ाभरण, उत्सव एवं रीति-रिवाज, आस्था एवं विश्वास एवं मनोरंजन पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय शती से 13 वीं शती ई. के मध्य में भारत में प्रचलित सभी सनातन धर्म का विवरण दिया गया है। नवागढ़ में जैनधर्म के विवरण सज़्पूर्ण जैनधर्म के उद्भव, विकास तथा 24 तीर्थंकरों की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला गया है। इसका मुज़्य आधार अभिलेखीय ज़ेत का समीक्षात्मक स्वरूप है।

शोध-प्रबन्ध के चतुर्थ अध्याय में नवागढ़ के शैल एवं धातु मूर्तिकला संक्षिप्त विवरण दिया गया है जिससे मूर्तिशिल्प कला पर प्रकाश डाला गया है जो जैन नवागढ़ के जैनधर्म की गरिमा की वास्तविक स्थिति को दर्शाते हैं।

शोध-प्रबन्ध के पंचम अध्याय में नवागढ़ से प्राप्त शैलोत्कीर्ण चित्रकला का परिचय है । इसमें जैनदर्शन में चित्रकला से लेकर शैलोत्कीर्ण चित्रकला का विश्लेषण है।

शोध प्रबन्ध का छठा अध्याय पुरापाषाण काल एवं प्राकृतिक शैल गुहाओं के महज़्व पर केन्द्रित है। यह शोध कार्य का सार संक्षेप है जो पुरातज़्व की महज़ा, उपयोगिता व ऐतिहासिकता पर प्रकाश डालता है ।

अध्याय सात में शोध प्रबंध का उपसंहार है जिसमें शोधकार्य के नवीन तथ्यों के साथ पुरातज़्व व इतिहास में इसकी उपयोगिता को आलोकित किया गया है। अभिलेखों के संदर्भ में, भाषा क्षेत्र के विस्तार में इस स्थल पर किए गए कार्य की महज़ा को रेखांकित करते हैं। उनका वैशिष्ट्य अनुपम, अप्रतिम एवं अद्भुत है।

संस्कृत वाङ्मय जैनधर्म, मूर्ज़ि शिल्प व दर्शन के प्रकाण्ड विद्वान् श्री मारुति नन्दन प्रसाद तिवारी (ऐमिरेट्स प्रोफेसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय एवं नेशनल टैगोर फेलो, भारत सरकार) के प्रति मैं विनम्र कृतज्ञता अर्पित करती हूँ जिनके अप्रतिम सहयोग ने शोध कार्य को नवीन दृष्टि प्रदान की है । शोध अध्ययन के समय उनकी ज्ञान-निष्ठा के प्रति सूक्ष्म दृष्टि और दूरदर्शिता दोनों का अद्भुत मार्गदर्शन मुझे मिला जिससे मेरा यह शोध-कार्य सरल हो सका।

मैं अपने पूज्य गुरुवर्य प्रो. (डॉ.) श्री प्रकाश राय, अध्यक्ष, संस्कृत विभाग के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने 'नवागढ़ से प्राप्त संस्कृत अभिलेख एवं पुराताज़्विक साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन' विषय पर कार्य करने के लिए सुझाव दिया । उनके कुशल एवं सुयोग्य निर्देशन ने शोध में आने वाली समस्याओं का समाधान किया। उन्होंने पूर्ण मनोयोग एवं निःस्वार्थ भाव से मेरे शोध का मार्ग प्रशस्त किया।

प्रो. प्रमोदचन्द्र झा, प्रो. अरुणा भूषण (पूर्व विभागाध्यक्ष, संस्कृत विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा), एवं डॉ. अंकिता मिश्रा, संस्कृत विभाग, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय, आरा का आत्मीयभाव भी श्लाघनीय है । जिन्होंने मेरे शोध कार्य को पूर्ण करने में अपना अविस्मरणीय सहयोग व समय प्रदान कर इस जटिल कार्य को सहज बनाने में अथक प्रयास किया है जिसके लिए मैं सदैव चिर ऋणी हूँ।

मैं आभारी हूँ श्री ब्र. जयकुमार जैन निशांत, प्रतिष्ठाचार्य (निर्देशक नवागढ़ अतिशय क्षेत्र अवस्थित संग्रहालय एवं जैन मंदिर) का जिन्होंने अपना अमूल्य मार्गदर्शन मुझे प्रदान किया । उनके अपूर्व सहयोग के बिना यह शोध-कार्य लिखना असंभव था।

भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण के मूर्धन्य पुरातज़्ववेज़ा अन्तर्राष्ट्रीय ज़्याति प्राप्त विद्वान संयुक्त महानिदेशक (संग्रहालय) श्री संजय कुमार मंजुल एवं संयुक्त महानिदेशक (प्रकाशन विभाग), श्री टीकाराम शर्मा का हृदय से आभार व्यक्त करती हूँ जिनके असीम सहयोग से मेरी शोध सामग्री का संकलन कार्य संभव हो सका।

मैं भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के पूर्व अतिरिक्त महानिदेशक श्री बी.आर. मणि जी के प्रति कृतज्ञ हूँ । जिनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन से मेरे अभिलेखीय कार्य में उनका पूर्ण मार्गदर्शन प्राप्त हुआ ।

आभारी हूँ स्व. पी.सी. जैन (उपाधीक्षण अभियन्ता) भारतीय पुरातज़्व सर्वेक्षण, जिन्होंने सर्वप्रथम इस पुरास्थल के विषय में मुझे अवगत करवाया एवं संग्रहालय नवागढ़ के प्रतिष्ठाचार्य श्री ब्र. जयकुमार निशांत से परिचय करवाया । इस पुरास्थल

के अवलोकन पश्चात् ही मैं इस विषय पर मैं शोध विषय का चयन कर पाई ।

मैं अपनी दिवंगत माँ श्रीमती पूनम कुमारी एवं पूज्य पिताश्री अनिलकुमार को सदैव नमन करती हूँ, जिसके सज़्बल एवं सहयोग ने मेरे कार्य को प्रशस्त किया। मैं परिवार के सभी सदस्यों सहित पति अपूर्व प्रज्ञ एवं श्री दिनेश नारायण सिन्हा, श्वसुर तथा श्रीमती मनोरमा सिन्हा के सौहार्दपूर्ण सहयोग के प्रति कृतज्ञ हूँ । जिनका पूर्ण आत्मीय एवं भावपूर्ण समर्थन मुझे प्राप्त हुआ।

मैं शोध-प्रबन्ध के शुद्ध टंकण हेतु सरिता जैन, देवेन्द्र जैन एवं अतुलकुमार साथ ही भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण, पंडित दीनदयाल उपाध्याय पुरातत्व संस्थान के फोटोग्राफर श्री प्रणव शर्मा के प्रति हृदय से आभारी हूँ ।

इसके अतिरिक्त परोक्ष-अपरोक्ष रूप से जिन लोगों ने भी मुझे सहयोग प्रदान किया है उन सभी के प्रति आभारी हूँ । मेरे द्वारा किया गया शोध कार्य संस्कृति , संवर्द्धन, पुरातज़्व व अभिलेखीय दृष्टि के संरक्षण एवं ज्ञान अर्जन हेतु सर्वथा नवीन एवं परिश्रमपूर्ण है ।

नवागढ़ क्षेत्र के भगवान् अरनाथ स्वामी से मुझे विपरीत परिस्थिति में भी इस शोध को पूर्ण करने की शक्ति एवं संबल मिला है यह मेरे जीवन का अविस्मरणीय कार्य है ।

यह मेरा सौभाग्य है कि मेरे शोध प्रबंध को श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ समिति द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है, इस महनीय कार्य के लिए में समिति की सदैव आभारी रहूँगी।

यह कृति मूलतः शोध प्रबंध ही है, इसे नवीन शोधार्थियों के लिए और अधिक उपयोगी बनाने की दृष्टि से परिवर्धित करते हुए विशेष सामग्री समाविष्ट की जा रही है।

– श्रीमती अर्पिता रंजन

सहायक अधीक्षण पुरालेखविद्,

भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण धरोहर भवन, पुरालेख अनुभाग,

२४, तिलक मार्ग, नई दिल्ली – १०० ००१

मो. : ९२५०० २८८४४

ज़ारत का हृदय बुन्देलखंड -भौगोलिक स्थिति तथा नाम

बुन्देलखंड भारतवर्ष का हृदयस्थल है। देश के इस मध्यीय भूभाग में लगभग समान प्रकार का सांस्कृतिक परिवेश देखने को मिलता है। इस भाग के निवासियों में भाषा, कला और संस्कृति का पिरोया हुआ एक सूत्र प्रतिबिझ्बित होता है।[1]

सीमा-बुन्देलखंड का अधिकतम विस्तार स्वीकार करने वाले विद्वान प्रायः इसे उज़र में यमुना, दक्षिण में नर्मदा (रेवा), पूर्व में टोंस (तमसा) तथा पश्चिम में चज़्बल (चर्मणावती) से आवृज़ मानते हैं।[2]

स्थिति-यह भाग उज़री अक्षांश 230-45' तथा 260-50' और पूर्वी देशान्तर 770-52' तथा 820 के मध्य स्थित है।[3]

बुन्देलखंड के नाम

बुन्देलखंड की ऐतिहासिकता भी अतिप्राचीन है। अतीतकाल से ही इसके नामकरण के सज़्बन्ध में अनेक मान्यताएँ हैं, इनका उल्लेख ऋग्वेद, रामायण, महाभारत, पुराणों एवं ग्रन्थों में विभिन्न कथानकों के रूप में मिलता है। इस भू-भाग में निरन्तर राजनैतिक उत्थान-पतन से सीमाएँ तथा नाम समय-समय पर बदलते रहे हैं यथा–

1. **चित्रकूट**—रामायण–कुछ लोग इसे दंडकारण्य भी मानते हैं।[4]

2. चेदि (महाभारत)[5]

3. **दशार्ण**—धसान नदी के कारण इसे दर्शाण कहते हैं।[6] 10 नदियों के संकल्प के कारण भी दशार्ण कहते हैं।

4. **चि.चि.टो.**—चीनी यात्री ह्वेनसांग ने अपने यात्रा वृज़ान्त (6वीं सदी के अन्त में) सी.यू. की. में बुन्देलखंड को इस नाम से वर्णित करते हैं। इसका क्षेत्र एक हजार ली अर्थात् 167 मील दूर उज्जैन में स्थित बतलाया है।[7]

5. **गोल्लदेश (कुवलयमाला कहा)**— छात्रावास के प्रकरण में गोल्लदेश, मध्यप्रदेश, अन्तर्देश के साथ अन्य देशों का वर्णन किया गया है ।[8]

6. **युद्धदेश (विष्णुधर्मोज़र पुराण)**—चैद्यनैषधयोः पूर्वे विंध्यक्षेत्राश्च पश्चिमे। रेवायमुनयोर्मध्ये युद्धदेश इतीर्य्यते।[9]

अर्थात् विष्णुधर्मोज़र पुराण में यमुना और नर्मदा के मध्य स्थित भाग को युद्ध देश कहा गया है।

7. **जीजकभुज़्ति या जेजाक भुज़्ति**—चन्देलों के समय में इस देश का नाम पड़ा, यह नाम चन्देलवंश के नरेश जेजा (जयशज़्ति) के नाम पर पड़ा है।[10]

8. **यजुर्होति**—यहाँ जुझौतिया ब्राह्मणों का प्रभुत्व और अधिकत्व होने से इसका नाम यजुर्होति रहा होगा।[11]

9. **जुझौति**—जनरल कनिंघम ने भी इसे जुझौति से पहचाना है। जुझौति का उल्लेख अबूरिहां ने भी किया है।[12]

10. **गौंडवाना**—गौंड लोगों के अधिकार एवं शासन वर्चस्व से मुंशी श्यामलाल इसे 650 वर्ष पूर्व गौंडवाना कहते हैं।[13]

11. **कर्णावती**—केन नदी या कर्णावती नदी के कारण इसका नाम कर्णावती रखा गया।[14]

12. **पद्मावती**—कुड़िया नदी के पास पन्ना को पद्मावती कहते हैं, इसी कारण इस प्रदेश का नाम पद्मावती पड़ा।[15]

13. **पिप्पलादि**—समुद्रगुप्त के काल में इसे अरण्य देश कहते हैं, इस दक्षिणी भाग को पिप्पलादि भाग से जानते हैं।[16]

14. **डाहल**—गुप्त शासकों के समय में पूर्वी भाग को डाहल कहा है।[17]

15. **वज्रदेश**—वज्र अर्थात् हीरा, हीरों की उत्पज़ि के कारण इसका नाम वज्रदेश पड़ा।[18]

16. **मध्यदेश**—प्राचीन ग्रन्थों में हिमालय और विंध्याचल के बीच के क्षेत्र को मध्यप्रदेश कहा गया है।[19]

17. **चन्द्रावति**—जनरल कनिंघम के मतानुसार चन्द्रावतीज (चन्द्रावती) देश का नामकरण चर्मणावती अथवा चज़्बल नदी के नाम से हुआ है। इसमें चज़्बल तथा टोंस के मध्य का समस्त भूभाग सज़्मिलित था।[20]

18. विन्ध्येलखंड—विन्ध्याटवी में स्थित होने के कारण इस देश का नाम विन्ध्येलखंड पड़ा जो बाद में अपभ्रंश हो बुन्देलखंड कहलाया।[21]

19. बुन्देलखंड—भारतवर्ष के मध्यभाग में नर्मदा के उज़र और यमुना के दक्षिण के मध्य स्थित क्षेत्र को बुन्देलखंड कहते हैं।

बुन्देल वंश के राजाओं का अधिपत्य होने से इसे बुन्देलखंड कहा गया। इसका सन्दर्भ छत्र प्रकाश एवं वीरसिंह देव चरित्र
में मिलता है।[22]

डॉ. स्मिथ भी बुन्देलखण्ड को नर्मदा एवं यमुना के मध्य स्वीकार करते हैं ।

20. पुलिन्द देश[23]

21. इन्द्रदेश[24]—प्रो. कृष्णदज़ वाजपेयी–इस क्षेत्र के पूर्वी नाम को बुन्देलखंड के रूप में कला की दृष्टि से समृद्धशाली मानते हैं। बुन्देलज़ंड के भाग हवेली, कुटेरा, खटोला, गुड़ाना, वनफरी, धंधेरखंड, पंवारी, महोरा, पठार, पैलेयार, ऐलपेरा आदि कहलाते हैं।

बुन्देलखंड इस क्षेत्र का सर्वाधिक प्रसिद्ध नाम है जो पिछली लगभग पाँच शताज़्दियों से अधिक समय से चलता आ रहा है। इस भूभाग पर बुन्देलखंड के राजाओं का अधिपत्य होने के कारण यह नाम प्रचलित हुआ।

बुन्देलज़ंड का विस्तार

बुन्देलखंड के विस्तार के बारे में विद्धानों में बहुत बड़ा मतभेद है। इसकी सीमाओं का निर्धारण लोगों ने अपने-अपने ढंग से किया है। बुन्देल महाराज छत्रसाल के राज्य की सीमाएँ निज़्नलिखित दोहे में व्याप्त की गयी हैं–

इत यमुना, उत नर्मदा, इत चज़्बल, उत टोंस।
छत्रसाल सों लरन की, रही न काऊ होंस।।

अर्थात् छत्रसाल का राज्य उज़र में यमुना , दक्षिण में नर्मदा, पश्चिम में चज़्बल तथा पूर्व में टोंस नदी तक फैला हुआ था। इस प्रकार उससे लड़ने का

किसी को उत्साह न रहा। बुन्देलखंड की सीमा-निर्धारण के लिए भी प्रायः यही दोहा उद्धृत किया जाता है। वस्तुतः यह दोहा छत्रसाल की विजय-प्रशस्ति या श
ौर्यगाथा का सूचक है और इसमें बुन्देलखंड का भाग भी सज़्मिलित है पर इस प्रदेश की सीमाओं के लिए इसको निर्णायक नहीं माना जा सकता।

पुरातज़्ववेज़ा जनरल कनिंघम के अनुसार बुन्देलखंड गंगा-यमुना के दक्षिण तथा पश्चिम में बेतवा नदी से लेकर पूर्व में विन्ध्यवासिनी देवी के मन्दिर तक, दक्षिण में चन्देरी, सागर तथा बिलहरी जिलों को सज़्मिलित कर नर्मदा तक फैला हुआ था।[25]

झाँसी सज़्भाग के पाँच जिले–झाँसी, ललितपुर, जालौन, हमीरपुर और बाँदा तथा सागर सज़्भाग के पाँच जिले-सागर, छतरपुर, टीकमगढ़, पन्ना, दमोह, बुन्देलखंड की सीमा में आते हैं।

इनके अतिरिज़्त ग्वालियर की भांडेर तहसील, दतिया जिला, शिवपुरी की पिछोर तहसील, भिंड जिले की लहर तहसील तथा गुना जिले का चन्देरी का भाग भी इसी बुन्देलखंड के अन्तर्गत आता है। उज़र में इसकी सीमा यमुना नदी बनाती है और दक्षिण में सागर कमिश्नरी के जिले हैं, पूर्व में इसकी सीमा-रेखा टोंस नदी मानी जा सकती है और पश्चिम में सिन्धु नदी।

इतिहासकार जनरल कनिंघम ने प्राचीन बुन्देलखंड के कई महानगरों का उल्लेख किया है। जो उस काल में राजनैतिक, सांस्कृतिक, धार्मिक, व्यापारिक रूप से चर्चित थे। परन्तु राजनैतिक सज़ा परिवर्तन एवं प्राकृतिक आपदाओं से अस्तित्व विहीन हो गये हैं। जिनका ऐतिहासिक एवं पुराताज़्विक महज़्व आज भी है यथा–महोबा, देवगढ़, चाँदपुर, दुधही, सैरोन, मदनपुर, खजुराहो, तत्कालीन नगरों में नवागढ़, बानपुर, दैलवारा, कालिंजर, अजयगढ़ उरई, सलक्षणपुर आदि।

नवागढ़ का प्राचीन स्वरूप एवं ऐतिहासिक परिचय

इसका राजस्व नाम (नावई) है जो ग्राम पंचायत सड़कौरा में आता है। इसका पोस्ट आफिस सोजना, तहसील महरौनी, जिला ललितपुर (उ.प्र.) है।

इसका प्राचीन नाम नन्दपुर है, जिसका उल्लेख कई अभिलेखों में मिलता है। वर्तमान में इसका नाम अतिशय क्षेत्र नवागढ़ के रूप में विश्वविख्यात है।

नवागढ़ की प्राचीनता पाषाण औजारों से पुरापाषाण काल (5 लाख वर्ष), शैलचित्रों से 6 से 8 हजार वर्ष, मिट्टी एवं पाषाण मनकों से 2 हजार वर्ष, गुप्तकालीन तीसरी सदी की रॉक कट इमेज, मूर्तिकला से प्रतिहार गुर्जर काल सातवीं सदी एवं चंदेल कालीन साक्ष्यों से लेकर वर्तमान तक सिद्ध हो रही है ।

नवागढ़ की प्राचीन सीमाएँ

यह मध्य प्रदेश एवं उत्तर प्रदेश की सीमा पर 78°-80 देशान्तर एवं 24°-34 अक्षांश में बुन्देलखंड के मुख्य तीर्थ क्षेत्रों के मध्य स्थित है।

वर्तमान में उपलब्ध साहित्यानुसार नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर जो पूर्व में विशाल व्यावसायिक, ऐतिहासिक, धार्मिक राजनगर था, इसके चारों ओर स्थित प्राचीन ऐतिहासिक, पुरातात्त्विक, तीर्थस्थल एवं कलाक्षेत्रों द्वारा सीमा निर्धारण का प्रयास कर रहे हैं।

पूर्व दिशा में - फलहोड़ी बड़ागाँव (सिद्धक्षेत्र) दूरी 10 किलोमीटर धसान नदी तक।

आग्नेश दिशा में - ऊमरी (सूर्यमन्दिर) दूरी 15 किलोमीटर

दक्षिण दिशा में - कारीटोरन (अतिशय क्षेत्र) दूरी 24 किलोमीटर

गिरार (अतिशय क्षेत्र) दूरी 30 किलोमीटर

नैऋत्य दिशा में - मदनपुर ऐतिहासिक नगर दूरी 50 किलोमीटर

पश्चिम दिशा में - बानपुर (ऐतिहासिक क्षेत्र) दूरी 35 किलोमीटर

दुधही, चाँदपुर-(पुरातात्त्विक ऐतिहासिक नगर) दूरी 75 किलोमीटर

चन्देरी-(चेदि ऐतिहासिक नगर) दूरी 80 किलोमीटर

वायव्य दिशा में - ललितपुर (ऐतिहासिक नगर) दूरी 65 किलोमीटर

उत्तर दिशा में - पपौरा 25 किलोमीटर, मड़खेरा सूर्य मंदिर 65 किलोमीटर, खजुराहो (कलातीर्थ) 175 किलोमीटर

ईशान दिशा में - अहार (अतिशय क्षेत्र) दूरी 24 किलोमीटर

इसके चारों ओर पुरातात्त्विक एवं धार्मिक स्थल निम्नानुसार हैं-

पूर्व दिशा में - फलहोड़ी बड़ागाँव, द्रोणगिरि

आग्नेय दिशा में - ऊमरी, पटनागंज, कुंडलपुर

दक्षिण दिशा में- कारीटोरन, गिरार,पजनारी, नैनागिर, सागर, ईश्वरबारा, बीनाबारहा,

नैऋत्य दिशा में - मदनपुर, अबारमाता

पश्चिम दिशा में - कुंडेश्वर, बानपुर, बालाबेहट, सेरोन, चन्देरी, खंडारगिरि, बूढ़ी चन्देरी, भियाडांड, थूबौन

वायव्य दिशा में - पवा जी, बजरंगगढ़, पचराई, गोलाकोट, पनियार, ललितपुर, दुधही, चाँदपुर, जहाजपुर, देवगढ़

उत्तर दिशा में - पपौरा, मड़खेरा, बंधाजी, अछरूमाता, करगुवां, प्यावल, सोनागिरि, पीताम्बरा पीठ

ईशान दिशा में - दरगुवां, अहार जी, खजुराहो, महोबा

नवागढ़ का क्षेत्र पथरीला, चट्टानों तथा लघु पहाड़ियों से युक्त है, इसकी सीमा का निर्धारण निम्न नालों से भी होता है ।

कलरानाला

यह नाला नवागढ़ क्षेत्र से मैनवार के मध्य 1.5 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह मार्ग मैनवार से सोजना होकर महरौनी ललितपुर जाता है। इस नाले का उद्गम सड़कौरा ग्राम के चन्देलकालीन तालाब से है। यह नाला सड़कौरा ग्राम से दक्षिण की ओर बढ़ता हुआ नवागढ़ एवं सोजना मौजा की सीमा बनाता हुआ डूँडाघाट पर जाकर पनयानाला से मिलकर ग्राम हैदरपुर (म.प्र.) के पास हरई नाला के रूप में प्रवहमान होते हैं।

पनयानाला

यह नाला पुंटाखेरा से निकलकर उत्तर में नवागढ़ एवं सापौन के मध्य मध्यप्रदेश एवं उत्तर प्रदेश की सीमा बनाता है तथा आगे बढ़कर पूर्व दिशा में

नवागढ़ से एक किलोमीटर दूर डूँडा गाँव के बीच दोनों प्रदेशों की सीमा निर्धारित करता है। डूँडा से मार्ग अजनौर होकर टीकमगढ़ (म.प्र.) को जाता है।

ज्ञातव्य है कलरानाला एवं हर्रई नाला गुर्जन ग्राम के टिकटौली घाट पर भैंसवारी से आने वाली जमड़ार नदी में मिलते हैं तथा जमड़ार नदी ऊमरी के पास बुन्देलखंड की प्रमुख नदी धसान में मिल जाती है जो बड़ागाँव से होकर टीकमगढ़ एवं छतरपुर जिले की सीमा निर्धारित करती है।

नवागढ़ का अर्वाचीन स्वरूप

नवागढ़ का अन्वेषण पंडित गुलाब चन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य द्वारा 8 अप्रैल 1959 को किया गया। उन्होंने अपने साथियों नज़्बी पठया, स्वरूप पठया, हल्काई सेठ, दयाचन्द्र सेठ, कड़ोरे सेठ, मनकू सिंघई ककरवाहा, पल्टू मिठया, धर्मदास हैदरपुर, पन्ना सेठ सोजना, अनंदी सिंघई अजनौर, हल्कू सिंघई डूंड़ा, कामता वैद्य, धर्मदास बजाज, गुढ़ा के साथ विशाल इमली वृक्ष टीला एवं चबूतरा हटाकर जमीन में 10 फुट नीचे भौंयरे (भूमिगत गर्भगृह) में जैनधर्म के 18वें तीर्थंकर अरनाथ के 4.9 फुट उजुंग कायोत्सर्ग मुद्रा में बिज़्ब को खोजा।

इस खनन कार्य में लगातार खंडित जैन मूर्तियाँ, देवी-देवताओं की मूर्तियाँ, साधुओं की मूर्तियाँ एवं विभिन्न कलाकृतियाँ सैंकड़ों की संज़्या में प्राप्त हुई थीं।

विलक्षण अन्वेषण

1) 6 अज़्टूबर 2014–जैन पहाड़ी के कच्छप शैलाश्रय में 6 से 8 हजार वर्ष प्राचीन शैलचित्र, ब्र. जयकुमार 'निशान्त'

2) 27 फरवरी 2015–जैन पहाड़ी पर साधना शैलाश्रय एवं शयन शैलाश्रय–ब्र. जयकुमार 'निशान्त'

3) 11 जून 2015 बगाज टोरिया की आचार्य गुफा को गाँव वालों की मदद से खोला

4)20 मार्च 2016 साधना गुफा में कायोत्सर्ग मुद्रा एवं चरण चिह्न की खोज (गुप्त कालीन सन् 320 ई.) श्री रामनारायण यादव एवं रामनाथ गूजर

5) 23 जून 2016 दो गुफाओं का अन्वेषण ब्र. जयकुमार 'निशान्त'

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

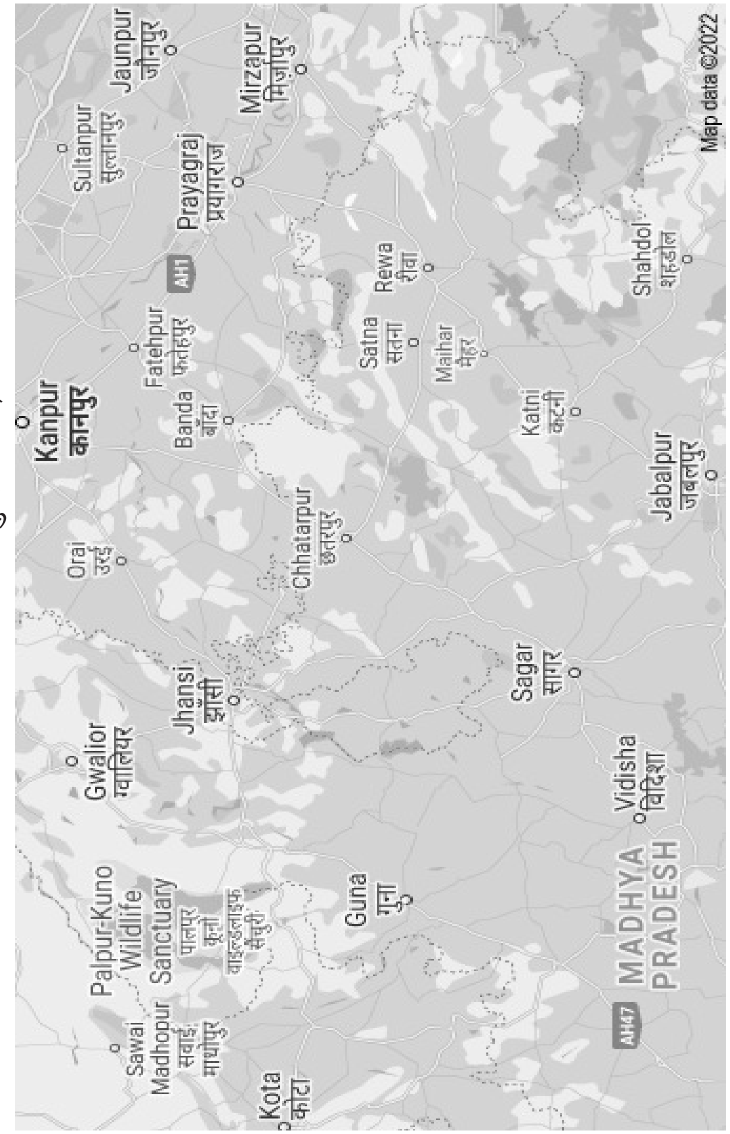

वर्तमान नक़्शा
1. बुन्देलखण्ड,

2. नवागढ़

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

6)6 नवम्बर 2016–लघुपाषाण औजार (15 हजार वर्ष प्राचीन) डॉ. एस.के. दुबे झाँसी एवं श्री नरेश पाठक ग्वालियर

7) 28 जनवरी 2017–सिद्धों की टोरिया पर रॉक कप मार्क (10 हजार वर्ष प्राचीन) डॉ. गिरिराज कुमार आगरा

फायटोन पहाड़ी के निकट पाषाण औजार (5 लाख वर्ष प्राचीन)

8) 27 मार्च 2018–पुरापाषाण कालीन औजारों की शृंखला (2 से 5 लाख वर्ष) डॉ. गिरिराज कुमार आगरा

9) 14 जनवरी 2018 मैटेलिक साउंड रॉक–ब्र. जयकुमार 'निशान्त'

इतिहास एवं पुरातत्त्वविदों का सान्निध्य

ब्र. जयकुमार निशांत के सद्प्रयास से समय-समय पर वरिष्ठ एवं विशिष्ट इतिहासविद्, पुरातत्त्ववेत्ता, शैलचित्र विज्ञानी एवं रॉक के आर्ट के विशेषज्ञ विद्वानों को आमंत्रित किया । जिनमें डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु पुरातत्त्वविद एवं सचिव संस्कृति मंत्रालय मध्यप्रदेश शासन, डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, ऐमिरेट्स प्रोफेसर डॉ. एस.एस. सिन्हा काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी, डॉ. ए. पी. गौड़ लखनऊ पुरातत्त्वविद, डॉ. गिरिराजकुमार राष्टीय सचिव, रॉक आर्ट सोसायटी, दयालबाग इंस्टीट्यूशन आगरा, डॉ. स्नेहरानी जैन, सर हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, इंजीनियर सुरेन्द्र मोहन जैन, सोनीपत, डॉ. यशवंत मलैया, कोलोराडो स्टेट युनिवर्सिटी, डॉ. भागचन्द्र भास्कर इतिहासविद् नागपुर, डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी वरिष्ठ इतिहासविद् टीकमगढ़, डॉ. एस. के दुबे राजकीय संग्रहालय झांसी, श्री नरेश पाठक ग्वालियर एवं श्री हरिविष्णु अवस्थी इतिहासविद् टीकमगढ़, डॉ. कस्तूरचन्द्र 'सुमन', वरिष्ठ प्रशस्तिवाचक, जयपुर डॉ. ऋषभप्रसाद जैन लखनऊ, डॉ. बृजेश रावत लखनऊ, डॉ. सुल्तान सलाहुद्दीन सागर, डॉ. ऋषभचन्द्र फौजदार दमोह ने नवागढ़ प्राचीन नंदपुर के सभी पक्षों, इतिहास, अभिलेख मूर्तिशिल्प स्थापत्य एवं प्राकृतिक शैलाश्रय, शैलचित्र, रॉकआर्ट एवं पुरापाषाणकालीन औजारों के माध्यम से नवागढ़ की प्राचीनता, ऐतिहासिकता, संस्कृति -कला, स्थापत्य नगरीय संस्कृति के संदर्भ में अपने-अपने मतों एवं मन्तव्य से इसका गौरव बढ़ाया है । जो आज शोध ग्रन्थ के रूप प्रस्तुत किया जा रहा है ।

इसी के साथ यहाँ मिट्टी-पाषाण के आभूषण, धातु एवं लकड़ी के उपकरण, मंदिर निर्माताओं की मूर्तियाँ, सामंतों राजाओं, साधुओं, तीर्थंकरों, महारानियों, विष्णु एवं शंकर के शीर्ष एवं अभिलेख संगृहीत हैं। यहाँ पर खुदाई के दौरान अनेक अति प्राचीन ऐतिहासिक तथ्य व साक्ष्य निरन्तर मिलते रहते हैं। इन पर लगातार खोज हो रही है। उसमें खुदाई के दौरान सावधानी बरती जाती है, ज़्योंकि खुदाई के दौरान अज़्सर प्रतिमाएँ एवं कलाकृतियाँ मिलती हैं । हाल ही में रूपसिंह गुर्जर के यहाँ खुदाई के दौरान पार्श्वनाथ भगवान् की खंडित प्रतिमा प्राप्त हुई हैं तथा प्राचीन बावड़ी से प्रतिमाएँ, कलाकृतियाँ एवं खंडित अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं।

इतिहासकार तथा पुरातज़्ववेज़ाओं के अनुसार नवागढ़ (नन्दपुर) गुप्तकाल से पूर्व का नगर है, जिसका विकास प्रतिहार काल एवं चन्देल काल में हुआ । महोबा से लेकर देवगढ़ तक पूरा बुन्देलखण्ड ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक धरोहर के लिए प्रसिद्ध है । नवागढ़ क्षेत्र कमेटी के प्रचार मंत्री डॉ. सुनील संचय ने बताया कि नवागढ़ में होने वाली खोज यहाँ की प्राचीन संस्कृति, इतिहास, राजनीतिक सज़्बद्धता और ग्रामीणों की खुशहाली को दर्शाती है । नवागढ़ में सन् 1959 से अब तक 114 प्राचीन प्रतिमाएँ खुदाई में मिल चुकी हैं। फाइटोन पहाड़ी के निकट जैन पहाड़ी पर स्थित संत साधना स्थल, गुफाओं में उकेरी गई आकृति और चरण चिह्न यहाँ जैन विरासत का साक्षात्कार कराते हैं । रॉक पेंटिंग, कपमार्क, हैंगिंग रॉक, बैलेंस रॉक, मैटेलिक साउंड रॉक इससे विशेष पर्यटन स्थल होने का साक्ष्य हैं।

रॉक आर्ट सोसायटी ऑफ इंडिया आगरा जनरल सेक्रेटरी डॉ. गिरिराज कुमार ने इस क्षेत्र के 10 किलोमीटर में स्थित विभिन्न पहाड़ियों का अध्ययन करने के बाद दो से पाँच लाख वर्ष पुराने प्री, मीडिल और पोस्ट पैलियोलिथिक काल के पत्थर के औजार खोज निकाले हैं जो आज भी नवागढ़ के संग्रहालय में संगृहीत हैं। इतिहासकारों और शोधकर्ताओं के लिए पर्यटन, सांस्कृतिक धरोहर, ऐतिहासिक धरोहर और बुन्देलखण्ड की सज़्यता के विकास में रुचि रखने वाले सभी विद्यार्थियों के लिए नवागढ़ विलक्षण तीर्थ, कला तीर्थ और धर्मतीर्थ हैं, जहाँ खोज करने के लिए विशेष सामग्री उपलज़्ध है । नवागढ़ इतिहासकारों के आकर्षण का केन्द्र है।

नवागढ़ क्षेत्र का उद्‌भव एवं विकास

नवागढ़ क्षेत्र में जैनदर्शन की प्राचीनता, सांस्कृतिक, धार्मिक, पौराणिक, ऐतिहासिक शिल्पकला के साथ-साथ शैलचित्रों द्वारा भी प्रमाणित हो रही है।[26]

पंडित गुलाब चन्द्र जी 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य जिनका यश प्रतिष्ठा पितामह के रूप में सज़्पूर्ण भारत वर्ष में चहुँ ओर विद्यमान है। आपके द्वारा 8 अप्रैल सन् 1959 में खोजे गये भगवान् अरनाथ स्वामी के भौंयरे एवं कलाशिल्पों से जिनशासन की सहस्राधिक वर्ष प्राचीनता के साथ संग्रहालय में संगृहीत पुरा सज़्पदा के सातवीं सदी के साक्ष्य विद्यमान हैं।

'पुष्प' जी के चतुर्थ पुत्र ब्र. जय कुमार 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्य के द्वारा खोजे गये शैलाश्रय एवं शैलचित्रों से जिनशासन की प्रागैतिहासिक प्राचीनता सिद्ध होती है। डॉ. स्नेहरानी जैन सागर, डॉ. भागचन्द्र जी 'ज़ागेन्दु' दमोह ने अपने आलेखों में लिखा कि इन शैलचित्रों में सांकेतिक रूप में जैनदर्शन की सल्लेखना परज़्परा एवं सप्त परम स्थानों का शृंखलाबद्ध विवरण दृष्टव्य है, जो शताज़्दियों पूर्व सन्त साधना की कई पीढ़ियों के रहस्यों को उद्‌घाटित करता है।

रहस्यमय गाथा

नवागढ़ के उद्‌घाटन की कथा विलक्षण है। पं. 'पुष्प' जी सुप्रसिद्ध आयुर्वेद चिकित्सक थे। वह जब चिकित्सा हेतु मैंनवार जा रहे थे तो नावई ग्राम की पहाड़ी के निकट पाषाण खंडों के ढेर के समीप टीले के पास कुछ खंडित जिनबिज़्ब पड़े थे। एक ग्रामीण मनौति माँग रहा था। उन्हें विश्वास हो गया अवश्य ही कोई जैन प्रतिमा है, जिसकी श्रद्धा गाँव वालों के संकट दूर करके उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण कर रही हैं।

टीले पर विशाल इमली वृक्ष को हटाने के कार्य को ग्रामीण जनों ने देव स्थान होने से मना कर दिया था। तब पं. 'पुष्प' जी ने अपने साथियों के साथ मिलकर इसे काटकर हटाने को सज़्यक् पुरुषार्थ किया। चारों ओर फैली जंगली झाड़ियों एवं शिलाखंडों को हटाने पर उन्हें एक संकीर्ण मार्ग मिला, जिससे वह जमीन के अन्दर भौंयरे में गये, वहाँ उन्हें धूल मिट्टी में धँसी भगवान अरनाथ स्वामी की मीन चिह्न

वाली 4.75 फुट उत्तुंग कायोत्सर्ग प्रतिमा के दर्शन हुए। तभी उन्होंने संकल्प किया वह इसकी विधिवत प्रतिष्ठा करके इस क्षेत्र का उत्थान करेंगे।

नवागढ़ उद्‌भव

सन् 1959 में प्रसिद्ध प्रतिमा विज्ञानी पं. नीरज जी सतना नवागढ़ वन्दना हेतु पधारे, उन्होंने आसपास के गाँव के भ्रमण करके पाया जगह-जगह पुरावशेष बिखरे पड़े हैं। कई टीले हैं जिनमें विशिष्ट पुरा सम्पदा प्राप्त होने की पूर्ण सम्भावना है। उनके मन में भगवान् अरनाथ स्वामी के प्रति अपूर्व श्रद्धा भाव जागृत हुआ। 30 नवम्बर 1959 मार्गशीर्ष कृष्ण 30 सं. 2016 को एक बैठक सोजना जैन मन्दिर में सिं. माणिक चन्द जी ककरवाहा की अध्यक्षता में बुलाई गयी। जिसमें क्षेत्र के उत्थान की रूपरेखा बनाई गयी। क्षेत्रीय समाज से चन्दा एकत्रित किया गया तथा प्रबन्धकारिणी कमेटी का प्रथम मनोनयन किया। अध्यक्ष मनकू सिंघई ककरवाहा, मन्त्री धर्मचन्द्र बजाज गुढ़ा, कोषाध्यक्ष हलकाई सेठ मैंनवार का मनोनयन सर्व सम्मति से हुआ।

ललितपुर के एडवोकेट श्रीमान् अभिनन्दन जी टड़ैया एवं बाबू हरिप्रसाद जी के माध्यम से सकल पंचान की बैठक में परामर्श हुआ कि नवागढ़ में आवागमन के साधन एवं अन्य सुविधाएँ न होने के कारण अन्यत्र प्रतिमा की स्थापना की जाए। यह कार्य सेठ पन्नालाल सोजना, धर्मचन्द्र जी बजाज गुढ़ा एवं सुखलाल जी सोजना को सौंपा गया। उन्होंने नवागढ़ आकर सरपंच एवं गाँव वालों को इस योजना से अवगत कराया। सरपंच परमानन्द यादव ने कड़े स्वर में कहा **'प्रतिमा यहीं रहेगी, ये हमारे संकटमोचन भगवान् हैं'** आपको जो भी करना है यहीं करें।

प्रथम प्रयास : धर्मभूषण पं. शीलचन्द्र जी न्यायतीर्थ साढ़ूमल के साथ हीरा लाल जी हटा की अध्यक्षता में सकल पंचान की बैठक की गयी, जिसमें नवागढ़ क्षेत्र के विकास हेतु परामर्श किया गया। समाज से चन्दा भी किया गया, अच्छी राशि एकत्रित हुई, परन्तु कार्य आरम्भ नहीं हो सका। पं. नीरज जैन सतना, क्षेत्रीय कमेटी एवं पं. 'पुष्प' जी के प्रयास भी असफल रहे। तब यह मानकर सन्तोष किया कि अभी उत्थान की मंगल बेला नहीं आई है।

द्वितीय प्रयास : कमेटी ने दो बार बैठक आयोजित की परन्तु कुछ लोगों की ही उपस्थिति हो सकी, सकल समाज को निर्जन बीहड़ स्थान पर इकट्ठा करने के उपायों पर विचार किया। सबने एक मत से कहा कि समाज को एकत्रित करने के लिए धार्मिक आयोजन किया जाए तथा सभी को उसमें आमन्त्रित भी किया जाए। इसके लिए ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी अर्थात् श्रुत पंचमी का दिन निश्चित किया गया। इस आयोजन में अतिथि सत्कार का भार मैंनवार समाज ने स्वेच्छा से सँभाला।

पूजा अनुष्ठान के पश्चात् शुभ बेला में कार्यारम्भ हुआ। उत्खनन में दो-तीन मन्दिरों के अवशेष रूप दीवारें मिली। इन्हें देखकर वयोवृद्ध श्रीमानों ने बताया भौंयरे के चारों ओर चौबीसी रही है, जो कालान्तर में ध्वस्त हो गयी होगी उसी के अवशेष हैं। सरकारी व्यवधान से खनन कार्य आगे नहीं हो सका। न जाने कितने रहस्य यहाँ की पुण्य भूमि अपने अन्तस में समेटे हैं?

प्रथम आयोजन : इस साधन विहीन क्षेत्र पर आयोजन करने का भाव होना किसी अतिशय से कम नहीं है। क्षेत्र के प्रति समर्पित स. सिं. नन्दलाल जी, सिं. स्वरूपचन्द्र जी, सिं. बलदेव प्रसाद जी, सिं. गट्टेलाल जी मैनवार ने 1008 सिद्धचक्र विधान कराने का भाव सकल प्रान्तीय पंचान के समक्ष रखा। सभी ने उत्साह पूर्वक अनुमोदना की। यह विधि विधान पं. नीरज जी सतना ने सम्पन्न कराया, जिसमें धर्मभूषण गुरुवर पं. शीलचन्द्र जी साढ़ूमल को विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया। इस विधान के पुण्य प्रभाव से समस्त अवरोध स्वयं ही दूर होते गये।

द्वितीय आयोजन : मेले से पूर्व सकल पंचान की बैठक बुलाई गयी, जिसमें विचार किया गया, इस बार कौन सा विधान किया जाए? जब कमेटी ने पं. नीरज जी से परामर्श किया तो उन्होंने कहा नवकेवललब्धि विधान किया जाए जिससे क्षेत्र में सदैव लब्धि बनी रहे इस विधान हेतु पूजा सामग्री संयोजन की बात उठी तो सेठ कन्हैयालाल जी नाथूराम जी मैंनवार से संकेत किया गया, उन्होंने तुरन्त स्वीकारता प्रदान की, जिससे सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए, मानों सारा काम पूर्ण हो गया हो।

उत्कर्ष का शुभारम्भ

सकल पंचान के निर्णय अनुसार सभी क्षेत्रीय समाज ने उत्साहपूर्वक 1.1.1960 (पौष शुक्ल 3 संवत् 2016) को प्रातः 10 बजे संग्रहालय का शिलान्यास ब्र. पं. मूलचन्द जी प्रतिष्ठाचार्य द्वारा सब इंस्पेक्टर श्री परशुराम यादव के करकमलों से सम्पन्न कराया। जिसमें मुखिया मजबूत सिंह जू मैनवार, ठाकुर हनुमन्त सिंह जू कबराटा, श्री ठाकुर साहब सड़कौरा, मुखिया परमानन्द यादव नवागढ़ (नावई), श्री छक्की लाल जी यादव, श्री देवी सिंह जू गूजर, सेठ हीरा लाल हटा उपस्थित थे। साधनहीन क्षेत्र में विकास एवं निर्माण कार्य दुरूह था, पर जैसे-तैसे कुछ कच्चे कमरों का निर्माण सोजना समाज के प्राप्त 200 रुपया एवं नादेल समाज से प्राप्त गार्डर के द्वारा समस्त क्षेत्रीय समाज के सहयोग से किया गया।

प्रथम वार्षिक मेला

सकल दिग. जैन समाज के परामर्श से श्रद्धालुओं को क्षेत्र पर आमन्त्रित करने के उद्देश्य से प्रतिवर्ष मेले के आयोजन का निर्णय लिया गया। प्रथम वार्षिक त्रिदिवसीय मेला दिनांक 27-29 फरवरी 1961, फाल्गुन शुक्ल 1-3 संवत् 2016 को आयोजित किया गया। उसमें श्रद्धेय पं. शीलचन्द्र जी न्यायतीर्थ साढूमल एवं ब्र. आत्मानन्द जी की उपस्थिति होने से मेला भव्यतापूर्वक अत्यन्त प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ। इसमें निर्माण हेतु अच्छा चन्दा भी प्राप्त हुआ था। इस मेले में मुनि श्री आदिसागर जी महाराज के साथ अनेक त्यागी गणों की उपस्थिति की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी। महाराज श्री केशलौंच का मंगल कार्य भी मेले में सम्पन्न होना था, परन्तु अचानक अस्वस्थ होने से वह टल गया। बाद में महाराजश्री का प्रवास नवागढ़ में कई दिन रहा।

मन्दिर निर्माण

श्रद्धालुओं की जागरूकता एवं सक्रिय सहयोग से भौयरें मन्दिर का जीर्णोद्धार आरम्भ हुआ। इस कार्य में दीवार से संवत् 1195 की प्रशस्ति वाली महावीर स्वामी की एक खंडित प्रतिमा तथा लघु पार्श्वनाथ की धातु की प्रतिमा प्राप्त हुई। प्राचीन शिलाखंडों को व्यवस्थित कर भौंयरे का सुधार करके अरनाथ भगवान को

उसी स्थान पर स्थापित किया गया, जहाँ वह विराजमान थे। अन्य प्रतिमाओं को एक कक्ष में अस्थाई वेदी बनाकर स्थापित किया गया। धातु की प्रतिमाओं को सुरक्षा की दृष्टि से एक पेटी में रखा गया।

परकोटे का शिलान्यास

संग्रहालय भवन अधूरा था। जंगली जानवरों का आवागमन होने से असुरक्षा एवं अशुद्धि होने के कारण प्रबन्ध समिति ने प्राथमिकता से परकोटे के निर्माण का निर्णय लिया। जिसका शिलान्यास 24-9-1960 शनिवार, आश्विन शुक्ल 4 संवत् 2016 को इंस्पेक्टर सोजना एवं मुंशी श्री शेव सिंह ही कुशवाहा थाना सोजना द्वारा किया गया। इस तरह क्षेत्र की सुरक्षा व्यवस्था के साथ मन्दिर निर्माण का कार्य सम्पन्न किया जाने लगा।

निर्माण प्रगति

पुष्प जी के समर्पण एवं अध्यक्ष सिं. मथुरा प्रसाद महरौनी, मन्त्री सनत कुमार जी ललितपुर, कोषाध्यक्ष सेठ दयाचन्द्र मैंनवार की लगन शीलता से अन्य नगरों के श्रेष्ठि से दान प्राप्त कर 1981-82 में जिनालय की ऊपरी मंजिल तैयार हो गयी। क्षेत्र के बाईं ओर एक हाल का निर्माण लाला श्रीचन्द जी (चावल वाले) मुजफ्फरनगर एवं उनके परिजनों के सहृदय सहयोग से पूर्ण हुआ। कर्मचारियों के आवास के लिए 2-3 कच्चे कमरों का निर्माण करके प्रतिदिन की पूजा व्यवस्था एवं यात्रियों के आवागमन को व्यवस्थित करने का प्रयास किया गया।[27]

शिखर एवं वेदी निर्माण

भगवान् अरनाथ स्वामी की प्रतिमा के साथ भगवान् शान्तिनाथ तथा कुन्थुनाथ की कायोत्सर्ग प्रतिमा विराजमान करने की भावना अध्यक्ष मथुरा प्रसाद सिंघई महरौनी एवं कोषाध्यक्ष दयाचन्द्र जी मैंनवार द्वारा व्यक्त की गयी। लाला श्रीचन्द जी परिवार के लाला नरेशचन्द्र जी, रमेशचन्द्र जी,

सुरेशचन्द्र जी एवं अनिल कुमार जी ने नवनिर्मित हाल में भगवान बाहुबली की प्रतिमा विराजमान करने का भाव समाज के सज़्मुख रखा। इस हेतु मूलनायक मन्दिर के शिखर एवं वेदियों के निर्माण करने हेतु सकल पंचान की बैठक आयोजित की गयी। जिसमें सभी की उत्साहपूर्वक सज़्मति प्राप्त हुई। निर्माण कार्य त्वरित गति से आरज़्भ हो गया।

नवागढ़ में आयोजित पंचकल्याणक महोत्सव

नवागढ़ में संगृहीत अभिलेखों का वाचन सर्वप्रथम डॉ. कस्तूरचन्द्रजी वरिष्ठ प्रशस्तिवाचक के द्वारा किया गया। जिसमें संवत् 1123 के आदिनाथ, संवत् 1188 के उपाध्याय परमेष्ठी, संवत् 1195 के महावीर, संवत् 1202 के शान्तिनाथ, संवत् 1203 के 4 मानस्तज़्भ, संवत् 1490 की चौबीसी, संवत् 1586 ताम्रपार्श्वनाथ संवत् 1885 विमलनाथ से लेकर संवत् 2077 तक की प्रतिष्ठित प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। तदनुसार नवागढ़ में निज़्न पंचकल्याणक सज़्पादित हुए हैं–

संवत् 1123 (सन् 1066 ई.) में प्रथम पंचकल्याणक
संवत् 1195 (सन् 1138 ई.) में द्वितीय पंचकल्याणक
संवत् 1203 (सन् 1146 ई.) में तृतीय पंचकल्याणक
संवत् 2042 (सन् 1985 ई.) में चतुर्थ पंचकल्याणक
संवत् 2069 (सन् 2012 ई.) में पंचम पंचकल्याणक
संवत् 2073 (सन् 2016 ई.) में षष्ठ पंचकल्याणक
संवत् 2076 (सन् 2019 ई.) में सप्तम पंचकल्याणक

नवागढ़ में सामाजिक स्थिति

ललितपुर से सुदूर म.प्र. की सीमा से 500 मी. की दूरी पर उ.प्र. का अंतिम ग्राम है। यहाँ मात्र 140-150 घर हैं, आबादी 1400-1500 है । यहाँ जैन, ब्राह्मण, वैष्णव, ठाकुर का एक भी घर नहीं हैं। 3-4 घर यादव एवं गूजरों के हैं शेष अहिरवार, पाल, कुज़्हार, लुहार, बाढ़ई, ढीमर, नापित कुशवाहा आदि के हैं इनका मुज़्य व्यवसाय कृषि एवं ईंटे बनाना हैं।

यहाँ का प्राकृतिक परिवेश पथरीला चट्टानी है, इसमें ग्रेनाइट की लघु पहाड़ियाँ जिन्हें बुन्देली भाषा में टोरिया कहा जाता है। पानी का अभाव होने के कारण ग्रामवासी केवल दो फसल ही प्राप्त कर पाते हैं। जो वर्षा के जल पर आश्रित होती हैं।

अधिकांश घरों में बकरी, गाय एवं भैंस दुधारु पशु पालन किया जाता है, प्राचीनकाल में जंगल में तेंदुआ, सियार, चीता, लोमड़ी, हिरण आदि जानवर पाये जाते थे। वर्तमान में जंगल के अभाव में नीलगाय, लोमड़ी के समूह विशेष रूप से ही दिखाई देते हैं ।

ग्रामीण परिवेश में जीवनोपयोगी साधनों का अभाव एवं दरिद्रता से पीड़ित ग्रामीणजनों की सहायतार्थ तथा सुदूर से आने वाले श्रद्धालुओं के लिये नवागढ़ क्षेत्र समिति ने निज़्न कल्याणकारी योजनाएँ संचालित की है ।

कल्याणकारी योजनाएँ

पूजा एवं विधान हेतु सद्श्रावकों के दैनिक कर्ज़व्य की परिपालना हेतु समस्त सुविधाएँ उपलज़्ध हैं। धार्मिक, इतिहास, पुरातत्त्व संबंधी सभी ग्रन्थों को संगृहीत करके स्वाध्याय एवं शोध कार्य हेतु सभी आधुनिक संसाधनों की सुविधा।

श्रमणों तथा श्रावकों की साधना योग्य आवास, आहार, भोजन की समुचित सुविधा युक्त आवासादि की व्यवस्था।

प्रागैतिहासिक पुरा पाषाण काल से आज तक के सभी प्रकार के साक्ष्यों का व्यवस्थित संग्रहण एवं प्रदर्शन के लिए विशाल हाल में संग्रहालय की व्यवस्था।

श्री नवागढ़ गुरुकुलम् -

प्रतिष्ठा पितामह पं. गुलाबचंद्र जी 'पुष्प' की स्मृति में श्री नवागढ़ गुरुकुलम् ट्रस्ट द्वारा मेधावी, प्रतिभा सज़्पन्न, छात्रों के लिए धार्मिक संस्कार, सांस्कृतिक विरासत, विरासत का संरक्षण एवं कज़्प्यूटर सहित आधुनिक शिक्षा हेतु आयोजित शिविर में चयनित छात्रों को छठवीं कक्षा में प्रवेश दिया जाता है।

अन्नपूर्णा वात्सल्य योजना

नवागढ़ अतिशय क्षेत्र आस्था का मुज़्य केन्द्र है। यहाँ श्रमण सन्तों का अनवरत श्री विहार होने के साथ श्रावकों का आवागमन भी प्रतिदिन होता है। नवागढ़ समिति ने सभी के आहार एवं शुद्ध मर्यादित भोजन की व्यवस्था 17 फरवरी 2009 ई. से क्षेत्रीय समाज के सहयोग से निशुल्क संचालित कर रही है।

विशेषता यह है कि इसमें मन्दिर की राशि या सामग्री का समावेश नहीं करते। यहाँ तक कि कर्मचारियों का वेतन भी मन्दिर फंड से नहीं दिया जाता। इसकी व्यवस्था अलग से की जाती है।

अन्नपूर्णा वात्सल्य योजना के संचालन कर्ता शताधिक संघों एवं सहस्राधिक श्रावकों के आहार दान का सौभाग्य प्राप्त कर चुके हैं।

नि: शुल्क चिकित्सा

नवागढ़ अत्यन्त अभावग्रस्त, पिछड़ा ग्राम है जहाँ जीवनोपयोगी मूलभूत आवश्यकताएँ भी उपलज़्ध नहीं हैं। ऐसी विपरीत परिस्थिति में नवागढ़ क्षेत्र समिति ने ग्रामीण जनों को निःशुल्क चिकित्सा हेतु एम.बी.बी.एस. डॉज़्टर के माध्यम से सुविधा उपलज़्ध कराई है।

क्षेत्र अन्वेषक पं. गुलाब चन्द्र 'पुष्प' की पुण्यतिथि पर पुष्प परिवार द्वारा निःशुल्क चिकित्सा शिविर का आयोजन किया जाता है जिसमें 700-800 रोगियों को औषधि वितरण एवं 40-50 रोगियों के मोतियाबिन्द के ऑपरेशन निःशुल्क कराए जाते हैं।

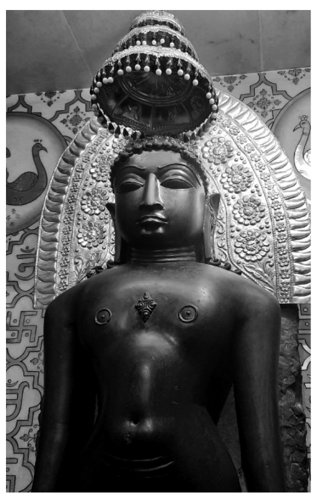

समय-समय पर होने वाले अनुष्ठान में श्रावकों की उपस्थिति ने बड़े भोजनालय तथा संगृहीत पुरासज़्पदा के संरक्षण हेतु संग्रहालय निर्माण पर भी मन्थन हुआ। आचार्य विशुद्ध सागर जी, आचार्य विभवसागर जी, आचार्य वर्धमान सागर जी, मुनिश्री अभयसागर, मुनि श्री सुधासागर जी सभी का आगमन क्षेत्र पर विज़िन्न अवसरों पर हुआ उन

सबका महनीय परामर्श मिला। इंजी. एस.एस. जैन सोनीपत, डॉ. भागचन्द्र 'भागेन्दु' दमोह, डॉ. कस्तूरचन्द्र 'सुमन' श्री महावीर जी, डॉ. ए.पी. गौड झाँसी, के परामर्श से कार्य की विस्तृत रूपरेखा बनाई गयी। तदनुसार समिति की आमसभा में निर्णय लिया गया। गर्भगृह को छेड़े बिना सामने विस्तार किया जाए। कार्य असज़्भव सा था, पर ब्र. निशान्त भैया जी की संकल्पशज़्ति ने वास्तु दोषों का निवारण करते हुए क्षेत्र का संवर्धन इंजी. सुरेन्द्र कुमार जी एवं इंजी. शिखर चन्द्र सिंघई के सहयोग से किया । सागर टीकमगढ़ मार्ग का प्रवेशद्वार, दो शिखरों के निर्माण तथा सुन्दर मनोज्ञ शिल्पकला की उत्कृष्टकृति मानस्तज़्भ का निर्माण कराकर भैयाजी ने सभी को अचज़्भित किया है।

वर्तमान में विशाल अनुष्ठान मंडप, सन्त परीषदी, सहेतुक वाटिका एवं सर्वसुविधा युक्त यात्री निवास का कार्य पूर्णता की ओर है ।

देवाशीष अमृत कूप

नवागढ़ में पठारी क्षेत्र के साथ कई लघु पहाड़ियों की शोभा सुषमा तो है पर पानी कि उपलज़्धता नहीं है। यहाँ की खेती वर्षा जल पर ही आधारित रहती है। ग्रीष्म काल में लगभग सभी कूप जल विहीन हो जाते हैं।

ऐसी विषम परिस्थिति में क्षेत्र पर आयोजित मेला एवं अनुष्ठानों में श्रद्धालुओं की व्यवस्था गहन चिन्ता का कारण बनती है। परन्तु भगवान् अरनाथ स्वामी का ऐसा अतिशय है कि आयोजन के पूर्व रात्रि में ही देवाशीष अमृत कूप में 8 से 10 फुट जल स्वयमेव भर जाता है।

अतिशय के साक्षी ग्रामीण जनों के साथ-साथ आई.ए.एस., आई.आर.एस., आई.एफ.एस. अधिकारी एवं विशिष्ट विद्वान् भी हैं।

वर्ष 2011 एवं वर्ष 2016 के पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव के समय इस अतिशय का जन-जन साक्षी है।

बुन्देलखण्ड एवं नवागढ़ की ऐतिहासिकता

प्रागैतिहासिक काल

भारतीय इतिहास को अध्ययन की सुविधा से मोटे तौर पर तीन ज़ागों में विभज़्त किया गया है—प्रागैतिहासिक युग, आद्य-ऐतिहासिक युग तथा ऐतिहासिक

युग पाषाण कालीन मनुष्य के प्रादुर्भाव से लेकर इतिहास की लिखित सामग्री की प्राप्ति से पूर्व तक का काल प्रागैतिहासिक माना जाता है।

मनुष्य के प्रारज़्भिक काल को पाषाण काल या प्रागैतिहासिक काल की संज्ञा दी गयी है। एक लज़्बे समय तक चलने वाले इस पाषाण युग को कई भागों में बाँटा गया है। इस विभाजन को सामान्यतया तत्कालीन उपकरणों की बनावट, प्रयुज़्त पत्थर तथा विभिन्न प्रकार के जमावों के आधार पर किया गया है। इन्हें प्रारज़्भिक पाषाण काल, मध्य पाषाण काल एवं पुरा पाषाण काल और लघु पाषाण उपकरण काल कहा जाता है।[28]

प्रारज़्भिक पाषाण काल में मानव नदियों के किनारे रहना पसन्द करता था ज़्योंकि उसे वहाँ अपने औजारों को बनाने के लिए पत्थर मिल जाया करते थे। उसने अपनी जीविका और सुरक्षा के लिए इन उपकरणों को बनाया। स्फटिकाश्म के बने इन उपकरणों को हस्तकुठार तथा पेबुल के नाम से जाना जाता है। पुराश्म काल के प्रथम चरण के बने पत्थर के औजार आकार में बड़े एवं गठन में अन्य कालों के औजारों की तुलना में भद्दे होते हैं। भारत के सोहन उद्योग एवं मद्रासीय हस्त परशु की परज़्पराएँ पूर्वी पुराश्म काल की हैं।

मनुष्य ने अपने उपकरणों को वातावरण सज़्बन्धी आवश्यकताओं के कारण सुधारने का यत्न जारी रखा। इनकी चिप्पड़ उतार करके इन्हें बनाया गया है और आकार में पहले की अपेक्षा छोटे हैं। ये उपकरण अगेट, चर्ट, जैस्पर, चाल्सिडनी पत्थर के बने होते थे। मध्य युगीन पाषाण काल को 5000 तथा 20000 ई. पू. के मध्य माना जाता है। उच्च पुरा पाषाण युग ज़्लेड्स तथा उत्कीर्ण से सज़्बन्धित है। इसे 2000 से 10000 ई. पूर्व के मध्य माना जा सकता है।

बुन्देलखंड में यमुना, टोंस, धसान, बेतवा, काली, सिन्ध आदि नदियों के किनारे पाषाणयुगीन संस्कृति के अवशेष मिले हैं। इस क्षेत्र में प्रागैतिहासिक शोध कार्य करने का श्रेय डॉ. एच.डी. संकालिया, प्रो. जी.आर. शर्मा, श्री आर.बी. जोशी, प्रो. के.डी. बाजपेयी, श्री रामेश्वर सिंह, डॉ. पी.सी. पन्त प्रभृति विद्वानों को है।

बेतवा घाटी का श्री रामेश्वर सिंह ने सर्वेक्षण किया है। इसमें सबसे अधिक महज़्वपूर्ण ललितपुर का क्षेत्र है जहाँ अनेक उद्योगशालाएँ खोज निकाली गयीं। ग्रेनाइट पत्थर की चिप्पड़ें निकाल कर उपकरण बनाए गये हैं। यद्यपि इनमें चापर तथा स्क्रैपर ज़ी हैं पर अधिकांश उपकरण हैन्डेज़्स और ज़्लीबर के ही कई प्रकार हैं। ललितपुर रेलवे स्टेशन से दो किलोमीटर दूर से क्षेत्रपाल मन्दिर स्थल पर दूसरे कोटि की उद्योगशाला थी जहाँ पाषाणकालीन मानव ने स्थानीय ग्रेनाइट पत्थर के स्थान पर बलुये पत्थर को प्राथमिकता दी। ये उपकरण अनुमानतः यहाँ से 9 किलोमीटर दूर जीरोन से बाहर निर्यात किये जाते रहे होंगे।[29] शाहजाद नदी तथा बीपा नाला के रेत के जमाव में भी उपकरण पाए गये हैं।[30] डॉ. एच.डी. संकालिया ने ललितपुर के पास एक जुली पुरा-पाषाणकालीन उद्योगशाला खोज निकाली है। वहाँ से उन्होंने उत्खनन द्वारा कुछ उपकरण एकत्र किए जिनमें 65 हैंडेज़्स, 49 ज़्लीवर्स, 43 कोरस, 410 गोल पेबुल्स, 270 नुकीले फ्रैगमेंट्स, 18 वज़्र्ड पेबुल्स और 723 अन्य चिप्पड़ सज़्मिलित हैं।[31]

धसान नदी पर सागर से 25 किलोमीटर दूर सिहौरा से मध्य पाषाणकाल की सज़्पन्न उद्योगशाला खोजी गयी है। श्री रामेश्वर सिंह ने 321 उपकरण यहाँ से खोजे हैं।

खजुराहो के आसपास से भी पाषाणकालीन अवशेष प्राप्त हुए हैं। जिन स्थानों पर यह उपकरण प्राप्त हुए हैं उनमें जटकरा, बेनीगंज, कोर्कस, सकेरा स्थल उल्लेखनीय हैं। यहाँ से मध्य पुराश्म काल का माइक्रोलिथक उद्योगशाला के अवशेष प्राप्त हुए हैं।[32]

प्रागैतिहासिक युगीन मानव ने धीरे-धीरे एक स्थान पर रहकर जीवन-निर्वाह करना सीखा। उसने शैलाश्रयों का निर्माण किया। ये आवासित गुफाएँ देश के अनेक स्थानों में प्राप्त हुई हैं। इनमें से अनेक गुफाएँ चित्रित हैं। इन प्रागैतिहासिक चित्रों का कोई वैज्ञानिक रीति पर आधारित तिथिक्रम निर्धारित नहीं किया जा सका है। परन्तु इनसे तत्कालीन मानव की कलाप्रियता और उसके बुद्धि कौशल का बोध अवश्य होता है। इससे वहाँ के रहने वालों की रुचि तथा उनकी दिनचर्या का ज्ञान भी होता है।

ब्र.जयकुमार निशांत जैन ने नवागढ़ के बीहड़ में भी अनेक शैलाश्रय एवं शैलचित्रों की खोज की है।

इन शैलचित्रों में प्राकृतिक रंग प्रयोग में लाए गये हैं। कुछ गुफाओं में यह रंग अब भी चटकीले हैं और कुछ समय के प्रवाह में मिट गये हैं या धुँधले पड़ गये हैं। कहीं-कहीं लाल या सफेद रंग की पृष्ठभूमि देकर उस पर चित्र बनाए गये हैं। इनमें दैनिक जीवन के विविध-दृश्यों को आलेखित किया गया है।

गुप्तकाल (319 ई.)

नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर कितना प्राचीन अन्वेषण का विषय है। यहाँ के पुरातात्विक साक्ष्य इसे लाखों वर्ष में अनवरत परिवर्तन करते हुए हजारों वर्ष प्राचीन सिद्ध करते हैं। अभिलेखीय प्रमाण इसकी सतत समृद्धि एवं वैभवशाली नगर की ओर संकेत करते हैं। तदनुसार नवागढ की स्थापना सन् 320ई. गुप्तकालीन शासन चन्द्रगुप्त के शासन काल से पहले की गयी होगी।

उस काल में शिल्प कला अत्यन्त विकसित हो चुकी थी। इसीलिए उन्नत शिल्पयुज्त अनेक मन्दिरों और सैंकड़ों मूर्तियों के निर्माण के साक्ष्य जगह-जगह प्राप्त हो रहे हैं।

चन्द्रगुप्त के शिलालेख भिलसा के निकट उदयगिरि में मिले हैं। सांची में भी इस राजा के लेख मिले हैं। जब समुद्रगुप्त दिग्विजय को निकला तो सागर होता हुआ, दक्षिण को गया था। हटा (दमोह) तहसील के सकौर ग्राम में सोने के 24 सिज्के मिले हैं, इन पर गुप्तवंशीय राजाओं के नाम अंकित हैं। 8 पर महाराजा समुद्रगुप्त, 15 पर चन्द्रगुप्त तथा एक पर स्कन्धगुप्त का नाम खुदा है।

स्कन्धगुप्त का राज्य भी उतना ही विस्तीर्ण था जितना समुद्रगुप्त का था। बुन्देलखंड अवश्य ही उसके राज्य के अन्तर्गत था।[37]

गुप्तवंश का अगला शासक चन्द्रगुप्त द्वितीय (375 ई.) था, जो समुद्रगुप्त का पुत्र था जिसे विक्रमादित्य और देवगुप्त के नाम से जाना जाता था । उसे शक विजेता के नाम से भी पुकारा जाता था । उन्होंने 40 वर्ष राज्य किया, जिसे भारतीय कला व साहित्य का स्वर्णिम युग कहा जाता है, साथ ही यह भारत के इतिहास का भी स्वर्णिम युग था ।

चन्द्रगुप्त द्वितीय का विशाल साम्राज्य उज़र में हिमालय के तलहटी इलाकों से दक्षिण में नर्मदा नदी के तटों तक तथा पूर्व में बंगाल से लेकर पश्चिम में गुजरात तक फैला हुआ था । आपकी प्रथम राजधानी पाटिलपुत्र और द्वितीय राजधानी उज्जयिनी (उज्जैन) थी ।

चानी यात्री फाहियान चन्द्रगुप्त द्वितीय के शासनकाल में ही भारत आया था । रजत के सिक्के शुरू करने वाला प्रथम शासक था, सिक्कों के रूपक या रप्यक कहा जाता था ।

गुर्जर प्रतिहार काल (725 ई.) प्रतिहार साम्राज्य पश्चिम में सतलुज नदी से उज़र हिमालय की तराई और पूर्व में बंगाल असम से दक्षिण में सौरष्ट्र और नर्मदा नदी तक फैला हुआ था। सम्राट मिहिरसेन सबसे प्रतापी एवं महान् राजा था। इतिहासकारों का मानना है कि प्रतिहार राजवंश ने भारत को अरब हमलों से लगभग 300 वर्षों तक बचाए रखा था। इसलिए प्रतिहार (रक्षक) नाम पड़ा ।

प्रतिहारों ने देश का राजनैतिक एकीकरण करके शांति, समृद्धि, संस्कृति, साहित्य और कला को बढ़ाया था । प्रतिहारकालीन मंदिरों की विशेषता और मूर्तियों की कारीगरी से उस समय की प्रतिहार शैली सज़्पन्नता का बोध होता है ।

प्रतीहारकालीन काल

ह्वेनसांग के भारत-भ्रमण के समय उसके अनुसार पूर्वी मालवा, ग्वालियर तथा बुन्देलखंड (चि-चि-टो) में ब्राह्मण राजा राज्य करते थे।[33] हर्ष जो हिन्दू राजाओं में अन्तिम महान् सम्राट माना जाता है, का उज़र भारत के विस्तृत क्षेत्र में राज्य फैला था। पर सज़्भवतः इस भाग में उसका सीधा शासन स्थापित न था।

इन ब्राह्मण राजाओं को हराकर इस भूभाग में गुर्जर-प्रतीहारों ने अपना साम्राज्य स्थापित किया। प्रतीहारकालीन मन्दिर, मूर्तियाँ, अभिलेख तथा सिज़्के इस क्षेत्र में प्राप्त हुए हैं जिनसे यहाँ उनके शासन होने की बात भलीभाँति सिद्ध हो जाती है। देवगढ़ अभिलेख[34] में वर्णित भोज कन्नौज का गुर्जर-प्रतिहार राजा मिहिर भोज (ल. 836-885 ई.) ही है। इसकी तिथि देवगढ़ अभिलेख[35] में विक्रम सं. 919 तथा शक सं. 784 दी गयी है जो ई. सन् 862 के समय में पड़ती है। यह भोज की पहली ज्ञात तिथि है। भोज के 'आदि बराह' प्रकार के

सिज़्के इस क्षेत्र में बहुतायत संज़्या में मिले हैं। इस प्रकार यह निर्विवाद है कि 9वीं शती ई. में भोज का साम्राज्य पूरे बुन्देलखंड में फैला था। इसके पश्चात् उसका पुत्र महेन्द्रपाल (ल. 885-910 ई.) उज़राधिकारी बना। सीयडोणि अभिलेख में प्रतीहार राजाओं में भोज, महेन्द्रपाल, क्षितिपाल तथा देवपाल के नाम आए हैं।[36] इसमें उल्लिखित अन्तिम तिथि विक्रम सं. 1016 (959-60 ई.) हैं।

बुन्देलखंड में चन्देलों ने लगभग तीन सौ वर्षों तक अपनी प्रभुता स्थापित रखी। प्रारज़्भ में चन्देल प्रतीहारों के सामन्त थे। राष्ट्रकूटों ने प्रतीहारों के राज्य पर आक्रमण कर दिया। प्रतीहारों को शज़्ति का ह्रास देखते ही चन्देल स्वतन्त्र हो गये।

चन्देल शासनकाल (830 ई.)

नवागढ़ में सर्वाधिक विकास का श्रेय तो चन्देलों को जाता है। यही कारण है कि बुन्देलखण्ड में प्राचीनतम जैनतीर्थ सोनागिर, द्रोणगिरि, पावागिरि, देवगढ़, बजरंगगढ़, कुण्डलपुर, थूबोन, अहार, पपौरा, बानपुर, रोनाखुर्द, बड़ागाँव, धसान आदि किसी न किसी रूप में विद्यमान हैं । प्राचीनकाल से वर्तमान काल तक निर्मित जिनालयों की तो एक लज़्बी श्रृंखला है । बुन्देलखण्ड का शायद ही ऐसा कोई गाँव होगा जहाँ जैन धर्मावलज़्बी न रहते हों और उनके द्वारा बनाए जैन मन्दिर न हों ।[37]

चन्देलवंश के आदिपुरुष चन्द्रप्रभ भगवान का इतना भक्त था कि वह उनके नाम से प्रसिद्ध हुआ और उनकी सन्तान चंदेल वंशी कहलाई इस वंश का प्रथम राजा नन्नुक 831 ई. जैनधर्मी था ।[38]

महोबा उसकी राजधानी थी। अनुश्रुतियों के अनुसार चंदेल वंश के संस्थापक चन्द्रवर्मा ने 16 वर्ष की आयु में महोत्सव नगर की स्थापना करने महोत्सव मनाया था। महोत्सवनगर का परिवर्तन रूप ही आज का महोबा है। महोबा सदियों तक चन्देलों की राजधानी रहा। वहाँ की खुदाई में मिली प्रतिमाओं से उन शासकों की जैनधर्म के प्रति श्रद्धा का संकेत मिलता है। महोबा पर हुए विनाशकारी आक्रमणों से यहाँ के महज़्वपूर्ण भवन, मन्दिर महल आदि ध्वस्त हो गये ।[39]

इसके बाद वाक्पति राजा हुआ, इसके दो पुत्र जैजा एवं वेजा थे, जिन्होंने क्रमशः

राज्य किया। उसके बाद राहिल और हर्ष 925 ई. में राजा हुए। इनके पुत्र यशोवर्मन 925 से 954 ई. और आपके पुत्र धंग 954 से 1002 ई. में राजा हुए । जिसके प्रथम वर्ष 954 ई. में खजुराहो का प्रसिद्ध पार्श्वनाथ मन्दिर निर्मित हुआ था। राजा धंग जैन मुनि वासव चन्द्र का बड़ा भक्त था।

चन्देलों की धार्मिक सहिष्णुता उनको समदर्शिता तथा प्रजा वत्सलता के कारण ही उनके राज्य में विभिन्न स्थानों में विशेषतः खजुराहो एवं देवगढ़ में अन्य धर्मों के सुविशाल और भव्य मन्दिरों की भाँति जैनों के भी अति भव्य एवं कला की दृष्टि से अत्यन्त उत्कृष्ट मन्दिरों का निर्माण कराया जा सका। विजयपाल के यशस्वी पुत्र कीर्तिवर्मन के राज्यकाल के शान्तिनाथ की मूर्ति उनके कलामात्यवृन्द पाहिल तथा जीजू जो जैनाचार्य वासवेन्दु या मुनि वासवचन्द शिष्य थे, उनके द्वारा स्थापित कराई गयी थी। पार्श्वनाथ मन्दिर के शिलालेख में यद्यपि पाहिल को कुल अमात्य के रूप में उल्लिखित नहीं किया गया, तथापि उसे 'धंग राजेन मान्यः' कहा गया है।

धंग नरेश द्वारा समादृत बतलाकर राज्य उसकी प्रतिष्ठा की ओर महज़्वपूर्ण संकेत किया गया है एवं वासवचन्द्र को महाराज गुरु निरूपित किया गया है।[40] धंगदेव से पाहिल को अपूर्व सज़्मान प्राप्त था।[41] नवागढ़ में प्राप्त पाहल की मूर्ति एवं पाषाण अभिलेख आपके द्वारा नवागढ़ में भी मुनि वासवचन्द्र के आशीर्वाद से मन्दिर बनाने का साक्ष्य है। नवागढ़ में प्राप्त आदिनाथ की पद्मासन खंडित मूर्ति के पादपीठ में सवंत 1123 (सन् 1066 ई.) का अज़िलेख चन्देल शासक कीर्तिवर्मन के काल में मन्दिर बनाने का साक्ष्य है।

चन्देल नरेशों की परज़्परा में पृथ्वी वर्मा (सन् 1120 से 1128 ई.) तथा मदनवर्मा का राज्यकाल (पूर्व सन् 1128 से 1164 ई)को चन्देल राज्य का स्वर्णकाल कहा जाता है। ग्यारहवीं शताज़्दी का अन्तिम भाग और बारहवीं शताज़्दी का पूर्वार्द्ध मदनवर्मा का शासनकाल चन्देल राज्य का परम उत्कर्ष एवं वैभव का काल माना जाता है।

आपके जैन धर्मावलज़्बी होने एवं जैन साधुओं से प्रभावित होने के अनेक साक्ष्य मिलते हैं। आपको मदन ब्रह्म के नाम से भी उल्लेखित किया गया है। यह

उल्लेखनीय तथ्य है कि चन्देल राजाओं में यशोवर्मन वैष्णव, धंग शैव और मदनवर्मन जैन थे। आपके जैन धर्मावलम्बी होने पर भी अन्य धर्मों से वैमनस्य नहीं था। वे कालिंजराधिपति थे किन्तु उनकी राजधानी महोबा थी। मदनवर्मा से शासन के अन्तिम काल सम्भवतः 1150 में महोबा पर गुजरात के सिद्धराज जयसिंह ने आक्रमण किया। परन्तु सिद्धराज ने उसके राज्य पर अधिकार नहीं किया, केवल सोने की 96 करोड़ मुद्राएँ मन्त्रियों से माँगी और उन्हीं से सन्तुष्ट हो गया। फिर जब वह मदनवर्मा से मिलने गया तब साक्षात् कामदेव के समान सुन्दर मदनवर्मा और उसका अतुल्य वैभव देखकर दंग रह गया। स्वर्ग के इन्द्र के समान उसका वैभव था। सिद्धराज ने कहा–आपके दर्शन कर एवं वैभव देखकर आज मैं धन्य हो गया।

चन्देल शासनकाल में सिंचाई के साधन

चन्देल शासनकाल में कूप, बावड़ी, जलाशयों एवं मन्दिरों का निर्माण तथा इनका जीर्णोद्धार कराना धार्मिक कृत्य समझा जाता था जिससे लोक कल्याण हो सके। चन्देल अभिलेख इसका साक्षात् प्रमाण हैं। चन्देल शासकों ने सरोवर झील बावड़ी एवं कुओं के महत्त्व को समझा। यहाँ के शासकों ने अगणित संख्या में आश्चर्यजनक आकार-प्रकार की झीलें और सरोवर बड़ी निष्ठा और लाखों रुपये व्यय करके बनवाए। गहरवारों और बुन्देलों ने भी इसका अनुशरण किया, किन्तु चन्देलों ने इतनी अधिक संख्या में झीलें बनवाईं कि उनकी अमिट छाप आज भी प्रत्येक विन्ध्यवासी पर अंकित है। चन्देलों के सरोवर अपेक्षाकृत अधिक टिकाऊ और वैज्ञानिक हैं।

चन्देलों की सुदृढ़ अर्थव्यवस्था उनकी समृद्धि का प्रमुख कारण थी जिसके जीते जागते नमूने बुन्देलखंड के गाँव-गाँव में बनवाए चन्देली तालाब हैं। जिनसे बुन्देलखंड की उबड़-खाबड़ धरती शताब्दियों से शष्य श्यामला है जिनसे आज भी हजारों हेक्टेयर भूमि की सिंचाई होती है। सिन्धु समान विशाल सरोवरों का निर्माण कराकर उन्होंने इस भू-भाग के विकास का मार्ग प्रशस्त किया। चन्देल शासकों द्वारा बनवाए गये ये तालाब दो प्रकार के होते हैं। एक तो घाट बद्ध हैं जो स्नान करने एवं जल पीने के काम आते थे। दूसरे पशुओं के उपयोग हेतु बनाए जाते थे। कुछ तालाबों का निर्माण स्वतन्त्र रूप से किया जाता था। तो कहीं-कहीं

दूसरे तालाबों की सांकल बनाई जाती थी। एक तालाब का अतिरिक्त पानी दूसरे में और दूसरे का तीसरे में। ग्राम पठा (टीकमगढ़) के तालाब का अतिरिक्त पानी सुनार वाली बंधिया से महेन्द्र सागर टीकमगढ़ में और महेन्द्र सागर का अतिरिक्त पानी विन्द्रावन सागर ताल में आता है। वर्तमान में टीकमगढ़ जिले में चंदेलों द्वारा बनवाये गये सरोवरों की संख्या 962 है।[42]

बुन्देलखंड नामक भू-भाग पर चन्देल शासकों का सन् 740 ई. से सन् 13वीं शताब्दी के बाद तक अधिकार रहा है। चन्देल शासकों द्वारा जल संरचनाओं का सर्वाधिक निर्माण कराया गया था। चन्देल राजाओं ने सर्वप्रथम दक्षिणी बुन्देलखंड में बेतवा से केन नदियों के मध्य के शुष्क अविकसित क्षेत्र को बरसाती सतही जल संग्रहण योजना (वर्षा का पानी रोकने की नीति) के द्वारा कृषि कर्म लायक बनाने और कृषि के साथ-साथ पशुपालन व्यवस्था में वृद्धि के प्रयास किए थे।[43]

राहिल ने अजयगढ़ में तालाब और मन्दिर बनवाए। बुन्देलखंड में चन्देली तालाबों के निर्माताओं में राहिल प्रमुख था।[44]

चन्देल शासक धंग के संवत् 1059 विक्रमी के शिलालेख में यशोवर्मन द्वारा सरोवर निर्माण का उल्लेख है।[45]

विजयवर्मन (1040-50) ने महोबा एवं सैंतपुर में विजयसागर नामक तालाब का निर्माण कराया।[46]

कीर्तिवर्मा (1053-1100) ने भी महोबा में कीर्ति सागर का निर्माण कराया था।[47]

मदनवर्मा (1130-1165) ने मदनेशपुर (अहार) गाँव बसाया। अहार में मदनसागर तालाब बनवाकर उस पर मदनेश्वर में विशाल शिवमठ निर्मित कराकर उसका मदनेश्वरी नाम रखा था। इसके नाम पर मदन बावड़ियाँ यत्र-तत्र प्राप्त हैं। यथा–बल्देवगढ़, अहार, पपावनी, झिनगुवाँ, जिनागढ़ (जिला-टीकमगढ़) आदि। दो पहाड़ों के मध्य बाँध बनाकर ग्वालसागर तालाब ग्वालों के सहयोग से बनवा कर बाँध से बस्ती आबाद की थी जो कालान्तर में बल्देवगढ़ के नाम से प्रसिद्ध हुई।[48]

परमर्द्धि देव (परमाल देव सन् 1165-1202 ई.) ने अजयगढ़ में तालाब और मन्दिर बनाए थे।[49]

ऊमरी जो सूर्यमन्दिर के लिए प्रसिद्ध है कहावत है **''नौ सौ कुआँ नवासी बेर, ऊमरगढ़ के गेरऊ फेर''**, इसी के पास स्थित नावई ग्राम नन्दपुर, वर्तमान में नवागढ़ अतिशय क्षेत्र में आज भी कई विशाल चन्देल बावड़ी एवं मन्दिरों के भग्नावेश उपलब्ध हैं, जिनमें पुरातत्त्व की विशेष पुरा सम्पदा पृथ्वी के गर्भ में छिपी है। आवश्यकता है सम्यक् पुरुषार्थ द्वारा उनके रहस्य उद्घाटित करने की।

साहित्यिक अवदान

शुद्ध साहित्यिक विषय में रचे हुए ग्रन्थों की यदि खोज की जाए तो पता चलता है कि इस युग में ऐसे ग्रन्थों का निर्माण अत्यन्त कम हुआ। केवल साहित्य विषय से सम्बन्ध रखने वाले काव्यग्रन्थों का तो और भी अभाव है। इस तृष्णा-की तृप्ति हमें आख्यायिका, नाटक और चम्पू काव्यों से करनी पड़ती है। पंचतन्त्र और आख्यिकाओं की रचना सन् 1100 ई. और सन् 1199 ई. के बीच पश्चिमी भारत में जैन कवियों ने की। मध्यभारत के प्रसिद्ध लेखक सोमदेव ने अपना कथा-सरित्सागर ग्रन्थ सन् 1603 ई. और सन् 1081 ई. के बीच लिखा। इस युग में प्रणय-लीला-सम्बन्धी आख्यानकों की रचना भी हुई। चम्पू तो इस युग की ही देन है। प्राचीनतम चम्पू काव्य दमयन्ती कथा अथवा नल-चम्पू है। इसका रचयिता त्रिविक्रम भट्ट था, जो महाराज धंगदेव का समकालीन था। किन्तु साहित्य की जिस विभूति ने इस युग के प्रतिनिधि के रूप में हम सबको प्रभावित किया और जिसका समस्त श्रेय चन्देल शासकों को दिया जाना चाहिए वह कृष्णमिश्र–विरचित प्रबोधचन्द्रोदय नाटक है। यह नाटक कीर्तिवर्मन के ब्राह्मण सेनानी गोपाल के निर्देश पर राजसभा में अभिनीत होने वाला यह नाटक प्रत्यक्षतः उस रस का नहीं दीखता, जिसे अवसर-अनुकूल कहा जा सके। परन्तु इसमें आध्यात्मिक बवंडर के बीच बलिष्ट दार्शनिक मत की प्रतिष्ठा की गयी है। इसकी रचना अदितिनन्दन विष्णु और वेदान्त दर्शन की उपासना में हुई। इस व्यापक कथानक के सभी पात्र रूपक में रक्खे गये हैं। जिससे इसका प्रयोग लाक्षणिक बन गया है। नाटक गम्भीर विजयोल्लास के साथ समाप्त होता है,

जिससे सम्राट 'विवेक' और सम्राज्ञी 'धर्म' जो चिरकाल तक विरोध में रहे हैं, परस्पर पुनः मिलते हैं। इन दोनों का सम्मिलन विष्णु भक्ति से संयुक्त हो जाता है। एम. सिल्वन लेवी के अनुसार इस पूरे संस्कृत साहित्य के गगन-मंडल में यह नाटक अपनी विलक्षण आभा के साथ ज्योतिर्मान है और चन्देलों के युग और शासन की साहित्यिक विभुता को अमरत्व प्रदान करने में अकेला पर्याप्त है।

इस युग के कुछ काव्य-ग्रन्थ ऐसे मिले हैं, जिनमें अप्रधान रूप से ऐतिहासिक कथानक भरे हैं। नीतिमान जैन साधु हेमचन्द्र ने सन् 1088 ई. से सन् 1172 ई. के बीच कुमारपालचरित लिखा। इसका दूसरा भाग आठ अंकों का प्राकृत में लिखा गया है। ऐतिहासिक महत्त्व के साथ-साथ इसका निश्चित लक्ष्य व्याकरण ही है। दिल्ली के चौहान सम्राट पृथ्वीराज की विजयों का वर्णन पृथ्वीराज-विजय में है। यह ग्रन्थ उसके जीवनकाल में ही लिखा गया। खेद है कि इसके रचयिता का नाम ज्ञात नहीं है। कीर्तिकौमुदी और सुरसोत्सव नामक अर्ध ऐतिहासिक काव्य लवण नामक राजा के मन्त्री द्वारा लिखे गये हैं। रामपालचरित भी इस युग की एक उत्तम कृति है।

बंगाल के लक्ष्मनसेन (सन् 1175 ई.–सन् 1200 ई.) की राजसभा को अलंकृत करने वाले महाकवि जयदेव संस्कृत के महान् पंचरत्नों में से एक है। संस्कृत की काव्य परम्परा में इन्हें अन्तिम महाकवि कहा जा सकता है। गीत-गोविन्द में इन्होंने मौलिक काव्यकला को पूर्णता की उस सिद्धि तक पहुँचाया, जहाँ से युग और युगेतर साहित्य भी प्रभावित हुआ।

चन्देलों के दान-पात्रों और अभिलेखों में जो पंक्तियाँ वर्तमान में है वे सभी रमणीय काव्य हैं। उनमें से कुछ तो अत्यन्त ही मनोहर साहित्य के उदाहरण हैं। यदि भाषा के प्रवाह शैली की रोचकता और अभिव्यंजना के वैचित्र्य की दृष्टि से मूल्यांकन किया जाए तो खजुराहो के लक्ष्मण जी के मन्दिर से प्राप्त होने वाले सन् 1011 ई. के यशोवर्मन के पत्थर अभिलेख की पंक्तियाँ चन्देल अभिलेखों में सुन्दरतम कविता के नमूने के रूप में प्राप्त होती है। इन अभिलेखों की रचना राजसभा के सर्वश्रेष्ठ कवियों द्वारा हुई। उक्त लेख की रचना तो माधव कवि-द्वारा हुई धंगदेव के राजकवि राम ने धंग-पत्थर-अभिलेख की रचना की। इन उदाहरणों से ज्ञात होता है कि संस्कृत के कुशल कवि प्रायः प्रत्येक चन्देल शासक की राजसभा में विद्यमान थे।

प्रारज़्भ से ही जैन मत स्वतन्त्र दर्शन के रूप में चला और इसमें सभी आवश्यक शास्त्रों की विशेषतया तर्क शास्त्र और व्याकरण की रचना हुई। ज्योतिष तथा औषधिशास्त्र में जैनियों की कुशलता ने बराबर लोकप्रियता प्राप्त की। जैनियों की विधा सज़्बन्धी गरिमा और ज़्याति से प्रभावित होकर कितने ही प्रतिभाशाली ब्राह्मणों ने जैनमत ग्रहण कर लिया था। जैनमत को जो उर्वर क्षेत्र तथा शासकीय आश्रय दक्षिण भारत में प्राप्त हुआ, वह उस हद तक उज़री भारत में नहीं प्राप्त हो सका। फिर भी जैन पंडितों ने उज़री भारत के राजपूत राजाओं के यहाँ भी प्रभाव प्रतिष्ठित करने का अधिकाधिक प्रयत्न किया।

डॉ. के.पी. त्रिपाठी 'बुन्देलखंड के बृहद इतिहास' में लिखते हैं, मदनवर्मा के शासनकाल में शैवमत के साथ-साथ जैनमत को भी खूब संरक्षण मिला। इसी कारण बानपुर, खजुराहो, अहार, दुदाही (दुधही), मदनपुर, महोबा, चन्देरी, नवागढ़ (नावई) कुंडलपुर और सौरों जैन तीर्थ बन गये। अहार में मदनेसर शिवगढ़ मदनसागर के बाँध पर था। (पृ. 19)

डॉ. हरिओम तत्सत् ब्रह्मशुज़्ल 'कालंजर प्रबोध' कृति में लिखते हैं चन्देल शासक मदनवर्मन के शासनकाल में महोबा, मदनपुर, देवगढ़ नवागढ़, सेरौन, मदनेश्वर (अहार जी) का विशेष विकास हुआ है।

नवागढ़ में मन्दिर निर्माता श्रेष्ठी

खजुराहो में सज़्भवनाथ तीर्थंकर के शिलालेख संवत् 1215 ई. में चन्देल शासक धंगदेव द्वारा राज्यमान श्रेष्ठी पाहल के परिवार का नामोल्लेख इस प्रकार है।[50]

देदू के पुत्र पाहिल (पाहल), पाहिल के पुत्र साल्हे और साल्हे के पाँच पुत्र महागण, महिचन्द, सिरीचन्द, जिनचन्द एवं उदयचन्द थे। जिनने कई मन्दिरों का निर्माण कराया।[51]

पाहल ने खजुराहो में मन्दिर बनाकर मन्दिर के संरक्षण हेतु वाटिकाओं का दान दिया। उदयचन्द्र ने संवत्

1203 में धुवेला में मन्दिर बनवाया तथा शान्तिनाथ भगवान् की स्थापना कराई तथा संवत् 1215 में खजुराहो में प्रतिष्ठा कराई।

जिनचन्द ने संवत् 1209 में धुबेला में शान्तिनाथ तथा संवत् 1215 में खजुराहो में मूर्ति स्थापना कराई।

सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं पुरातात्ज़्विक नगर नवागढ़ में चन्देल शासन में जिनालय निर्माण लगातार हुआ है। धंग देव के शासनकाल में मुनि श्रीवासवचन्द्र के मंगल आशीर्वाद एवं निर्देशन में खजुराहो के साथ नवागढ़ में भी राजसज़्मान प्राप्त श्रेष्ठी पाहल ने जिनालय बनवाए जिनका साक्ष्य उनकी प्रशस्ति (अभिलेख) एवं उनकी मूर्ति है।

नवागढ़ में पाहल के पौत्र महिचन्द्र की प्रशस्ति स्तज़्भ एवं भगवान महावीर प्रतिमा पर अंकित है जिससे सिद्ध होता है आपने संवत् 1195 (1138 ई.) में नवागढ़ में एवं संवत् 1215 (1158 ई.) में खजुराहो में जिनालय बनवाए।

बगाज टोरिया पर स्थित चंदेल शासक मदनवर्मन की अत्यन्त मनोहारी नख-शिख अलंकृत मूर्ति जिसमें केश अलंकरण, कर्णकुंडल, कंठाहार, मेखला, कटि, करधनी से सुसज्जित मूर्ति का सौन्दर्य विलक्षण है। मूर्ति के दाहिने हाथ के ऊपर प्रतीकात्मक पद्मासन जिनबिज़्ब इनके जैनत्व का साक्षी है।

श्रेष्ठी रासल की संवत् 1203 (1145 ई.) की दो प्रशस्तियाँ एवं खंडित मूर्ति नवागढ़ के धार्मिक समुन्नति का साक्ष्य है।

श्रेष्ठी महिचंद की खंडित प्रतिमा भी प्राप्त हुई है आपने दो प्रतिमा प्रतिष्ठित कराई ।

ज्ञातव्य है जब पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य ने अपने साथियों के साथ खनन कार्य किया तो यहाँ 4-5 विशाल जिनालयों के अवशेष प्राप्त हुए थे जिनसे सिद्ध

होता है यहाँ जिनालयों का समूह रहा होगा जो प्राकृतिक प्रकोप एवं राजसत्ता की लोलुपता का शिकार होकर ध्वस्त हो गये थे।

प्राचीन काल के अभिलेखों में स्थापितकर्ता का नाम एवं नगर का उल्लेख कम मिलता है। यहाँ उपलब्ध पुरापरम्परा में श्रेष्ठी पाहल, महिचन्द्र ने कलाक्षेत्र खजुराहो, धुबेला में मन्दिर बनवाने के साथ नवागढ़ में भी मन्दिर बनवाए हैं।

इसके अतिरिक्त श्रेष्ठी वल्हण, देल्हण, रामचन्द्र, सांति, देवपाल, दिक्कपाल, तथा महिलाओं में वील्हा द्वारा भी यहाँ स्थापित कराए गये हैं। इससे सिद्ध होता है उस काल में श्रेष्ठियों की समृद्धता तथा धर्म के प्रति समर्पण विशेष था।

मैंने नवागढ़ क्षेत्र में संगृहीत अभिलेखों का अध्ययन करने पर पाया कि यहाँ चन्देल शासन काल की अधिकांश मूर्तियाँ हैं, जो जैन सम्प्रदाय की गोलापूर्व अन्वय के श्रेष्ठियों द्वारा स्थापित हैं। जिससे सिद्ध होता है चन्देल शासकों के श्रेष्ठियों में सर्वधर्म सद्भाव के साथ गोलापूर्व जैनों का विशेष प्रभाव था जिसके फलस्वरूप यहाँ विशाल जिनालयों का निर्माण हुआ था। वर्तमान में नवागढ़ के आसपास के नगरों में अधिकांशतः गोलापूर्व अन्वय के श्रावक ही हैं जो यहाँ के साक्ष्यानुसार गुप्तकाल के पहले से ही सतत जैन मंदिरों का निर्माण करते रहे हैं। गोलापूर्व अन्वय के अतिरिक्त अग्रवाल अन्वय, परिवार अन्वय, सहेलवाल अन्वय, जेसवाल अन्वय द्वारा स्थापित प्रतिमाएँ उपलब्ध हैं।

श्रेष्ठी महिचन्द एवं पुत्र देल्हण की प्रशस्ति में उनके गोलापूर्व होने का संकेत संवत् 1195 की भगवान् महावीर के पादपीठ पर अंकित अभिलेखों से मिलता है जो अन्वेषण का विषय है।

विश्व का एकमात्र क्षेत्र

जैन तीर्थंकरों के मूलनायक रूप में विभिन्न नगरों एवं तीर्थक्षेत्रों में कई जिनालय स्थापित हैं, परन्तु अरनाथ तीर्थंकर का मूलनायक रूप में यह विश्व का

एकमात्र अतिशय क्षेत्र है। जहाँ मूर्तियों के साथ कई पुरातात्त्विक साक्ष्य उपलब्ध हैं।

नवागढ़ की विलक्षणता के अन्य और भी कारण हैं जिनसे इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है।

संग्रहालय में संगृहीत मूर्तिशिल्प इसे प्रतिहार काल (7 वीं सदी) का क्षेत्र घोषित करते हैं, जबकि प्रतिमा के पाद पीठ पर अंकित अभिलेख इसे संवत् 1123 (सन् 1066 ई.) का सिद्ध करते हैं।

क्षेत्र निर्देशक ब्रह्मचारी जयकुमार जैन निशान्त जो क्षेत्र अन्वेषक पुष्प जी के चतुर्थ पुत्र हैं, आपने मध्यप्रदेश विद्युत मंडल की शासकीय सेवा से स्वेच्छा निवृति लेकर नवागढ़ के लिए जीवन समर्पित किया है, ने बताया कि नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर के अन्वेषण का क्रम वर्ष 2014 से आरम्भ हुआ था जो आज तक अनवरत चल रहा है।

अन्वेषण के प्रेरणा स्रोत क्षुल्लक चिदानन्द वर्णी हैं, जिन्होंने स्वप्रेरणा से इस बीहड़ क्षेत्र में वर्ष 1965 एवं 1966 में लगातार दो चतुर्मास करके यहाँ की पहाड़ियों में स्थित शैलाश्रयों में आत्मसाधना की। आपने सभी ग्रामीणजनों को व्यसनमुक्त जीवन के सूत्र में बताकर उनके जीवन की दिशा को बदला। आज भी उनके द्वारा दिए गये संस्कार ग्रामीणजनों में दिखाई देते हैं।

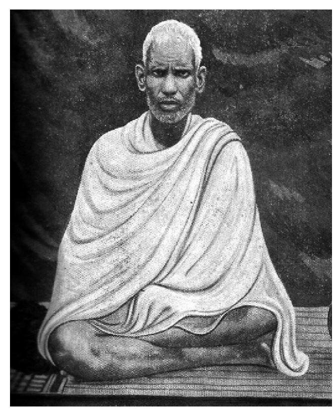

क्षुल्लक जी आहार (भोजन) के पश्चात् ध्यान करने पहाड़ियों में जाते थे तथा दो-दो, तीन-तीन दिन तक नहीं आते थे। ग्रामीण जनों एवं समाज के लोगों ने उनको ढूँढ़ने का कई बार प्रयास किया पर सफलता नहीं मिली।

इस तथ्य की प्रेरणा से निशान्त भैया जी ने अन्वेषण कार्य आरम्भ किया। उन्होंने ग्राम सरपंच रामनारायण यादव एवं मुखिया रामनाथ गूजर से कहा जंगल में अवश्य ऐसे स्थान होने चाहिए जहाँ क्षुल्लक महाराज जी साधना करते होंगे।

नवागढ़ का पराभव

जैनधर्म अनादिनिधन है जिन शासन की प्रभावना सज़्पूर्ण विश्व में तीर्थंकर एवं चक्रवर्तियों के माध्यम से की गयी है। इसलिए विश्व के कोने-कोने में इसके प्रमाण प्राप्त हो रहे हैं। भरत चक्रवर्ती के काल से जिनालयों का क्रम निर्वाध रूपेण आज तक चला आ रहा है।

कालचक्र के क्रूर परिणमन का प्रभाव जिन शासन पर भी पड़ा। जगह-जगह इसके साहित्य की होली जलाई गयी। जिनालयों एवं जिनबिज़्बों का निर्मम संहार किया गया। ऐसी विपरीत परिस्थिति में जिन भज़्तों द्वारा जिनबिज़्बों का संरक्षण यथाशज़्ति किया गया। जो आज हमारी पुराताज़्विक धरोहर है।

ऐसी ही है उज़र प्रदेश के ललितपुर जिले में स्थित प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़, जो महरौनी से 24 किमी. टीकमगढ़ से 30 किमी. की दूरी पर स्थित है। जिसका विध्वंस संवत् 1239 में दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान द्वारा परमर्द्धिदेव से युद्ध के समय किया था।

चंदेलों के शासनकाल में बुन्देलखण्ड के विकास का उल्लेख सभी इतिहासकारों ने किया है। विशाल सरोवरों, कूपों एवं बावड़ियों से कृषि, विभिन्न किलों एवं गढ़ों से सांस्कृतिक स्थापत्य, सभी धर्मों के मंदिर निर्माण से धार्मिक सद्भाव एवं मूर्तिकला, प्रजापालन के लिए समायोजित व्यवस्थाएँ, मंदिरों, सैनिकों एवं साधुओं को ग्रामदान, सहस्रों स्वर्ण मुद्राओं का दान सहज रूप में दिया जाता था। विभिन्न अवसरों पर महारानियों, राजकुमारियों के साथ नगर की महिलाओं एवं बाँदियों द्वारा भी विशेष वज़्भूषण अलंकरण का वर्णन रोमांचित करता है।

यही नहीं विशेष हाथियों, घोड़ों की सज्जा के विशेष उल्लेख हैं। सैनिकों को भी सज़्मान करते समय विशेष स्वर्णाभूषण प्रदान कर उनका उत्साह वर्धन किया जाता था।

इस प्रकार चंदेलशासन काल में बुन्देलखण्ड का गौरव समृद्धि, व्यवसाय, सज़्पन्नता ने अन्य राजाओं को आकर्षित ही नहीं किया, इस वैभव के प्राप्त करने की जिजीविषा भी जाग्रत की। यही कारण है जो समय-समय पर अन्य शासकों ने चंदेल शासकों से युद्ध करके उनकी सज़्पज़ि, स्वर्णमुद्राएँ, पारसमणि, विशेष हिरनागर अश्व छीनने का प्रयास किया।

शासक परमर्द्धिदेव (परमाल) राजकुमारी मल्हना के सौन्दर्य से इस प्रकार आशक्त हुए की उनके पिता मालवंत को परास्त करके उनसे पाणिग्रहण किया तथा उनके भाई माहिल को अपने मंत्रीमंडल में शामिल किया। माहिल के मन में तभी से प्रतिशोध की ज्वाला धधकती रही वह विशेष अवसर की खोज में था परन्तु आल्हा, उदल, इर्दल जैसे पराक्रमियों के रहते वह कुछ भी नहीं कर सकता था।

उस समय अलंकरण कुस्ती मैदानों, भवनों एवं अश्वों को स्वाभिमान का प्रतीक माना जाता था। यहाँ तक कि अन्य के अश्व पर सवारी करना या अश्व की जीन या अलंकरण को छीनना भी युद्ध का कारण बन जाता था फिर सौन्दर्य की प्रतिमूर्ति राजकुमारियों का आकर्षण अलग ही था।

माहिल को परमाल के कान भरने का मौका इर्दल के हिरन अश्व पर आरोहण करने से मिला, जिसके फलस्वरूप आल्हा, उदल, इर्दल उनकी माता देवलदे का देश निकाला हो गया। उन्होंने अपमान सहन करके कनवज (कन्नौज) के राजा जयचंद्र के यहाँ सज़्मान प्राप्त किया।

आल्हा एवं उदल के निष्कासन के साथ माहिल ने दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान को युद्ध के लिए आमंत्रित किया तथा महोबा की सेना दक्षिण क्षेत्र में भेज दी। उरई के पास माहौनी में भीषण युद्ध हुआ जिसमें महीनों जय-पराजय का क्रम चलता रहा। सभी विशेष योद्धा वीरगति को प्राप्त हुए। अन्ततः पृथ्वीराज चौहान की सैन्य शक्ति विजयी हुई उसने बुन्देलखण्ड के विशेष नगरों को लूटा एवं ध्वस्त किया एवं सज़्पज़ि के साथ विशेष अश्वों को भी ले जाने में सफल हुआ।

इस पराभव का उल्लेख मदनपुर पुरावैभव शाली नगर के अभिलेख से प्राप्त हुआ है।

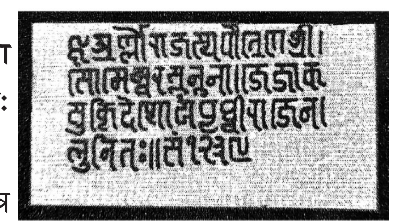

ओं अन्नोराजस्य पौत्रेण श्री सोमेश्वर सुनुना जैजाक भुक्ति देशेयं पृथ्वीराजे वा लुनितः सं. 1239

अर्न्नराज के पौत्र तथा सोमेश्वर के पुत्र पृथ्वीराज द्वारा जैजाक भुक्ति नाम के उस देश को संवत् 1239 (सन् 1182-83 ई.) में लूटा गया।

1.पृथ्वीराज चौहान ने परमर्द्धिदेव से युद्ध करते हुए महोवा, लासपुर (बिलासपुर), मदनपुर, नवागढ़ क्षेत्रों को लूटता हुआ दिल्ली लौट गया। बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास-डॉ. के. पी. त्रिपाठी पृ. 19

2. पूर्व सांसद डॉ. विश्वनाथ शर्मा झाँसी 'हमारे प्रेरक' पृ. 4

3. ठाकुर लक्ष्मण सिंह गौड़–'ओरछा का इतिहास', पृ. 33

4. श्री के.बी. रंगास्वामी आयंगर मद्रास–'भारतवर्ष का इतिहास', प्रथम भाग

5. श्रीकृष्ण चन्द्र श्रीवास्तव, रीडर प्राचीन इतिहास, संस्कृति विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय–'प्राचीन भारत का इतिहास तथा संस्कृति'

6.आर्कियोलॉजीकल सर्वे रिपोर्ट, भाग 10, पृ. 98-99

7.आर्कियोलॉजीकल सर्वे रिपोर्ट भाग 21, पृ. 173-74

8.आर्कियोलॉजीकल सर्वे रिपोर्ट भाग 2, पृ. 98

9.श्री सच्चिदानन्द भट्टाचार्य–'भारतीय इतिहास कोश' (ए डिस्कवरी ऑफ इंडियन हिस्ट्री)

उपरोज़्त इतिहासकारों ने युद्ध का वर्णन किया है, जिसमें विशेष योद्धा आल्हा, ऊदल, बनाफर मानज् सोलंकी, ब्रह्मानन्द, मलखान, रानागुलाब, मीरतालब, धौरास, डिज़्बराय आदि वीरगति को प्राप्त हुए।

परमर्द्धि कालिंजर किले में जा छिपा। 1203 ई. में कुतुबुद्दीन ने परमर्द्धिदेव को पराजित कर कालिंजर पर अधिकार कर लिया। परमर्द्धिदेव की कायरता को देख उनके मन्त्री अजयदेव ने ही उनकी हत्या कर दी।

क्षेत्रीय विध्वंस

यहाँ पर जिनधर्मी कब आकर यहाँ बस गये इसका संकेत नहीं मिलता, फिर भी प्रतिहारकाल के ग्यारहवीं शती के प्रशस्ति वाले खंडित जिनबिज़्बों का अज़्बार देखकर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यहाँ एक विशाल जिनधर्मी बसावट रही, जिसने कई विशाल जिन मन्दिरों का निर्माण कराया होगा और बिज़्ब पधराए होंगे। जिस भी आततायी, धर्म और कला विरोधी ने यहाँ उत्पात मचाया उसने ना केवल जिन मन्दिरों को बल्कि यहाँ समीप स्थित दो सूर्य मन्दिरों

को भी बेरहमी से नष्ट किया था जिस ओर देखो उस ओर यहाँ टीले ही टीले दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है कि कालान्तर में खंडहरों पर टीले बन गये हैं। मात्र एक टीले की खुदाई ने ही खंडित जिनबिज़्बों का अज़्बार दिखला दिया। मात्र 6-7 जिनबिज़्ब ही अखंडित मिले हैं। इनमें अतिविशेष अतिशयकारी खड्गासित अरहनाथ और पद्मासित अन्य 5-6 बिज़्ब, सभी अति मनोज्ञ हैं जो अब नवनिर्मित जिन मन्दिर में स्थापित हैं। आसपास के क्षेत्रों में खंडित सूर्यमन्दिर हिले हुए अब भी खड़े हैं। लगता है कि इन सब का विध्वंस हुआ था किन्तु उसे सुधारने की चेष्टा की गयी जिसमें खज़्भे खंडित मन्दिरों के निर्माण में उपयोग कर लिए गये। किन्तु बाद में एक पर आसमान से बिजली गिर गयी। इसमें एक शिलालेख अपठ उड़िया ब्राह्मी में मिला है । ग्यारसपुर के खंडित जिन मन्दिर की तरह यह अब भी अपनी कला दिखलाता अधूरा खड़ा है ।

नवनिर्मित जिन मन्दिर के समीप ही एक टीला है जो कदाचित् वहाँ की प्राचीन बस्ती को दबाए हो । उसी के पीछे कुछ बड़े-बड़े बोल्डर हैं जिन पर एक बिज़्ब रखा है। उसे वहाँ के ग्रामीण आज भी पूजते हैं। खिंची, तनी मूँछों वाला रोबीला शासक जो जिन भक्त था। लगता हैं कि माल्यधर बना वह जिनद्वार द्वारपाल खड़ा है। जो मजबूर जिनभक्त, विधर्मी आक्रामकों से जूझकर भी सज़्भवतः हार गया और मन्दिरों के साथ-साथ अपने राज्य को विनाश से न बचा सका ।

इस प्रकार बुन्देलखंड के विशेष नगरों के ध्वस्त होने से बुन्देलखंड की सांस्कृतिक ऐतिहासिक एवं धार्मिक विरासत प्रभावित हुई थी।

ऐतिहासिक एवं पुराताज़्विक नगर

उस काल के कुछ क्षेत्रों, ऐतिहासिक पुराताज़्विक नगरों का विवरण निज़्न है:-

बुन्देलखंड जैन तीर्थभूमि की दृष्टि से अपना एक अलग महज़्व रखता है। बुन्देलखंड जैन पुरातज़्व की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध है। यह इस प्रदेश का सौभाग्य है कि यहाँ के वन-उपवन, पर्वत, उपत्यका, नदी, सरोवर, दुर्ग, वापिका सर्वत्र जैन पुरातज़्व की सामग्री प्रचुर संज़्या में बिखरी पड़ी है।

अहार जी – बुन्देलखंड में स्थित तीर्थक्षेत्रों में अहारजी तीर्थक्षेत्र का अपना एक अहम स्थान है। अहारजी तीर्थभूमि के निकट 100-150 किलोमीटर की परिधि में अनेक तीर्थक्षेत्र स्थित हैं।

प्राकृतिक सौन्दर्य पूर्ण पर्वतमाला व सुन्दर वनस्थली के बीच मदनसागर सरोवर के पृष्ठ भाग में यह मनोरम साधना स्थली स्थित है।

अहारजी में भू-गर्भ से प्राप्त जैन मन्दिरों और सैंकड़ों मूर्तियों के भग्नावेश प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हैं। यहाँ के शिलालेख बताते हैं कि यह स्थल ऐतिहासिक व सांस्कृतिक दृष्टि से जैन समाज के लिए कितना महत्त्वपूर्ण है। जैन जातियों, भट्टारकों, श्रावकों, स्थलों आदि के नाम उल्लेखित शिलालेख कई महत्त्वपूर्ण जानकारी देते हैं।

गगनचुम्बी शिखराकार पर्वतों के मध्य की पहाड़ी पर यह सिद्ध स्थल स्थित है। यह पर्वत पंचपहाड़ी के नाम से प्रसिद्ध है। इसकी तलहटी में एक तालाब है जो मदनताल कहलाता है। इस पर्वत पर 6 चरण चिह्नों के लघु जिनालय हैं।[52]

पपौरा जी – परकोटा के अन्दर विशाल प्रांगण में 108 मन्दिर तथा धर्मशाला हैं। अलग शैलियों में निर्मित इनके शिखर आकर्षक हैं। क्षेत्र पर चार मानस्तम्भ हैं। मन्दिरों एवं धर्मशाला के बीच मैदान में उद्यान लगा हुआ है। 11वीं-12वीं शताब्दी में यहाँ मन्दिरों का निर्माण हुआ है। यहाँ पर अतिशय के अनेक घटनाक्रम हुए जिनको पढ़ सुनकर श्रद्धा आस्था और अधिक बढ़ जाती है।

यहाँ यात्रियों के ठहरने हेतु सर्वसुविधायुक्त धर्मशालाएँ हैं। यहाँ 1936 में स्थापित छात्रावास भी संचालित था। भोजन की समुचित व्यवस्था है। यहाँ कार्तिक शुक्ल त्रयोदशी से पूर्णिमा तक प्रतिवर्ष मेला भी लगता है।

पपौरा जी के विशाल परकोटे में 12 वीं शताब्दी से लेकर 20 वीं शताब्दी तक हर काल के जिनालय और प्रतिमाएँ विराजमान हैं। यहाँ 800 वर्षों से लगातार कभी मूर्ति तो कभी मन्दिर निर्माण का कार्य हुआ है। यहाँ एक मन्दिर रथाकार है और 70 फीट ऊँचा है। दूर देखने पर लगता है रथ में जुते घोड़े तेजी से दौड़ रहे हों। वहीं भगवान् बाहुबली का गोलाकार मन्दिर 24 स्तम्भों पर टिका

है। इसमें 15 फुट ऊँची बाहुबली भगवान् की प्रतिमा है। एक भव्य चौबीसी मन्दिर का समूह चौबीसी के नाम से जाना जाता है जिसमें एक बड़े मन्दिर के चारों ओर प्रत्येक दिशा में 6-6 मन्दिर हैं। प्रत्येक वेदिका की अलग परिक्रमा तथा एक साथ परिक्रमा के चतुर्दिक झरोखें के रूप में निर्मित किया जाना अद्भुत वास्तुकला का नमूना है। यहाँ दो विशाल प्राचीर भौंयरे (भू-गर्भ स्थित मन्दिर) हैं जिसमें संवत् 1202 की अत्यन्त प्राचीन प्रतिमाएँ देशी पाषाण से बनी चंदेल राजा मदनवर्मन के शासनकाल की विराजमान हैं। अतिशय यह है कि इनकी चमक और आकर्षण आज भी श्रावकों को चकित करने वाला है। यहाँ का हर मन्दिर और उसकी स्थापत्य कला अद्भुत है।[53]

कुंडेश्वर

कुंडेश्वर टीकमगढ़-ललितपुर मार्ग के मध्य स्थित बुन्देलखंड का विशेष स्मरणीय स्थान है।

कुंडेश्वर से काले पत्थर पर निर्मित 12वीं शती की तीर्थंकर पद्मप्रभ की दो प्रतिमाएँ प्राप्त है। एक पद्मासन की ध्यानस्थ मुद्रा में अंकित है। इस प्रतिमा का सिर टूटा हुआ है।

दूसरी पद्मासन पद्मप्रभ कायोत्सर्ग मुद्रा में तीन खंडों में है।

बुलआ पत्थर पर निर्मित प्रतिमा 11वीं शती की है, इसमें मात्र तीर्थंकर का सिर प्राप्त है।

यहाँ पर एक शिवजी का मन्दिर भी है। कुंडी से दुग्ध की धार निकलने पर अनायास ही शिवलिंग प्रकट हो गया, इसी कारण शिवलिंग मूर्ति को कुंडेश्वर कहा जाता है।

कुंडेश्वर के मन्दिर के समीप जमडार नदी का सुन्दर प्रपात है। जिसको ऊषा कुंड भी कहते हैं। कुंडेश्वर के वन उपवन और ऊषाकुंज बरीघाट, ऊषाधार, ऊषा निहार आदि बड़े ही रमणीय स्थल हैं।[54]

बड़ग्राम (बडागाँव का शैवमठ) : पुरानी टेकरी के पास स्थित बड़ाग्राम के विशाल तालाब के किनारे शैवमठ स्थापत्य कला का अद्भुत उदाहरण है। यह शैवमतावलम्बियों का प्रसिद्ध स्थल है।

सिद्धक्षेत्र बड़ागाँव से साढ़े तीन करोड़ मुनि मोक्ष पधारे हैं।

फलहोडि ग्रामि आहूट कोटि सिद्धासि नमस्कार माझा।[55]

यहाँ स्थित चन्देलकालीन चौबीसी दर्शनीय है। चन्देल कालीन चार भव्य मन्दिर और सात वेदियों वाले इस तीर्थ के मुज़्य उजुंग शिखरबन्द जिनालय में आदिनाथ भगवान् की 16 फीट ऊँची पद्मासन प्रतिमा मूल नायक होने के साथ चौबीस जिनालय अति मनोहारी है। यहाँ प्राचीन सिद्धगुफा है।

मड़खेड़ा (सूर्यमन्दिर) : मोहनगढ़ जिला टीकमगढ़ का यह सूर्य मन्दिर बुन्देलखंड की शान रहा है। ऊमरी की भाँति इसका कला सौन्दर्य भी अद्वितीय है। चन्देल शैली के अनुसार इसका निर्माण भी विशाल जगती पर मुज़्यद्वार, मंडप, विशाल, कलात्मक शिखर, अमलसार एवं कलश के साथ निर्मित किया गया है।

उज़्बरगढ़ (ऊमरी) : उज़्मरगढ़ (ऊमरी) का सूर्य मन्दिर चन्देल शासन काल में जैनधर्म के साथ-साथ शक्ति एवं सूर्योपासना भी होती थी। इस काल में सुन्दर कलात्मक मनोज्ञ मन्दिर का निर्माण किया गया। जिसमें सभी देवी देवताओं को, रामायण-महाभारत के पात्रों के साथ समकालिक परिवेश का सजीव अंकन किया गया है।

35 × 35 की 5 फुट वाली जगती पर सुन्दर मंडप, द्वार पर गंगा-जमुना, नवग्रह, नागबेल की सुन्दर नक़्काशी के स्तज़्भ, छत की सुन्दरता विलक्षण है।

द्वार मंडप पर गजाक्रांत सिंह की आकृति चन्देलों की यशोगाथा का वर्णन करती है।

गर्ज़गृह में सूर्य भगवान् की 4-5 फुट उजुंग मूर्ति मूर्तिकला का चुज़्बकीय आकर्षण है।

इस अद्वितीय स्थल को काल के क्रूर चक्र एवं प्रशासन की उदासीनता और वैभव की लालसा में सूर्यमन्दिर को ग्रसित कर लिया। सूर्य की मूर्ति ज़ी चोरी हो गयी, और मन्दिर प्राकृतिक प्रकोपों के कारण नष्ट होने की कगार पर है ।

बाणपुर (बानपुर) : श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र बानपुर में दसवीं

शताज़्दी तक की मूर्तियाँ विद्यमान हैं।

यह क्षेत्र प्राचीन है। क्षेत्र पर 5 मन्दिर हैं। भगवान् शान्तिनाथ की 15 फुट खड्गासन प्रतिमा मूलनायक है। 21 फुट ऊँचा हजारों वर्ष पुराना सहस्रकूट चैत्यालय शिल्पकारी का उत्कृष्ट नमूना है। क्षेत्र के परकोटे में अन्य कई मन्दिरों और मूर्तियों के भग्नावशेष पड़े हुए हैं। गाँव का मन्दिर भी दर्शनीय व विशाल है।[56]

विकास की दृष्टि से यह क्षेत्र उपेक्षित है। यहाँ 5 फरवरी को प्रतिवर्ष मेला लगता है। यह ललितपुर से 32 किलोमीटर और टीकमगढ़ से 11 किलोमीटर है।

ललितपुर

ललितपुर उज़्र प्रदेश राज्य प्राकृतिक संस्थानों से समृद्ध एक शहर है। यह जिला का मुज़्यालय है। यह उज़्र में झाँसी, दक्षिण में सागर, पूर्व में मध्यप्रदेश के टीकमगढ़, छतरपुर एवं शिवपुरी तथा पश्चिम में गुना से सटा हुआ है। यहाँ के प्रमुख पर्यटन स्थलों में देवगढ़, नीलकंठेश्वर त्रिमूर्ति, रणछोरजी, माताटीला बाँध और महावीर स्वामी अज़्यारण विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं। इस जिले की स्थापना सत्रहवीं शताज़्दी में बुन्देल राजपूत द्वारा की गयी थी। 1891 से 1974 ई. तक ललितपुर जिला झाँसी जिले का ही एक हिस्सा था।

ललितपुर जिले का भारत में पहला स्थान है। जहाँ बाँधों की संज़्या लगभग 15 है जो किसी भी जिले में नहीं है और गोविन्द सागर बाँध ऐसा है जिसमें तीन साइफन मौजूद हैं जो भारतवर्ष के तीन बाँधों में से एक है।

यहाँ पर विंध्याचल पर्वत शृंखला है और यहाँ पर खनिज सज़्पदा की कोई कमी नहीं है। ललितपुर से निकला ग्रेनाइट का पत्थर बाहर विदेशों में जाता है। यहाँ पर ऐतिहासिक स्थल है जो अपने आप में एक अद्वितीय है और वीरों की गाथा सुनाते रहते हैं।

श्रीक्षेत्रपाल जी दिगज़्बर जैन मन्दिर : श्री दिगज़्बर क्षेत्रपाल मन्दिर, ललितपुर एक दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र है। मुनि पुंगव श्री सुधा सागर जी महाराज की प्रेरणा से भव्य जिनालय एवं मानस्तज़्भ का निर्माण हो रहा है। क्षेत्रपाल मन्दिर में मूलनायक अभिनन्दन भगवान की मनोज्ञ प्रतिमा है।

यहाँ के बड़ा जैन मन्दिर, अटा जैन मन्दिर, नया जैन मन्दिर भी भव्य व दर्शनीय स्थान है।

देवगढ़ : देवगढ़ को महज़्वपूर्ण पुरातात्ज़्विक स्थल के रूप में ज़्याति प्राप्त है। इस स्थान का गरिमापूर्ण इतिवृज़ है जो भारत के ऐतिहासिक, पुरातात्ज़्विक, सांस्कृतिक तथा धार्मिक पटल पर अपना महज़्वपूर्ण स्थान बनाए हुए हैं। यह उज़र प्रदेश के ललितपुर जिले में 24^0 15' उज़री अक्षांश तथा 78^0 15' पूर्वी देशान्तर पर स्थित हैं।[57]

देवगढ़ शज़्द से ध्वनित होता है कि यह स्थान देवताओं के गढ़ने के रूप में स्वीकार किया गया है।[58]

देवगढ़ का नाम दशावतार मन्दिर के कारण भी प्रसिद्ध हुआ। यह भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण के संरक्षण में है। इस गुप्तकालीन मन्दिर की द्वारशाखा अत्यन्त कलात्मक है। इसमें उकेरे गये दाज़्पत्य प्रेम के दृश्य बड़े मार्मिक हैं। बीच-बीच में सुन्दर पत्रवल्लिरियों तथा बीनी आकृतियों से गर्भगृह के प्रवेश द्वार को अलंकृत किया गया है। ललाटबिज़्ब पर शेषासीन विष्णु की मूर्ति है जिसके आसपास नृसिंह तथा वामन की लघु आकृतियाँ बनी हैं। गर्भगृह में सज़्प्रति कोई प्रतिमा प्रतिष्ठापित नहीं है।

देवगढ़ में जैन प्रतिमाओं का विशाल भंडार है। यहाँ पर अनेक जैन मन्दिर, लघु मन्दिर तथा मानस्तज़्भ अभी भी सुरक्षित दशा में विद्यमान हैं। इन का सर्वेक्षण और अध्ययन किया गया है परन्तु जैन कला के अनेक महज़्वपूर्ण पक्षों पर और अधिक विस्तार से अध्ययन और शोध कार्य किया जा सकता है।

यहाँ पहाड़ी पर छोटे-बड़े चालीस से अधिक जैन मन्दिर विद्यमान हैं। आकार में सबसे बड़ा तथा महज़्वपूर्ण मन्दिर संज़्या बारह हैं। मूलतः इसका निर्माण 9वीं शताज़्दी में हुआ था। कुछ प्रतिमाएँ यहाँ के मन्दिरों तथा कुटियों में सुरक्षित हैं और कुछ को संग्रहालय में रखा गया है। अधिकांश प्रतिमाएँ जैनधर्म के तीर्थंकरों का प्रतिनिधित्व करती हैं। तीर्थंकरों के अतिरिज़्त जैनधर्म के अनेक देवी-देवताओं को भी रूपायित किया गया है। साहू जैन संग्रहालय की दशभुजी चक्रेश्वरी की मूर्ति अत्यन्त आकर्षक है। ऋषभनाथ के पुत्र बाहुबली गोज़्मटेश्वर की कई मूर्तियाँ उपलज़्ध हुई हैं। कैवल्य प्राप्ति के लिए उनके द्वारा की गयी कठिन

तपस्या को अभिव्यज़्त करने के लिए उनके शरीर पर लता, पत्र, सर्प, बिच्छू आदि लिपटे हुए दिखलाए जाते हैं। देवगढ़ के कलाकारों ने जैनधर्म के आचार्य, उपाध्याय, साधु-साध्वियों, श्रावक-श्राविकाएँ, तीर्थंकरों के माता-पिता आदि की मूर्तियाँ गढ़ने में भी विशेष अभिरुचि दिखलाई है। उपाध्याय की सुन्दर मूर्ति की चरण चौकी पर पाँच पंज़्तियों का उत्कीर्ण अभिलेख उस समय प्रचलित शिष्य परज़्परा का बोध कराता है।

देवगढ़ में लगभग तीन सौ छोटे बड़े अज़िलेख मिले हैं। इनमें नाहर घाटी, सिद्ध की गुफा के गुप्तकालीन अभिलेख तथा मन्दिर संज़्या बारह के सामने स्तज़्भ पर उकेरा है जिसे स्थानीय नाम 'ज्ञानशिला' दिया गया है।[59]

सीरोनखुर्द

सीरोनखुर्द ललितपुर जिले के उज़र-पश्चिम में लगभग 20 किलोमीटर दूर स्थित है। यहाँ तक ललितपुर से राजघाट होते हुए अथवा बांसी से जखौरा होते हुए पहुँचा जा सकता है। जखौरा-राजघाट राजमार्ग पर लगभग दो किलोमीटर हटकर पूर्व में कच्ची सड़क से यह स्थान सज़्बद्ध है।

यह बहुत बड़ा व्यापारिक केन्द्र था। यहाँ के व्यापारियों ने धार्मिक कार्यों के लिए मुज़्त हस्त से दान दिया। फलतः अनेक मन्दिरों और अनगिनत देव प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। इस बात के संकेत यहाँ से प्राप्त प्राचीन अभिलेख तथा प्रभूत पुरा सज़्पदा से मिल जाते हैं। लगभग 10वीं शताज़्दी में यहाँ का राज्यपाल उन्दभट यहीं सीयडोणी में रहता था। निश्चय ही यह विस्तृत क्षेत्र का प्रशासनिक केन्द्र रहा होगा।[60]

सीरोनखुर्द के विस्तार के सज़्बन्ध में यह उल्लेखनीय है कि लगभग दो किलोमीटर के घेरे में कई देवालय अवस्थित थे जिनके मात्र अधिष्ठान बचे हैं। यहाँ से प्राप्त अभिलेख तथा कलाकृतियाँ ऐतिहासिक तथा पुरातात्ज़्विक दृष्टि से अत्यन्त महज़्वपूर्ण हैं।

सीरोनखुर्द के पूर्व में स्थित शान्तिनाथ का मन्दिर है जिसे बुन्देल राजाओं के समय में बनवाया गया था।[61] इसमें शान्तिनाथ की कायोत्सर्ग मुद्रा में स्थित विशाल प्रतिमा स्थापित है। मन्दिर के प्रांगण में एक बावड़ी है, जिसमें नीचे जल तक पहुँचने के लिए सोपान बना हुआ है। इस उज़रवर्ती निर्माण में कुछ प्राचीन

अवशेषों को भी प्रयुज़्त किया गया है। मन्दिर से सज़्बद्ध कमरों, बरामदों तथा प्रांगण में यत्र-तत्र मूर्तियाँ रखी हुई हैं।

इस संकलन में अनेक तीर्थंकरों, यक्ष यक्षियों की सुन्दर प्रतिमाएँ संगृहीत हैं। इनमें प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ, चक्रेश्वरी, अज़्बिका की मूर्तियाँ उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिज़्त हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियाँ भी रज़ी हुई हैं। इनमें बराह, नृसिंह, विष्णु की ध्यानस्थ मूर्ति तथा रावणानुग्रह मूर्तियाँ प्रमुख हैं। इन्हें आसपास के स्थानों से एकत्र किया गया है।

दुधई

दुधई 24^0 27' उज़्री अक्षांश तथा 76^0 24' पूर्वी देशान्तर पर मध्य रेलवे स्टेशन धौर्रा से लगभग 11 किमी. दक्षिण-पश्चिम की ओर घने जंगलों के मध्य स्थित है। यहाँ पहुँचने के लिए यह रास्ता पैदल ही तय करना पड़ता है। दुधई इस समय एक छोटा सा गाँव है जो पुरा स्मारकों के भग्नावशेषों से कुछ दूर बसा है। यह ललितपुर से दक्षिण में लगभग 27 किमी. दूर है।

दुधई प्राचीन काल में एक बड़ा नगर था और मुज़्य व्यापारिक मार्ग पर स्थित था। अलबरूनीं ने भी इसे एक बड़े शहर के रूप में वर्णित किया है।[62] चन्देल काल में यह नगर पूर्ण विकसित था और उनके समय में ही यहाँ के मन्दिरों का निर्माण हुआ। झाँसी से प्राप्त एक अभिलेख में दुग्धकुप्या ग्राम का उल्लेख आया है।[63] सज़्भवतः यह दुधई का ही पूर्व नाम है।

यहाँ के मन्दिरों का प्रधान समूह वर्तमान गाँव के पूर्व की ओर किनारे पर स्थित है। इनमें दो जैन मन्दिर, वराह मन्दिर, ब्रह्मा मन्दिर, शिव मन्दिर सज़्मिलित हैं। इसमें सबसे बड़ा मन्दिर 52 फीट लज़्बा तथा 37 फीट चौड़ा था। इसके गर्भगृह को दो कक्षों में विभज़्त किया था और दोनों के बीच एक द्वार था। पूर्व-पश्चिम में दोनों ओर मंडप थे।[64]

इस मन्दिर-समूह में सबसे सुन्दर ब्रह्मा मन्दिर था। इसमें गर्भगृह, अन्तराल, मंडप तथा अर्द्धमंडप अन्य समकालीन विकसित मन्दिरों की भाँति बने थे। यह उज़्राभिमुख था। इसके तोरणों पर सुन्दर अलंकरण था। इसी मन्दिर के स्तज़्भों पर उत्कीर्ण अभिलेख मिले हैं। एक अभिलेख से ज्ञात होता है कि महाराजाधिराज

यशोवर्मन के पौत्र तथा कृष्णन एवं आसर्वा के पुत्र देवलज़्धि ने इस मन्दिर को बनवाया था।

मन्दिरों का दूसरा समूह गाँव के पश्चिम की ओर जंगल में स्थित है। इसे स्थानीय लोग ''बनिया की बारात'' कहते हैं। किंवदन्ती के अनुसार इन्हें जैन बनिया देवपत खेवपत ने बनाया था। यह सभी मन्दिर अब पूरी तरह ध्वस्त हो चुके हैं। हनुमान की एक विशाल मूर्ति यही स्थापित थी जो अब खंडित हो गयी है। यहाँ से पशुवराह की सुन्दर प्रतिमा प्राप्त हुई है जो अब राज्य संग्रहालय, लखनऊ में है। यह अत्यन्त भव्य मूर्ति है। वराह के पृष्ठ भाग पर अनेक देवी-देवताओं को अंकित किया गया है। यहाँ दशावतारों में बलराम के स्थान पर कृष्ण प्रदर्शित है।[65]

चाँदपुर

चाँदपुर 24^0 30' उज़्र अक्षांश तथा 78^0 18' पूर्वी देशान्तर पर मध्य रेलवे के धौर्रा स्टेशन से लगभग 3 कि.मी. दूर स्थित है।[66] यहाँ देवगढ़ जाने वाली बस से भी पहुँचा जा सकता है इसी के निकट एक और नया गाँव बस गया है जिसे जहाजपुर कहते हैं। यहाँ लगभग एक किलोमीटर के क्षेत्र में प्राचीन स्मारकों के भग्नावशेष बिखरे हुए हैं।

अध्ययन की सुविधा के लिए इन पुरा स्मारकों को पाँच समूहों में रखा जा सकता है। पहला मन्दिर-समूह रेलवे लाइन के पार है और इसमें सभी जैन मन्दिर थे। ये मन्दिर पूरी तरह खंडित हो चुके हैं।

दूसरा मन्दिर-समूह पहले से उज़्र-पश्चिम में कुछ दूरी पर स्थित है। यह सबसे अधिक महज़्वपूर्ण और बड़ा मन्दिर समूह है। इसमें विष्णु मन्दिर अधिक थे। ये सभी मन्दिर भग्नावस्था में हैं। मध्य का विष्णु मन्दिर कुछ सुरक्षित अवस्था में हैं। इसके सामने फर्श पर मन्दिर का मानचित्र रेखांकित है। यहाँ के स्मारकों की महज़्वपूर्ण मूर्तियाँ रानीमहल, झाँसी में लाई गयी है।

तीसरा मन्दिर-समूह पूरी तरह नष्ट हो चुका है। चौथा मन्दिर-समूह झील के पूर्वी किनारे पर स्थित है। मन्दिर पूरी तरह भग्न हो चुका है। मन्दिर के प्रवेश द्वार की शीर्षपट्टी पर तांडव नृत्य करती हुई षड्भुजी शिव की मूर्ति मध्य में

अंकित है। अन्दर एक सहस्रलिंग स्थापित है जिसके चारों किनारों पर गणेश, ब्रह्मा, सूर्य तथा देवी की आकृतियाँ उकेरी गयी हैं। इस प्रकार यह समन्वयात्मक प्रतिमा यहाँ की धार्मिक सहिष्णुता का ज्वलन्त उदाहरण है। प्रवेश के साथ ही नन्दी की एक विशाल प्रतिमा है। इसी स्थान से नृत्य मुद्रा में शिव की सुन्दर प्रतिमा प्राप्त हुई थी जो अब रानी महल, झाँसी में प्रदर्शित है।

पाँचवाँ मन्दिर-समूह झील के उज़र की ओर है। यह भी पूरी तरह ध्वस्त हैं। यहाँ पशुवराह की मूर्ति स्थापित है। यहाँ एक स्तज़्भ पर अभिलेख उत्कीर्ण है।[67] इसकी पहली पंज़्ति में सं. 1207 (1150 ई.) तिथि दी गयी है जिससे इस मन्दिर की निर्माण तिथि निर्धारित करने की सहायता मिलती है।

रेलवे लाइन के किनारे सुरक्षित दशा में एक भव्य मन्दिर विद्यमान है। इसकी बाह्य दीवालों पर अष्टदिज़्पाल, वराह, सरस्वती, गणेश आदि देवी-देवताओं की सुन्दर मूर्तियाँ उत्कीर्ण हैं। एक दूसरा मन्दिर झील से उज़र में कुछ दूरी पर स्थित है। इसकी चौखट पर कामकला पर आधारित मिथुन आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं।

खजुराहो

मध्य प्रदेश के छतरपुर जिले में स्थित खजुराहो अपने मन्दिरों के लिए विश्व विज़्यात है। यह क्षेत्र 24^0 51' उज़री अक्षांश तथा 79^0 56' पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। खजुराहो महोबा से 45 मील और छतरपुर से 28 मील दूर है। यहाँ छतरपुर होते हुए बस एवं रेलमार्ग द्वारा पहुँचा जा सकता है। दिल्ली तथा वाराणसी से खजुराहो के लिए हवाई सेवा भी उपलज़्ध है।

विन्ध्याचल की उपत्यकाओं के मध्य लगभग आठ मील के क्षेत्र में मन्दिर-समूह फैले हुए हैं। स्थानीय जनश्रुति के अनुसार खजुराहो में कुल 85 मन्दिर थे परन्तु इस समय 24 मन्दिर विद्यमान हैं। इन मन्दिरों को तीन समूहों में विभज़्त किया जा सकता है–

1.**पश्चिमी मन्दिर समूह :** चौसठ योगिनी, लालगुहाँ, कन्दरिया महादेव, नन्दी, पार्वती, लक्ष्मण, मतंगेश्वर और वराह।

2.**पूर्वी मन्दिर समूह :** ब्रह्मा, वामन, जावेरी, ककरामठ, घंटई, आदिनाथ, पार्श्वनाथ और शान्तिनाथ।

3.**दक्षिणी मन्दिर समूह :** दूलादेव तथा चतुर्भुज।

इन मन्दिरों का निर्माण नवीं शताज़्दी के उज़रार्द्ध से लेकर बारहवीं शताज़्दी तक सज़्पन्न हुआ। खजुराहो के अधिकांश मन्दिर ऊँची जगती पर बिना किसी परकोटे के बनाए गये हैं। ये मन्दिर नागर शैली के सुन्दरतम उदाहरण हैं। मन्दिर के बाह्य भाग को अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियों तथा अन्य अलंकरणों से मंडित किया गया है। मन्दिरों की छतों को पर्वत शिखरों के ढंग पर प्रदर्शित किया गया है जिनका अन्त सबसे ऊपरी शिज़रों पर होता है। यह मुज़्य शिखर गर्भगृह के ठीक ऊपर रहता है। शिखर के ऊपर चन्द्रिकाएँ, आमलक, कलश और बीजपूरक प्रदर्शित किए गये हैं। इन मन्दिरों के तीन मुज़्य अंग हैं : गर्भगृह, मंडप और अर्द्धमंडप। इनके अतिरिज़्त गर्भगृह और मंडप के बीच अन्तराल भी बना मिलता है। कुछ बड़े मन्दिरों में महामंडप और प्रदक्षिणापथ का विधान ज़ी है।

खजुराहो के मन्दिर वैष्णव, शैव, शाज़्त, सौर तथा जैन सज़्प्रदाय से सज़्बन्धित हैं। यहाँ सबसे अधिक शैव मन्दिर हैं।

कन्दरिया महादेव यहाँ का विशालतम मन्दिर है। यह लगभग 102 फिट लज़्बा, 66 फिट चौड़ा तथा 101 फिट ऊँचा है।[68] इसमें अर्द्धमंडप, महामंडप, अन्तराल, गर्भगृह और प्रदक्षिणा-पथ का सुन्दर समन्वय है। शिखरों का तारतज़्य सिंहद्वार के शिखर से प्रारज़्भ होकर गर्भगृह के उच्चतम शिखर तक जाता है।

प्राचीन शिवसागर झील के पूर्वी किनारे पर विश्वनाथ मन्दिर स्थित है। यह लज़्बाई में लगभग 89 फिट तथा चौड़ाई में 46 फिट हैं। इस मन्दिर के भी पाँच भाग हैं और निर्माण कला भी कन्दरिया महादेव जैसी ही है। यह पंचायतन शैली का कान्धार प्रासाद है। एक अभिलेख से प्रतीत होता है कि इसका निर्माण विक्रम सं. 1059 (1002 ई.) में हुआ होगा। विश्वनाथ मन्दिर के ठीक सामने नन्दी मन्दिर स्थित है। जिसमें शिव के वाहन नन्दी की विशाल मूर्ति प्रतिष्ठापित है।

शिवसागर झील के दक्षिण-पश्चिम में ग्रेनाइट की चट्टान पर शाज़्त सज़्प्रदाय से सज़्बन्धित चौसठ योगिनी मन्दिर स्थित है। इस मन्दिर का विन्यास दक्षिण-

पश्चिम से उत्तर-पूर्व की दिशा में है। खजुराहो के मन्दिरों में यह प्राचीनतम माना जाता है।

लक्ष्मण मन्दिर वैष्णव धर्म से सम्बन्धित पंचायतन शैली का कान्धार प्रासाद है। इसका निर्माण चन्देल राजा यशोवर्मन के समय में हुआ था। मन्दिर की लम्बाई 98 फिट और चौड़ाई 45 फिट है। इस देवालय की जगती पर चार गौण मन्दिर बने हैं। मन्दिर के बाह्य भाग में एक दूसरे के सामानान्तर दो मूर्ति-पंक्तियाँ हैं। इनमें देवी-देवताओं तथा विविध दृश्यों को प्रदर्शित करने वाली आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं।

वामन मन्दिर खजुराहो गाँव की बस्ती के समीप हैं। इसकी लम्बाई 62 फिट तथा चौड़ाई 45 फिट है। इसमें गर्भगृह, अन्तराल, महामंडप और अर्द्धमंडप है। गर्भगृह मे विष्णु के वामन अवतार की 4 फिट 8 इंच ऊँची प्रतिमा प्रतिष्ठापित हैं।

जैन मन्दिरों में पार्श्व मन्दिर अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह पश्चिमी मन्दिर मन्दिर-समूह से लगभग 2 किलोमीटर पूर्व में स्थित है। वास्तुकला की दृष्टि से यह लक्ष्मण मन्दिर के अधिक निकट है। यह एक कांधार प्रासाद है किन्तु यहाँ कक्षासन नहीं बनाए गये हैं। इसके गर्भगृह के पीछे एक अतिरिक्त छोटा मन्दिर जुड़ा हुआ है। मन्दिर की बाह्य दीवालों पर जैन-तीर्थंकरों के अतिरिक्त हिन्दू देव प्रतिमाओं को भी उकेरा गया है।[69]

खजुराहो से बहुत से अभिलेख भी प्राप्त हुए हैं। इनमें सबसे प्राचीन हनुमान की मूर्ति के पादपीठ पर उत्कीर्ण हैं। इसमें सं. 940 तिथि अंकित है। कई अभिलेखों में चन्देलवंश की वंशावली दी गयी है। विश्वनाथ मन्दिर में लगा हुआ लेख ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

अतिशय क्षेत्र नवागढ़ एवं कला क्षेत्र खजुराहो का अद्‌भुत साम्य

प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़ के अभिलेखों का गहन अध्ययन करने तथा ऐतिहासिक साक्ष्यों के सन्दर्भ में विचित्र साम्य सामने आया है।

चन्देल शासक धंगदेव के शासन काल में राज्यमान श्रेष्ठी पाहिल ने मुनिवासवचन्द्र की प्रेरणा एवं आशीर्वाद से खजुराहो में भगवान् पार्श्वनाथ

जिनालय का निर्माण संवत 1011 में कराया। मन्दिर के संरक्षण हेतु श्रेष्ठी पाहिल ने सात वाटिकाओं का दान किया जिसका उल्लेख खजुराहो जिनालय के अभिलेख में किया गया है।[72]

नवागढ़ क्षेत्र में भी एक पाषाण स्तम्भ आचार्य गुफा के खोलते समय प्राप्त हुआ जिस पर 'साबु पाहल' उत्कीर्ण है।[73]

खजुराहो के श्री शान्तिप्रसाद साहू संग्रहालय में श्रेष्ठी पाहिल का मस्तक एवं प्रतिमा संरक्षित है। नवागढ़ संग्रहालय में भी श्रेष्ठी पाहिल की वैसी ही मुद्रा वाली प्रतिमा संगृहीत है, जिससे सिद्ध होता है श्रेष्ठी पाहल ने खजुराहो के साथ-साथ नवागढ़ में भी जैन मन्दिर का निर्माण कराया है।[74]

अन्य अभिलेखों के माध्यम से भी कई तथ्य सामने आए हैं यथा श्रेष्ठी पाहिल के पुत्र साल्हे तथा उनके पुत्रगण महागण, महिचन्द, सिरिचन्द, जिनचन्द उदयचन्द हैं। आपने खजुराहो में संवत् 1215 में भगवान् सम्भवनाथ का मन्दिर बनवाया तथा इसके पूर्व श्रेष्ठी पाहिल के पौत्र श्रेष्ठी महिचन्द ने संवत् 1195 में नवागढ़ में भगवान् महावीर की प्रतिष्ठा कराई। नवागढ़ में एक कलात्मक स्तम्भ पर श्रेष्ठी महिचन्द्र पुत्र साहु देल्हण प्रशस्ति में मन्दिर निर्माण का उल्लेख है तथा श्रेष्ठि पाहिल के पौत्र शुभचन्द्र एवं उदयचन्द ने संवत् 1203 में मदनवम्मदेव के राजकाल में भगवान शान्तिनाथ की प्रतिष्ठा कराई थी।[75]

नवागढ़ संग्रहालय में श्रेष्ठी पाहिल की प्रतिमा के साथ चंदेल शासक मदनवर्मन की विलक्षण प्रतिमा बगाजटोरिया पर विराजमान है, जिसे ग्रामवासी बगाजमाता के रूप में पूजते हैं। यह प्रतिमा विनयावत मुद्रा में दोनों हाथों में खंडित माला लिए हुए, सुन्दर कला सौष्ठव सहित केश अलंकरण विशेष जूड़ा, कर्णकुंडल, कंठाभूषण, मेखला, लहराता उत्तरीय, त्रिभंग मुद्रा, पाँव में नुपूर, कमर में करधनी आदि से सुसज्जित है।

इसके दाहिनी ओर शीर्ष के समीप पद्मासन तीर्थंकर आकृति शोभायमान है जिससे सिद्ध होता है उनकी अटूट आस्था जैनधर्म में रही है ।

नवागढ़ क्षेत्र में श्रेष्ठी रासल एवं महिचंद की प्रतिमा भी संगृहीत है जिन्होंने संवत् 1203 में यहाँ मानस्तम्भ सहित मन्दिरों का निर्माण कराने का गौरव प्राप्त किया था।

इसी के साथ मन्दिर निर्माता अन्य श्रेष्ठियों में राजपुत्र, दिक्‌पाल, बिज्नाण, नल्ह, बील्हा, सलदेसल सलष एवं लष्म के नामों का उल्लेख विज्ञिन्न अभिलेखों में प्राप्त होता है।

यहाँ और भी पुरातात्त्विक अन्वेषण होना चाहिए जिससे अन्य रहस्यों का उद्‌घाटन किया सके।

मदनपुर

ललितपुर से 65 किमी. दूर श्री दिगज्बर क्षेत्र शान्तिगिरि (मदनपुर) क्षेत्र है। इस क्षेत्र को पचमढ़ी कहते हैं। जिसमें 4 मन्दिर चार कोनों पर तथा एक मध्य में है। इसके सामने मन्दिर में भगवान शान्तिनाथ की प्रतिमा है, जो ज़ंडित है।

मदनपुर प्राचीन ऐतिहासिक स्थल है। यह 9वीं से 12 वीं शताज़्दी तक की वास्तुकला का जीता जागता दर्शन है। इस क्षेत्र में पाषाण कला के अवशेष एवं क्षेत्र की भूमि में अनेक धातुओं के भंडार हैं।

यह नगर ऐतिहासिक दृष्टि से प्राचीन एवं अत्यन्त महज़्वपूर्ण है। कालिंजर प्रबोध एवं बुन्देलखण्ड का वृहद् इतिहास में मदनपुर की स्थापना चन्देल शासक मदनवर्मन के द्वारा खजुराहो, बानपुर, दुदही, चाँद्पुर, अहार एवं नवागढ़ के साथ की गई।[70]

यहाँ के जिनालयों की प्रतिष्ठा संवत् सन् 1206 में जैन धर्म के गोलापूर्व अन्वय के श्रेष्ठियों द्वारा की गई है । पुरातात्त्विक दृष्टि से यह अत्यन्त महज़्वपूर्ण हैं। चन्देल शासन काल में इसका विशेष रूप से विकास एवं विस्तार हुआ है। यहाँ निर्मित आल्हा उदल के बैठका एवं पंचमढ़ी इसका साक्षात् उदाहरण है।

मदनपुर से प्राप्त शिलालेखानुसार इसका पराभव संवत् 1239 (सन् 1182 ई.) में पृथ्वीराज चौहान एवं परमर्द्धिदेव के युद्ध के कारण हुआ है ।[71]

महोबा

ऐतिहासिक नगरी महोबा हमीरपुर जिले में जिला मुज़्यालय से 54 मील दक्षिण में तथा खजुराहों से 45 मील पूर्व में स्थित है। झाँसी मानिकपुर मध्य रेलवे लाइन पर महोबा स्टेशन है, जहाँ से शहर चार कि.मी. दूर पड़ता है। यहाँ बस द्वारा भी पहुँचा जा सकता है।

महोबा सदियों तक चन्देलों की राजधानी रहा है। यह बहुत बड़ा नगर था। अनश्रुतियों के अनुसार चन्देल वंश के संस्थापक चन्द्रवर्मा ने 16 वर्ष की आयु में यहीं महोत्सव मनाया था। महोत्सव नगर शज़्द का परिवर्तित रूप ही महोबा है। इस नगर का वैभव सर्वप्रथम दिल्ली के बहुमानों द्वारा और बाद में मुस्लिम आक्रमणकारियों द्वारा नष्ट भ्रष्ट कर दिया गया।

महोबा पर हुए इन विनाशकारी आक्रमणों से यहाँ के महज़्वपूर्ण भवन, मन्दिर, महल आदि ध्वस्त हो गए। अब महोबा नगर का सौन्दर्य नगर सरोवरों तक सीमित रह गया है। चन्देल राजाओं को तड़ाग और झीलों के बनवाने का बड़ा शौक था। महोबा में कई बड़े अच्छे तालाब हैं।

मदनसागर के मध्य चट्टान पर एक मन्दिर स्थित है जो ककरामठ नाम से प्रसिद्ध है। यह 103 फीट लज़्बा तथा 42 फीट चौड़ा है। अन्य विकसित मन्दिरों की भाँति इस मन्दिर के भी पाँच भाग हैं, परन्तु इसका महामण्डप अन्य समकालीन मन्दिरों की अपेक्षा बड़ा है। इसकी बाहरी दीवारें खजुराहो के मन्दिरों की भाँति मूर्तियों से मण्डित नहीं है। गर्भगृह के बाहर मूर्तियों को रखने के लिए तीन आले बने हुए हैं परन्तु अब उनमें मूर्तियाँ नहीं हैं। यह सज़्पूर्ण मन्दिर ग्रेनाइट पत्थर का बना है। यह शिव मन्दिर है। इसका निर्माण मदनवर्मा के समय में हुआ होगा।

मदन सागर के उज़्री किनारे पर मनिया देव मंदिर के सामने एक ग्रेनाइट पत्थर का 18 फीट ऊँचा स्तज़्भ खड़ा है। इसे दीवट कहते हैं। इस पर दीपक रखते रहे होंगे, इसलिये यह नाम प्रचलित हुआ।

महोबा के दक्षिण-पूर्वी भाग दरीबा में एक स्तज़्भ है जिसे आल्हा की लाट या आल्हा की गिल्ली कहा जाता है। यह गिल्ली 9.5 फीट ऊँची है और इसका व्यास 13 इंच है। यह इस प्रकार रखी हुई है कि स्पर्श मात्र से घूमने लगती है। इसी के निकट एक और स्तज़्भ है जिसे खण्ड मतावर कहते हैं। इसमें एक अश्वारोही की मूर्ति बनी है जिसकी लोग अब पूजा करते हैं।

महोबा से कई सुंदर प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। ब्राह्मण धर्म से सज़्बन्धित मूर्तियों की संज़्या कम है। ऐसा लगता है इस धर्म की प्रतिमाओं को विशेष रूप से विनष्ट किया गया। जैनधर्म की बहुत सी मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। तीर्थंकरों में ऋषभनाथ,

पद्मप्रभनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर की महोबा से प्राप्त प्रतिमाएँ राजकीय संग्रहालय, झाँसी में संगृहीत हैं। अधिकांश मूर्तियों के पादपीठ पर अभिलेख खुदा है। ऋषभनाथ की मूर्ति पर अंकित अभिलेख में तिथि सं. 1228 तथा मूर्तिकार कैल्हण का नाम दिया गया है। इसी प्रकार पद्मप्रभनाथ की सज्वत् 1219 में बनी प्रतिमा पर मूर्तिकार रामदेव का उल्लेख है। बहुत सी मूर्तियों तथा एक तोरण भाग की उपलज्धि से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि महोबा में कई जैन मंदिर थे। इन मूर्तियों के गढ़ने में कई प्रकार का पत्थर प्रयुक्त हुआ है। यहाँ से प्राप्त ऋषभनाथ की एक आसनस्थ प्रतिमा धातुमूर्ति की तरह बजती है। कुछ मूर्तियों परर चमकदार ओप(पॉलिश) की गयी है। यहाँ से प्राप्त कुछ जैन मूर्तियाँ राज्य संग्रहालय, लखनऊ में सुरक्षित हैं।

सन्दर्ज़—

1. बुन्देलखंड का पुरातत्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ.4
2. वही
3. बुन्देलखंड का पुरातत्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ.6
4. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 2-3
5. (1) शान्तिपर्व अध्याय 29 श्लोक 12 एवं 13 अनुसार ऋग्वेद सप्तम् 5(37 से 39)
   (2) अष्टध्यायी पाणिनी 4-2-116
   (3) चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 4
   (4) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास, दीवान प्रतिपाल सिंह भाग प्रथम, पृ. 9
   (5) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 4
   (6) बुन्देलखंड का पुरातत्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ. 1
6. महाभारत उद्योगपर्व–अध्याय 189 श्लोक 8-10,
   (1) चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 4
   (2) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह भाग प्रथम, पृ. 10
   (3) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 4
7. (1) बुन्देलखंड का पुरातत्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ. 2
   (2) चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 5
8. कुवलयमाला कहा-उद्योतनसूरि (सातवीं सदी) भाग 2, पृ. 559
9. (1) बुन्देलखंड का इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, भाग प्रथम, पृ. 12

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्व

10. (1) इंसाइज़्लोपीडिया ब्रिटानिका भाग 4, पृ. 409
   (2) इपि. इंडिका भाग प्रथम, पृ. 220
   (3) आर्कियोलॉजिकल सर्वे रिपोर्ट भाग 2, पृ. 98
   (4) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 50
11. (1) चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 7
   (2) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 42
12. (1) चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 5
   (2) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 1
   (3) सर्वे रिपोर्ट 1874-75 कनिंघम एलेज़्जेंडर दि ऐशियंट जियोग्राफी ऑफ इंडिया, वाराणसी (1975), पृ. 405
   (4) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास-दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 12
13. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह भाग प्रथम, पृ. 8
14. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 10
15. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 10
16. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 10
17. वही
18. (1) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 10
   (2) बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 1
19. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, प्रथम भाग, पृ. 12
   कुवलयमाला कहा उद्योतनसूरि, भाग-2, पृ. 559
20. चन्देलकालीन बुन्देलखंड का इतिहास–डॉ. अयोध्याप्रसाद पांडेय, पृ. 4,
   आर्कियोलॉजीकल सर्वे रिपोर्ट्स भाग 21, पृ. 91-92
21. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 1
22. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, भाग-1, पृ. 9
   बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 1
   बुन्देलखंड का पुरातत्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ. 2
23. बुन्देलखंड समग्र–हरिविष्णु अवस्थी, पृ. 69,
24. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–दीवान प्रतिपाल सिंह, भाग-1, पृ. 13
25. कनिंघम, एलेज़्जेंडर एंशियन्ट ज्योग्राफी ऑफ इंडिया, पृ. 406
26. प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़–संकलन ब्र. जयकुमार 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्य, पृ. 1

27. वही
28. बुन्देलखंड का पुरातज़्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ. 7
29. संकालिया, एच. डी. प्रिहिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री इंटसेटरा, पृ. 109
30. जैन, के.सी. प्रिहिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री ऑफ इंडिया, नई दिल्ली (1979, पृ. 1-3
31. आई.ए.आर. (1961-62), पृ. 57
32. कृष्णकुमार, ए. स्टडी इन दि स्टोन एज ऑफ खजुराहो इन सेन्ट्रल इंडिया पुरातज़्व . 0-3 (1969-70), पृ. 89-101
33. वार्टस, टी. ऑ-युवान्–ज्वयांगस्, ट्रेवेल इन इंडिया, दो 1904-5, पृ. 250
34. ए.एस. आई. रिपोर्ट (कनिंघम) बाल्यूम 10
35. वही, अभिलेख की पंज़्ति सं. 6, पृ. 101
36. इपी. इंडिका, भाग एक एवं 10, पृ. 162-179
37. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास–पं. गोरेलाल तिवारी, पृ. 19-20
38. बुन्देलखंड का इतिहास और जैन पुरातज़्व–प्रो. दिगज़्बरदास जैन एडवोकेट, क्षुल्लक चिदानन्द स्मृति ग्रन्थ, पृ. 155
39. बुन्देलखंड का पुरातज़्च, डॉ. एस.डी. द्विवेदी, पृ. 94,
42. जल प्रबंधन बुन्देलखंड की पारज़्परिक जल संरचनाएँ- हरिविष्णु अवस्थी, पृष्ठ 32
43. बुन्देलखंड का सामाजिक आर्थिक इतिहास–डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ 143
44. बुन्देलखंड का बृहद इतिहास–डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ 37
45. खजूरवाहक वर्तमान खजुराहो लेखक–दामोदर जयकृष्ण काले, पृष्ठ 37
46. हमीरपुर जिला गजेटियर सज़्पादक बलवन्त सिंह, पृष्ठ 274
47. मधुकर वर्ष 2 अंक 16 सज़्पादक पं. बनारसीदास चतुर्वेदी, पृष्ठ 13
48. बुन्देलखंड का बृहद इतिहास–डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ 41
49. बुन्देलखंड का बृहद इतिहास–डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ 41
40. 1. खजुराहो का जैन पुरातज़्व, डॉ. मारुति नन्दन प्रसाद तिवारी, प्रकाशकीय श्री दशरथ जैन,
 2. अर्ली रूलर्स आफ खजुराहो, डॉ. शिशिर कुमार मित्रा, पृ. 205-206
41. खजुराहो का जैन पुरातज़्व–डॉ. मारुति नन्दन प्रसाद तिवारी, पृ. 3
50. 1. दा राइज एंड डिज़्लाइंट ऑफ बुद्धिजम इन इंडिया, कनाई लाल हजारा, पृ. 184
 2. द अर्ली रूलर्स ऑफ खजुराहो, शिशिर कुमार मित्रा, पृ. 205-206
51. चन्देल शासनकाल में जैन धर्म का विकास, डॉ. अर्पिता रंजन
52. अहार जी सिद्धक्षेत्र एवं उसके निकटवर्ती तीर्थक्षेत्र–डॉ. सुनील जैन संचय, हीरक जयन्ती, वर्ष 2015

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातज़्व

53. वही
54. वही
55. तीर्थ वंदना, भट्टारक गुणकीर्ति
56. अहारजी सिद्धक्षेत्र एवं उसके निकटवर्ती तीर्थक्षेत्र–डॉ. सुनील जैन संचय, हीरक जयन्ती, वर्ष 2015
57. डिस्ट्रिज़्ट गजेटियर झाँसी (1965), पृ. 335
58. ए.एस.आई. रिपोर्ट (कनिंघम), भाग 10, पृ. 103
59. बुन्देलखंड का पुरातज़्व–डॉ. एस.डी. त्रिवेदी, पृ. 79
60. एस.डी. त्रिवेदी, संग्रहालय–पुरातज़्व पत्रिका, अंक 25 (जून 1980), पृ. 57-62
61. डिस्ट्रिज़्ट गजेटियर, झाँसी (1965), पृ. 362
62. अल्बरूनीज गजेटियर, झाँसी (1964) पृ. 362
63. इपी. इंडिका, भाग 9, पृ. 214-217
64. ए.एस.आई. रिपोर्ट (कनिंघम) भाग 10 पृ. 92, प्लेट 31
65. त्रिवेदी एस.डी. कृष्णावतार इन स्कल्पचरल आर्ट, बी.एम.ए., अंक 21-24, पृ. 80
66. डिस्ट्रिज़्ट गजेटियर झाँसी (1965), पृ. 333
67. ए.एस. आई. रिपोर्ट (कनिंघम), भाग-10, पृ. 97
68. खजुराहो का जैन पुरातज़्व–मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी
69. बुन्देलखंड का पुरातज़्व–डॉ. एस.डी त्रिवेदी, पृ. 90-92
70. 1. कालिंजर प्रबोध-डॉ. हरिओम तत्सत् बृहज़ शुज़्ल पृ.48
 2. बुन्देलखंड का वृहद् इतिहास, डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी पृ. 19
71. बुन्देलखंड का पुरातज़्व, डॉ.एस.डी. द्विवेदी, चित्र संज़्या 13
72. एपिग्राफिया इंडिका भाग प्रथम पृ. 152-153
73. प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़, ब्र. जयकुमार जैन निशांत पृ. 54
74. नवागढ़ (नंदपुर) का इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, पृ. 14

नवागढ़ से प्राप्त प्रतिमाओं के अभिलेख

अभिलेखों का उद्भव, विकास एवं महज़्व

अभिलेख दो शज़्दों के मेल से बना है अभि एवं लेख । अभि शज़्द उपसर्ग है । लेख शज़्द का अर्थ होता है - लिखा हुआ अथवा उत्कीर्ण किया हुआ। अभिलेख एक उत्कीर्ण सामग्री है जो सर्वाधिक कालखंड तक सुरक्षित किया जा सकता है। यह इतिहास निर्माण के प्रारज़्भिक एवं प्रामाणिक स्रोत की एक इकाई है। अभिलेख अमूल्य धरोहर हैं जो अतीत के रहस्यमय गाथाओं का उद्घाटन, उद्वाचन एवं प्रतिष्ठापन का कार्य करते हैं। अभिलेखों की उत्कीर्णित प्रकृति , उनकी संरचना सूक्ष्म एवं लघु, दीर्घ एवं गहरी हो सकती है। इनके लिखावट कुछ भी हो सकती है, परन्तु अभिलेख का ज्ञान प्रबल व महज़्वपूर्ण माध्यम है जो इतिहास के विभिन्न पक्षों को अवलोकित करता है ।

अभिलेखों का मानव जीवन में महज़्वपूर्ण स्थान हैं। मानव के सांस्कृतिक विकास के साथ ही मानव ने लेखन कला भी विकसित की और अभिलेखों का उद्भव हुआ। प्रारज़्भ में मानव द्वारा अभिलेखों का माध्यम शीघ्रनाशी सामग्री पर अपनाये जाने के कारण वे अभिलेख उपलज़्ध नहीं हैं। प्राचीन अभिलेखों में सिन्धु सज़्यता के नगरों से प्राप्त लेख भी हैं। लिपि का वाचन सज़्भव न हो सकने के कारण भारतीय इतिहास का यह पक्ष आज भी अधूरा है।

भारतवर्ष में लेखन कला की जानकारी प्राचीन काल से है किन्तु अभिलेखों के दौर में उपलज़्धि मौर्यकाल या ईसा पूर्व 400-300 की है। लेखन कला का प्रारज़्भ चित्र लिपि से हुआ। प्राचीन सुमेर से सबसे पुरानी लिपि के लेख प्राप्त हुए हैं। फारत की खाड़ी के ऊपर दजला फरात नदियों के मुहाने के प्रदेश में, लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व सुमेर संस्कृति की बस्तियाँ थी, यहाँ से मिट्टी की मोहरों और फलकों पर अंकित लगभग 3000 ईसा पूर्व के सुमेरी लेख मिले हैं। सुमेरी लिपि भाव चित्रात्मक थी, इसका जन्म लगभग 6 हजार वर्ष पूर्व हुआ था।[1]

प्राचीन मिस्र से 3000 ईसा पूर्व के पुरालेख मिलते हैं। प्राचीन मिस्र की लिपि को हाइरोग्लिफिक लिपि के नाम से जानते हैं।[2] लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व चीनी लिपि भी जन्म ले चुकी थी, यह भाव चित्रात्मक लिपि थी।[3] वर्तमान चीनी लिपि भी

भाव चित्रात्मक है। सुमेरी लिपि को बाद में लगभग 2500 ई- पूर्व में अक्कादियों ने अपनाया था। गीली मिट्टी के फलकों पर नुकीली कलम से इस लिपि के संकेत उकेरे जाते थे, बाद में इन फलकों को सुखाया जाता था। फलकों पर अंकित ये अक्षर कील के आकार के दिखाई देते हैं इस सुमेरी अक्कादी(बेबीलोनी) लिपि को कीलाक्षर (ज्यूने फार्म) लिपि नाम दिया गया।[4]

उक्त लिपियों की समकालीन भारतीय लिपि सिन्धु सज़्यता की लिपि है। जिसका पूर्णतः वाचन नहीं हो पाया है। अनेक विद्वान् प्रयास कर रहे हैं। इस सज़्यता के सैकड़ों स्थल भारत व पाकिस्तान में खोजे जा चुके हैं। यह तो स्पष्ट है कि भारत में अभिलेखों या लेखनकला का उद्भव आज से 5000 वर्ष पूर्व हो चुका था[5], किन्तु विकास नियमित नहीं हुआ सिन्धु लिपि के स्वरूप की पहचान एवं वाचन से यह लज़्बा अन्तराल समाप्त हो सकता है, देश का लिखित इतिहास पाँच हजार वर्ष पूर्व तक जा सकता है।

भारत में लेखन कला की प्राचीनता के सज़्बन्ध में साहित्यिक स्रोतों से जानकारी मिलती है। नारद स्मृति में लिपि के आविष्कारक स्वयं ब्रह्म युग को माना गया है ।[6] मनु संहिता[7] का उद्धरण (बाणभट्ट ने ई. सन् 620 में) बृहस्पति[8] का मनु पर वर्तिका में ह्वेनसांग[9] के विवरण में जैन ग्रन्थ समवायांग सूत्र[10], (ईसा पूर्व 300) में मिलता है।

हिन्दी विशेष कोश के प्रथम भाग में श्री नगेन्द्र नाथ वसु ने उल्लेख किया है कि ऋषभदेव की प्रथम महारानी नन्दा से ज्येष्ठ पुत्र भरत और पुत्री ब्राह्मी का जन्म हुआ था। दूसरी पत्नी सुनन्दा से बाहुबली और सुन्दरी का जन्म हुआ । सभी को अक्षर, चित्र, संगीत और गणित का ज्ञान कराया था। स्वयं भगवान आदिनाथ के मुख से जो अक्षरावली निकली उसमें 'सिद्ध नमः' मंगलाचरण है। इस अक्षर विद्या को ब्राह्मी ने तथा अंक विद्या को सुन्दरी ने ग्रहण किया। भगवती सूत्र में ऋषभदेव द्वारा दाहिने हाथ से ब्राह्मी को लिपि ज्ञान कराने का उल्लेख है। इस कथानक का कई अन्य जैन ग्रन्थों में भी उल्लेख हैं, इनमें अभिधान राजेन्द्र कोश, आवश्यक निर्युक्ति भाष्य, समवायांग सूत्र और विशेषावश्यक भाष्य प्रमुख हैं।

गुप्तकाल में कई प्रशस्तियों, दानलेखों एवं शिलालेखों को उत्कीर्ण करवाया गया। समुद्रगुप्त की प्रयोग प्रशस्ति, मेहरोली का चन्द्र लेख, स्कन्द गुप्त के भीतरी व

जूनागढ़ लेख, कुमार गुप्त-बन्धु वर्मन की मन्दसौर प्रशस्ति, यशोवर्मन का सौधनी स्तम्भ लेख आदि महत्त्वपूर्ण अभिलेख हैं। गुप्तोत्तर काल के चालुक्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय ऐहोल प्रशस्ति भी जैन लेख है[11], जो समकालीन अभिलेखों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

पूर्व मध्यकाल में बड़े पैमाने पर मन्दिरों व मूर्तियों का निर्माण हुआ। प्रायः मन्दिरों में अभिलेख एवं मूर्तियों की पादपीठ पर अभिलेख की परम्परा विकसित हुई। जैनधर्म के मन्दिरों व मूर्तियों में प्रायः अभिलेख का अंकन किया जाता था। मूर्तियों की पादपीठ पर अभिलेखों की परम्परा अत्यंत प्राचीन हैं, जो गुप्तकाल एवं मध्यकाल में चलती रही।

मध्यप्रदेश में राष्ट्रकूट, प्रतिहार, परमाल, चन्देल, कलचुरी, कच्छपघात राजवंशों के अधीन कई मन्दिरों का निर्माण हुआ और इनमें अभिलेख भी लिखवाए गये। इस काल में अभिलेख नागरी लिपि में और संस्कृत भाषा में लिखवाये जाते थे। जैनधर्म के संस्कृत अभिलेख यद्यपि गुप्तकाल से ही मिल रहे हैं। विदिशा जिले के दुर्जनपुर ग्राम से तीन तीर्थंकर प्रतिमा प्राप्त हुई है, इन प्रतिमाओं की पादपीठ पर गुप्त शासक रामगुप्त का नाम उत्कीर्ण है, इसके बाद गुप्तोत्तर एवं पूर्व मध्यकाल में कई मन्दिर एवं प्रतिमाओं पर उल्लेखित करवाए गये।

अभिलेखों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, प्रथम अभिलेख है जो राजकीय संरक्षण में उत्कीर्ण किए गये। दूसरे अभिलेख निजी संस्थाओं अथवा व्यक्ति द्वारा उत्कीर्ण कराये गये। द्वितीय प्रकार के अभिलेख बड़ी मात्रा में उत्कीर्ण कराये जाते हैं, जो धार्मिक कार्यों अथवा मूर्तियों की स्थापना के समय उत्कीर्ण करवाये गये हैं। इस प्रकार के अभिलेख प्रायः दान में दी गई वस्तु अथवा मूर्तियों की पादपीठों पर उत्कीर्ण किए जाते थे। इन अभिलेखों में कभी-कभी शासक का नाम अथवा उसके द्वारा दिए दान का भी उल्लेख हैं। मन्दिरों की नीतियों पर अभिलेख उत्कीर्ण कराये जाते थे।

प्रस्तर खंड, स्तम्भ आदि पर प्रशस्ति उत्कीर्ण की जाती थी, जिसमें प्रायः स्मृति के रूप में यथा-तालाब खुदवाना, बावड़ी बनवाना, मन्दिर निर्माण या अन्य कोई सार्वजनिक कार्यों का विवरण दिया जाता था। कभी साधारण व्यक्तियों द्वारा भी जनहित कार्य लेख खुदवाया जाता था। इस प्रकार के अभिलेखों को चार भागों में

विभक्त किया जा सकता है। 1. शाही लेख, 2. प्रशस्ति लेख, 3. दान लेख, 4. अन्य लेख । शाही लेखों में मौर्य सम्राट अशोक के अभिलेख उल्लेखनीय हैं।[12] इन अभिलेखों में शिलालेख, स्तम्भ लेख हैं। प्रशस्ति लेखों को प्रायः शाही संरक्षण में कवियों द्वारा तैयार किया जाता था, जो योग्य व उच्च कोटि के विद्वान् होते थे। उदाहरण स्वरूप-हरिषेण की प्रयाग प्रशस्ति[13] वत्सभट्टी की मन्दसौर प्रशस्ति[14] वासुल की मन्दसौर प्रशस्ति (यशोधर्मन)[15], रविकीर्ति की ऐहोल प्रशस्ति[16] आदि उल्लेखनीय है। कुछ काव्यों को भी प्रस्तर शिलाओं पर उत्कीर्ण किया गया था। शाही बान से सम्बन्धित अभिलेखों में प्रायः ताम्रपत्रों पर उत्कीर्ण किया जाता था। अन्य लेखों में मोहरों, मृदभांडों व सिक्कों पर पाए जाने वाले लेख हैं, किन्तु ये लेख वास्तविक रूप से अभिलेखों की श्रेणी में नहीं आते।

भारत में अभिलेखों के उत्कीर्ण किए जाने की परम्परा थी। सिन्धु घाटी की सभ्यता में भी सीलों पर अंकित लेख मिले, किन्तु लिपि का वाचन ना हो पाने के कारण सिन्धु घाटी के अभिलेखों का विवरण सम्भव नहीं हुआ। भारत के प्राचीन अभिलेखों में मौर्य सम्राट अशोक के ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी के है। इसके बाद शिलालेख, स्तम्भलेख, ताम्रलेख प्रायः उत्कीर्ण होते रहे हैं। मध्यकाल एवं उत्तर मध्यकाल में भी कुछ राजपूत शासक एवं मुस्लिम शासकों ने भी प्रस्तर लेख ताम्रलेख उत्कीर्ण कराने की परम्परा को जारी रखा।

अभिलेखों का महत्त्व

अभिलेख भारतीय इतिहास के महत्त्वपूर्ण स्रोत हैं एवं आधार स्तम्भ होने, अभिलेखों से इतिहास एवं संस्कृति की जानकारी प्राप्त होती हैं, जो किसी अन्य स्रोत से जानकारी नहीं मिलती हैं। इसमें वर्णित घटना से समकालीन एवं पूर्वकालिक घटनाओं की जानकारी प्राप्त होती हैं, अभिलेखों से शाही परिवार या व्यक्ति विशेष की विश्वसनीय जानकारी मिलती है, कवि कुछ पूर्व घटनाओं का भी विवरण अंकित कर देते हैं। उदाहरण स्वरूप एक अभिलेख में लेखक ने पुराने दस्तावेजों के आधार पर सही जानकारी प्रस्तुत की, पूर्व मध्यकाल में प्रतिहार, चन्देलकाल, कलचुरी शासनकाल के कई महत्त्वपूर्ण अभिलेख हैं, जिनके आधार पर तत्सम्बन्धी इतिहास की रचना हुई है।

भारतीय इतिहास में अभिलेखों का महज़्त्वपूर्ण स्थान हैं। प्रायः अभिलेख राजकीय संरक्षण में लिखवाये जाते थे और दरबार का ही कोई कवि या लेखक अभिलेखों का विवरण तैयार करता था। गुप्तकाल में 13 वीं शताज़्दी तक संस्कृत भाषा का ही अधिकांशतः प्रयोग किया गया हैं। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति के लेखक हरिषेण थे, वही कुमारगुप्त-बन्धुवर्मा के मन्दसौर अभिलेख के कवि वत्सभट्टी संस्कृत भाषा के विद्वान् थे। ऐहोल की प्रशस्ति कवि रविकीर्ति की रचना थी। साहित्यिक भाषा के रूप में संस्कृत की समझ विद्वानों को ही रहती थी। राजकीय संरक्षण में संस्कृत विद्वानों ने प्रायः अभिलेख को संस्कृत भाषा में ही उत्कीर्ण करवाया, चाहे वे लेख मन्दिर में संलग्न किए गए हों या प्रतिमा की पादपीठ पर उत्कीर्ण हों।

गुप्तकाल में अभिलेख

गुप्तकाल में कई प्रशस्तियों, दानलेखों एवं शिलालेखों का उत्कीर्ण करवाया गया। समुद्रगुप्त की प्रयाग प्रशस्ति, मेहरोली का चन्द्र लेख, स्कन्ध गुप्त के भीतरी व जूनागढ़ लेख, कुमार गुप्त-बन्धु वर्मन का सौधनी स्तज़्भ लेख आदि महज़्त्वपूर्ण अभिलेख हैं। गुप्तोज़र काल के चालुज़्य नरेश पुलकेशिन द्वितीय की एहोल प्रशस्ति भी जैन लेख है, जो समकालीन अभिलेखों में सर्वाधिक महज़्त्वपूर्ण है।

मध्यप्रदेश में राष्ट्रकूट, प्रतिहार, परमाल, चन्देलकालीन राजवंशों के अधीन कई मन्दिरों का निर्माण हुआ और इनमें अभिलेख भी लिखवाए गये। इस काल के अभिलेख नागरी लिपि में और संस्कृत भाषा में लिखवाए जाते हैं। जैनधर्म के संस्कृत अभिलेख यद्यपि गुप्तकाल से ही मिल रहे हैं। विदिशा जिले के दुर्जनपुर ग्राम से तीन तीर्थंकर प्राप्त हुए हैं, इन प्रतिमाओं की पादपीठ पर गुप्त शासक रामगुप्त का नाम उल्लिखित है इसके बाद गुप्तोज़र एवं पूर्व मध्यकाल में कई मन्दिर में अभिलेख एवं कई प्रतिमाओं पर उल्लेखित करवाए गये। नवागढ़ में भी कई महज़्त्वपूर्ण अभिलेख प्राप्त हुए हैं, जो गुप्तकाल और चन्देलकाल आदि के शासनकाल में लिखवाए गए थे।

जैनधर्मानुसार अभिलेखीय परज़्परा

जैनधर्म के अनुसार अभिलेख लिखने की परज़्परा अत्यधिक प्राचीन है।

जैनधर्म के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव ने भोगभूमि के नष्ट होने पर समस्त प्रजा को कर्मभूमि का ज्ञान कराया।

उन्होंने अपने पुत्र भरत, बाहुबलि आदि सौ पुत्रों को अक्षरज्ञान (लिपिज्ञान), चित्रज्ञान, संगीतज्ञान एवं गणित का ज्ञान कराया।

ब्राह्मी को अक्षरविद्या एवं सुन्दरी को अंक विद्या का ज्ञान कराया था।[17]

ऋषभदेव ने भरत को अयोध्या बाहुबली को पोदनपुर एवं शेष पुत्रों को विभिन्न राज्यों का शासक नियुक्त किया। कालान्तर में भरत चक्रवर्ती को चक्ररत्न की प्राप्ति हुई, चौदह रत्नों में से एक काकणी रत्न श्रीगृह में उत्पन्न हुआ था। काकणी रत्न वृषभाचल पर्वत पर नाम लिखने का कारणभूत रत्न था। अर्थात् उस समय में भी अज़िलेखीय परज़्परा प्रचलित थी।

अधिमेखलमस्यासीच्छिलाभिज़िषु चक्रिणः।
स्वनामाक्षरविन्यासे धृतिर्विश्वक्षमाजितः।।
काकिणीरत्नमादाय यदा लिखिष्यत्ययम्।
तदा राजसहस्राणां नामान्यत्रैक्षताधिराट्।।[18]

समस्त पृथिवी को जीतने वाले चक्रवर्ती भरत को वृषभाचल पर्वत के किनारे की शिला की दीवारों पर अपने नाम के अक्षर लिखने की इच्छा से ज्यों ही काकिणी रत्न लिया, त्यों ही उन्होंने वहाँ लिखे हुए हजारों चक्रवर्ती राजाओं के नाम देखे। भरत चक्रवर्ती से पूर्व असंज़्यात चक्रवर्ती राजाओं के नाम वृषभाचल पर्वत पर अंकित देखकर भरत चक्रवर्ती को आश्चर्य हुआ।

जैन साहित्यानुसार प्रत्येक चक्रवर्ती अपनी दिग्विजय को गौरवगाथा वृषभाचल पर्वत पर अंकित करते हैं। इन सन्दर्भों से सिद्ध होता है जैनधर्म में अभिलेख की परज़्परा अति प्राचीन रही है ।

वर्तमान में सबसे प्राचीन शिलालेख हाथी गुफा में अंकित खारवेल शिलालेख में मिलते हैं।

हाथी गुफा शिलालेख (उड़िसा) लिपि ब्राह्मी, औड्रमागधी, भाषा समय ई. पूर्व दूसरी शताज़्दी[19]

सम्राट खारवेल के हाथी गुज़्फा-अभिलेख का मूलपाठ

णमो अरहंतानं णमो सवसिधानं।

ऐरेण महाराजेन महामेघवाहनेन चेदि-राजवंस-वर्धनेन पसथ-सुभ-लखनेन

चतुरंत–लुठं (त)-गुण-उपेतेन कलिंगाधिपतिना सिरि-खारवेलेन पंदरस बसानि सीरि-कडार-सरीरवता कीडिता कुमारकीडिका । ततो लेख रूप-गणना-ववहार-विधि-विसारदेन सव-विजावदातेन नव वसानि योवरजं पसादितं। संपुण-चतुवीसति-वसो तदानी वधमान-सेसयो वेनाभिविजयो ततिये कलिंग-राजवंस-पुरिस-युगं महाराजाभिसेचनं पापुनाति ।

अरिहंतों को नमस्कार हो, सभी सिद्धों को नमस्कार हो।

इन महाराजा महामेघवाहन चेदि नामक राजवंश के गौरव-वर्द्धक प्रशस्त और शुभ लक्षणों के धारक-चारों दिशाओं में व्याप्त गुणों वाले सुडौल एवं कडियल (मजबूत) देहयष्टि के धारक कलिंगाधिपति श्री खारबेल के द्वारा पंद्रह वर्षों तक कुमारोचित क्रीड़ाएँ की गई उसके बाद लिपि विद्या रूप परिवर्तन, गणितीय वाणिज्य मुकद्दओं का निर्णय, संविधान शाज़ आदि का विधिवत् रूप से उनमें पारंगत होकर नौ वर्ष तक युवराज पद को सुशोभित किया। 24 वर्ष की आयु पूर्ण होने पर वर्धमान की भाँति अपराजेय होकर कलिंग राजवंश के तृतीय सम्राट के रूप में अभिषेक को प्राप्त किया ।

नवागढ़ से प्राप्त प्रस्तर अभिलेखों एवं धातु मूर्ति अभिलेखों की सूची

नवागढ़ से प्राप्त अधिकांश अभिलेखों का वर्णन सभी प्रतिमाओं के पादमूल में अंकित अभिलेखों से ही लिया गया है। प्रस्तर अभिलेखों एवं धातु मूर्ति अभिलेखों की सूची भी नवागढ़ में स्थापित एवं संगृहीत प्रतिमाओं के आधार पर ही वर्णित की गयी हैं। डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन, नवागढ़ के प्राचीन अभिलेख कृति से इनका मिलान किया गया है।

नवागढ़ से प्राप्त प्रस्तर (पाषाण) की प्रतिमा बिना संवत् की प्रशस्तियों की सूची–

तीर्थंकर अरनाथ प्रतिमा

आसन प्रतिमा

आसन प्रतिमा

महावीर प्रतिमा

ज़ंडित घुटना

ज़ंडित चरण

खंडित चरण

खंडित आसन धड़ पद्मासन मुद्रा में साथ में कलश

खंडित चरण आसन

ज़ंडित आसन चरण

खंडित शान्तिनाथ आसन खड़ी मुद्रा में

खंडित पद्मासन मुद्रा में आसन प्रतिमा

खंडित आसन चरण

नवागढ़ से प्राप्त मूर्ति अभिलेखों की सूची—

पीतल/धातु प्रतिमा	**संवत्**
चौबीस तीर्थंकर	1490
तीर्थंकर पार्श्वनाथ प्रतिमा	1548
तीर्थंकर पार्श्वनाथ ताम्र प्रतिमा	1586
चन्द्रप्रभ धातु प्रतिमा (खंडित)	1688
तीर्थंकर विमलनाथ प्रतिमा	1885
तीर्थंकर महावीर प्रतिमा	1879
खंडित धातु पंचमेरु पाषाण (5 नग)	2051
तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा	2067
तीर्थंकर आदिनाथ प्रतिमा	2067
तीर्थंकर अभिनन्दननाथ प्रतिमा	2067
तीर्थंकर चन्द्रप्रभ प्रतिमा	2067
तीर्थंकर आदिनाथ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर पार्श्वनाथ प्रतिमा	2089

नवागढ़ से प्राप्त पाषाण (प्रस्तर) अभिलेखों की सूची—

प्रतिमा	संवत्
तीर्थंकर सज़्भवनाथ प्रतिमा	1511
तीर्थंकर चन्द्रप्रभ प्रतिमा सफेद पाषाण	1655
तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा श्वेत पाषाण	2027
तीर्थंकर कुंथुनाथ प्रतिमा	2050
तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा	2050
तीर्थंकर वासुपूज्य	2066
तीर्थंकर आदिनाथ प्रतिमा	2067
श्री भरतस्वामी जी प्रतिमा	2067
तीर्थंकर महावीर	2072
तीर्थंकर पार्श्वनाथ	2072
तीर्थंकर नेमिनाथ	2072
मानस्तज़्भ अरनाथ प्रतिमा (8 नग)	2072
तीर्थंकर मल्लिनाथ	2072
श्री सुपार्श्वनाथ श्वेत पाषाण पद्मासन	2076
पाषाण श्री बाहुबली भगवान	2089
तीर्थंकर कुंथुनाथ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर आदिनाथ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर चन्द्रप्रभ प्रतिमा	2089
तीर्थंकर महावीर प्रतिमा	2089

संग्रहालय में संगृहीत खण्डित पाषाण प्रतिमा

आदिनाथ आसन	संवत् 1123
उपाध्याय प्रतिमा	संवत् 1188

महावीर प्रतिमा	संवत् 1195
आदिनाथ आसन	संवत् 1202
मानस्तज़्भ - 4 नग	संवत् 1203
शांतिनाथ आसन	संवत् 1202

संग्रहालय में संगृहीत संवत् रहित पाषाण प्रतिमा

तीर्थंकर ऋषभनाथ –	8 पाषाण आसन
तीर्थंकर अजितनाथ–	1 आसन
तीर्थंकर पद्मप्रभ–	1 आसन
तीर्थंकर चन्द्रप्रभ	1 मूर्ति
तीर्थंकर शान्तिनाथ	3 आसन पाषाण
तीर्थंकर कुंथुनाथ	2 आसन
तीर्थंकर नेमिनाथ	2
तीर्थंकर पार्श्वनाथ	5
तीर्थंकर वर्धमान	1
अरिहंत आसन पाषाण	6

नवागढ़ से प्राप्त महज़्वपूर्ण अभिलेखों का मूलपाठ

1. प्रथम मानस्तज़्भ
   1. संमतु(संवत्) 1203 अषाढ़ (आषाढ) वदि 10 गोला
   2. पूर्व्व अन्वे साबु (साह)

रासल सुत बल्हण

2. दूसरा मानस्तज़्भ
   1. संमतु(संवत्) 1203 असढ (आषाढ) वदि 10 गोलापूर्व अ–
   2. न्वे साबु (साह) रामचन्द सुत बालु,

3. तीसरा मानस्तज़्भ
   1. संमतु (संवत्) 1203

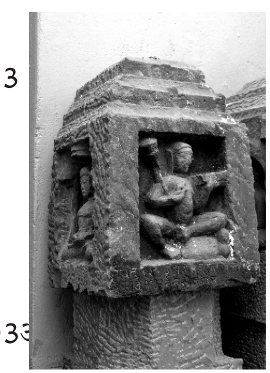

वुदो (बुधौ) गो–

2. लापूर्व अन्वे साबु (साह) रासल सुत सांति (शान्ति)

4. चौथा मानस्तज्भ 1. स॰(1203)...असढ़ (आषाढ़) बदि

2. 10 गो॰ (गोलापूर्व)...साबु...सुत

5. आसन प्रतिमा 1. श्री सेवी वाश तकाराम सेकं रति

2. भज प्रक को थज महा नललभी मलै मलल नामः ।

6. आसन प्रतिमा 1. संवतु 1781

2. चत्र (चैत्र) वदी 7 ल.

3. नल्ह श्री

4. हात सिध

7. महावीर प्रतिमा 1. स (संवत्) 1195 गोलापूर्वान्वये साबु (शाह) महिचन्दभार्या तिसुदि तत्सुत साबु (शाह) देल्हण वधू वीलहा मामी साल्हा ऐते प्रणमंति

8. खंडित प्रशस्ति सहित घुटना – गोलापव्व (र्व्व)

9. खंडित चरण 1. भट्टारक पद्मदेवः अ

2. प्रणमन्ति

10. खंडित चरण 1. र्य वि नाभिवाजेन कुन्तो(कुंथौ)

2. गोलापूर्व्वान्वये

3. विज़्नाहा त (तस्य) सु. (सुत) भा. (भार्या)

4. संवत् 1202 ....

11. खंडित आसन धड़ पद्मासन मुद्रा में संग में कलश चरण–

1. सुषि (सुश्री) रा. (राज) पुत्र श्री दिक्पाल

2. देववदि चासू काले देवलोकेन।

12. ज़ंडित चरण आसन– 1. साबु (साह) वील्हा तस्य सुत लषम्।

2. अंबिका प्रलामति (प्रणमंति)

13. खंडित आसन चरण 1. कुरुत

2. 45

14. खंडित शान्तिनाथ आसन खड़ी मुद्रा में–

दायीं ओर संवतु 1202 गोला ...व(पूव्व) अन्वे भ्राता सलदेसल

बायीं ओर साबु (साह

15. खंडित पद्मासन मुद्रा में आसन प्रतिमा–....... सं. (संवत्) 1202

16. खंडित आसन चरण –आसाढ़ सुदि-बुधे

17. अलंकृत स्तज्भ 1. साहु (शाह) महिचन्द्र पुत्र साहु

2. देल्हण केन (तेन) कारीत्।

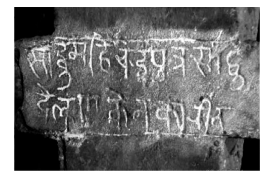

18. खंडित प्रतिमा की पीठ पर अंकित दो सिंह–

1. तस्य सुत – साहु सलष

तीर्थंकर अरनाथ प्रतिमा

यह प्रतिमा मध्य में विराजमान है। इस प्रतिमा की दायीं ओर तीर्थंकर शान्तिनाथ-प्रतिमा तथा बायीं ओर कुन्थुनाथ प्रतिमा विराजित की गयी है। तीर्थंकर अरनाथ प्रतिमा यथावत है। इसकी पीठासन पर मात्र लांछन स्वरूप मीन अंकित है।

चौबीसी

दायीं ओर जैनम् तथा बायीं ओर चरण अंकित हैं जो इस प्रतिमा में देव शास्त्र तथा गुरु को प्रदर्शित करते हैं।

संवत् 1490 वर्षे वैस. (बैसाख) सुदि 15रवौ श्री मूलसंघे श्री पद्मनन्दिदेव

1. श्री सहेलवाल वसो सरग्य रस्तू लायो थिरो। पुत्र सन्न तद्य सी घड़ाः
2. प्रार्यासणे मुन्निमदो।। इय श्री वितं...तु र्वि श्रविका प्रतिष्ठापिता श्री न
3. सापवास्र वा नित्यं प्रणमति।। दव सहाग्रेन

तीर्थंकर सज़्भवनाथ प्रतिमा

1. संवत् 1511 जेठ सुद (सुदी)
   5 दनेः सहा
2. वसराजः पछ रावीछः

तीर्थंकर पार्श्वनाथ प्रतिमा

संवत 1548

तीर्थंकर पार्श्वनाथ ताम्र प्रतिमा

1. श्री पारीख सके (साके) 1586 क्रोताप संवतषरें मार्ग खर मासे सुज़्ल पक्ष 11 च (चन्द्रवार) तीर्थकां प्रतिमाः

वा गंजमती वाद वीघानन्द स्वासीस पन्म सगपा अैनुतुर

तीर्थंकर विमलनाथ प्रतिमा

1. संवतु 1885 वैसाव मासे सुज़्ल पछे 2 बुधवासर श्री
2. मलसघे वलात्कारगने सरस्वतीगछे श्री कुदकुंदाचा
3. र्य प्रण (प्रण) रसेद प्रस श्री जिनप्रतिमा प्रतिष्ठतः

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ-प्रतिमा (सफेद पाषाण)

श्रीमूलसंघे बलात्कारगने सरस्वतीगछे कुन्दकुन्दाचार्य प्रा...माथेन वार सिगै गोलापूरव कारीटोरन प्रतिष्ठते फाल्गुन 2 सवद् 1955 सुभं ।

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातज़्व

तीर्थंकर महावीर प्रतिमा

1. श्री मूलसंघे बलात्कारगने सरस्वतीगच्छे श्री कुंदकुंदाचार्य आज्ञाये-वार (वीर) निर्वाण संवत्सरे 2440 विक्रम संवत् 1971 वैशाख सुदी 11 वुद्धै प्रतिष्ठतम् नग्र सोजना मध्ये माथ स्वाई–सघै अर्जुन तस्य पुत्र सूरचन्द न्याइ गोलापूरव वंश फुसकेले तत्र...नित्य प्रणयत्।

तीर्थंकर शान्तिनाथ-प्रतिमा

1. संवत् 2027 विक्रमाज़्दे फाल्गुन मासे कृष्णपक्षे षष्ठी भौमवासरे कुंदकुंदाज़्नाये सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे टीकमगढ़ मंडलान्तर्गत नैकोरावासी सवाई सेठ रघुनन्दनलालस्तस्य भ्रातृजा बालचन्द्र-

2. भागचन्द्र छज़्कीलाल राजधरलाल बल्देव प्रसादै श्री शान्तिनाथ जिनेन्द्रस्य बिज़्बं अहार क्षेत्रस्य ज्ञानरथ महोत्सवे बिज़्ब प्रतिष्ठाप्य नवागढ़क्षेत्रे स्थापितम्।

7. तीर्थंकर आदिनाथ-प्रतिमा

1. ॐ नमः सिद्धेज़्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाज़्दे 2511 विक्राज़्दे 2041 माघ मासे शुज़्ल पक्षे 14 सोमवासरे मूलसंघे दि. जैन कुंदकुंदाचार्याज़्नाये बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री दि. जैन नवागढ़।

2. अतिशयक्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्य वाणीभूषण धर्मरत्न संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र

3. 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्यत्वे समर्रा वास्तव्यः गोलापूर्वान्वये फुसकेले वंशोत्पन्न स सिं. स्नेहलता ध.प. बाबूलाल प्रतिष्ठाप्यतोऽयं जिनबिज़्ब।

4. श्री जैन मन्दिरे प्रतिष्ठापितः लोक कल्याणाय भवतु।

तीर्थंकर कुंथुनाथ-प्रतिमा

1. ओं नमः सिद्धेज़्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाज़्दे 2511 विक्रमाज़्दे 2041
2. माघ मासे शुज़्ल पक्षे 14 सोमवासरे मूल संघे दि. जैन कुंदकुंदाचार्याज़्नाये
3. बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री दि. जैन नवागढ़ अतिशयक्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र
4. पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्य वाणीभूषण धर्मरत्न

5. संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र प्रतिष्ठाचार्यत्वे
6. घुवारा वास्तव्य गोलापूर्वान्वये गड़ौले वंशोत्पन्न स्व. दरयावलाल तस्य पुत्रः सिंघई
7. प्यारेलाल एवं धर्मपत्नी रूपाबाई आत्मजा सोजना वास्तव्य फुसकेले वंशोत्पन्न स्व.
8. सेठ दरयावलाल धर्मपत्नी तेजाबाई प्रतिष्ठापितोऽयं जिनबिम्बः श्री जैन मन्दिरे
9. प्रतिष्ठापितः श्री दि. जैन नवागढ़ क्षेत्रे लोककल्याणाय भवतु।

तीर्थंकर आदिनाथ-प्रतिमा

1. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2511 विक्रमाब्दे 2041 माघ मासे

2. शुक्लपक्षे 14 सोमवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे

3. श्री दि. जैन नवागढ़ अतिशयक्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे टीकमगढ़

4. वास्तव्य वाणीभूषण धर्मरत्न संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्यत्वे

5. मडावरा निवासी गोलापूर्वान्वय खाग वंशोत्पन्न सेठ वारेवीर तस्य पुत्राः कपूरचन्द्र कमल कुमार

6. प्रेमचन्द्र उदयचन्द्र चि. पवन कुमार प्रतिष्ठापितोऽयं जिनबिम्बः श्री दि. जैन मन्दिरे प्रतिष्ठापितः।

तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा

1. वी. नि. 2511 सं. 2041 माघ मासे शु. पक्षे 14 चन्द्रवासरे मूलसंघे सरस्वतिगच्छे बलात्कारगणे कुंदकुंदाचार्याम्नाये दि. जैन नवागढ़

2. अतिशय क्षेत्रे पंचकल्याणक गजरथ महोत्सवे संहितासूरि प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्येण अजनौर निवासी

3. गोलापूर्वान्वये फुसकेले वंशोत्पन्न केशरबाई ध.प. स्व. मोहनलाल प्रतिष्ठापितोऽयं जिनबिम्बः।

तीर्थंकर पार्श्वनाथ-प्रतिमा

1. वी. नि. 2511 सं. 2041 मा. (माघ) सु. (शुक्ल) पक्षे 14 (चतुर्दश्यां) चन्द्रवासरे मू. (मूल) संघे सर. (सरस्वती) गच्छे बल (बलात्कार गणे) कु., (कुंदकुंदाचार्याम्नाये)

2. श्री दि. जैन नवागढ़ क्षे. (क्षेत्र) पं. कला. (पंच कल्याणक) महो (महोत्सवे) स. सूरि (संहितासूरि) प्र. (प्रतिष्ठाचार्य) पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाप्ये

3. सरोजदेवी ध. प. महेश डेवडिया गोत्रिय बड़ामलहरा प्रतिष्ठाप्य जिनबिम्बः

मन्दिर ऊपरी मंजिल

तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा

1. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2511 विक्रमाब्दे 2041 माघ मासे शुक्ल पक्षे 14 सोमवासरे मूलसंघे दि. जैन कुंदकुंदाचार्याम्नाये बलात्कारगणे

2. सरस्वतीगच्छे श्री दि. जैन नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्य वाणीभूषण धर्मरत्न

3. संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्यत्वे सागर वास्तव्य गोलापूर्वान्वय खाग वंशोत्पन्न स्वर्गीय सेठ गोटीराम तस्य पुत्र सेठ बन्दूलाल ध.प. धर्माबाई समर्रा वास्तव्य गोलापूर्वान्वयी फणीन्द्र वंशोत्पन्न स्व. सि. शीतल प्रसाद तस्य पुत्र बाबूलाल।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ-प्रतिमा

1. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2511 विक्रमाब्दे 2041 माघ मासे

2. शुक्ल पक्षे 14 सोमवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्यान्वये बलात्कारगणे

3. सरस्वतीगच्छे श्री दि. जैन नवागढ़ अतिशयक्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्या...(णक) प्रतिष्ठा गजरथ

4. महोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्यः वाणीभूषण धर्मरत्न संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र

5. 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्यत्वे बामौरकला-निवासी बाबूलाल निर्मल कुमार प्रतिष्ठापितोयंः जिन बिम्बः श्री जैन प्रतिष्ठापितः लोक कल्याणाय भवतुः

तीर्थंकर महावीर प्रतिमा

1. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2511 विक्रमाब्दे 2041

2. माघ मासे शुक्लपक्षे 14 सोमवासरे मूलसंघे दि. जैन कुंदकुंदाचार्याम्नाये बलात्कारगणे

3. सरस्वतीगच्छे श्री दि. जैन नवागढ़ अतिशयक्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याण (णक) प्रतिष्ठा गजरथ

4. महोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्य वाणीभूषण धर्मरत्न संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाबचन्द्र

5. 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्यत्वे ककरवाहा-निवासी गोलापूर्वान्वये चन्देरिया वंशोत्पन्न सि. माणिकचन्द

6. तस्य पुत्रः तुलसीराम बाबूलाल प्रतिष्ठापितोऽयं जिनबिम्ब श्री जैनमन्दिरे प्रतिष्ठापितः।

तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा

1. मङ्गलं भगवान वीरो मङ्गलं गौतमो गणी।
मङ्गलं कुंदकुंदार्यो जैन धर्मोस्तु मङ्गलम्।

2. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2520 विक्रमाब्दे 2050 फाल्गुन मासे कृष्ण पक्षे 6

3. गुरुवासरे मूलसंघे दि. जैन कुंदकुंदाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे साढूमलनगरे

4. श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठामहोत्सवे श्री 108 आचार्य विरागसागर सान्निध्ये।

5. टीकमगढ़ निवासी प्रतिष्ठा दिवाकर संहितासूरि पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' एवं प्रतिष्ठारत्न पं. जगनप्रसाद।

6. पं. जयकुमार निशान्त प्रतिचार्येभ्यः प्रतिष्ठापितोऽयं मुजफ़्फ़रनगर निवासी अग्रवालान्वये।

7. ला. श्रीचन्द्र तस्य पुत्रः रमेशचन्द्र तस्य पुत्रः राजेशकुमारैः श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ जैन मन्दिरे स्थापितम् लोककल्याणाय भवतु।

तीर्थंकर कुंथुनाथ-प्रतिमा

1. मङ्गलं भगवान वीरो मङ्गलं गौतमोगणी।
मङ्गलं कुंदकुंदार्यो जैन धर्मोस्तु मङ्गलम्।।

2. ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2520 विक्रमाब्दे 2050 फाल्गुन मासेः

3. कृष्णपक्षे 6 गुरुवासरे मूल संघे दि. जैन कुंदकुंदाआम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे साढूमलनगरे

4.श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठामहोत्सवे श्री 108 आचार्य विरागसागर सन्निध्ये।

5.टीकमगढ़ निवासी प्रतिष्ठा दिवाकर संहितासूरि पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' एवं प्रतिष्ठारत्न पं. जगनप्रसाद।

6.पं. जयकुमार-निशान्त-प्रतिष्ठाचार्येभ्यः प्रतिष्ठापितोऽयं मुजफ़्फ़रनगर निवासी अग्रवालान्वये

7.ला. श्रीचन्द तस्य पुत्रः रमेशचन्द्र तस्य पुत्रः राजेशकुमारैः श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ जैन मन्दिरे स्थापितम् लोककल्याणाय भवतु

तीर्थंकर शान्तिनाथ-प्रतिमा

1.ओं स्वस्ति श्री वीर नि. (निर्वाण) 2537 वि. (संवत्) 2067 पौ. शु. (शुक्ल) 14 मंगलवासरे कुंदकुंदाचार्याम्नाये श्री नवागढ़ दि. जैन अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ-महोत्सवे

2.आ. (आचार्य) श्री विशुद्ध सागरस्य ससंघ सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्य बा.ब्र. जयकुमार-निशान्त-प्रतिष्ठाचार्यत्वे

3.टीकमगढ़ वास्तव्यः गोलापूर्वान्वये फुसकेले गोत्रोत्पन्ने सेठ विजयकुमारस्य पुत्रः अरुणकुमारस्य पौत्र अर्हम् प्रतिष्ठापितमिदं बिज़्बम्। शुभं भूयात्।

तीर्थंकर आदिनाथ-प्रतिमा

1.ओं नमः सिद्धेज़्यः स्वस्ति श्री वीर नि.(निर्वाण) 2537 वि. (विक्रम संवत्) 2067 पौष शु. (शुज़्ल) पक्षे 14 मंगलवासरे श्री मूलसंघे दिगज़्बर जैन कुंदकुंदाचार्याज़्नाये ललितपुर मंडलान्तर्गते श्री नवागढ़ दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्रे

2.आचार्य श्री विशुद्धसागरस्य ससंघ सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्यः पं. गुलाबचन्द्र पुष्प निर्देशने

3.तस्य पुत्रः बा. ब्र. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे बंडा सागर वास्तव्यः गालोपूर्वान्वये फुसकेले गोत्रोत्पन्ने

4.सेठ शिखरचन्द पुत्रः सेठ रमेशचन्द्रः पौत्राः आनन्दः अमितः अखिलेशः अंकुशः प्रपौत्राः अतिशयः आदिः आलेखः अर्चितः एभि प्रतिष्ठापितमिदं बिज़्बं शुभं भूयात्।

तीर्थंकर अभिनन्दननाथ-प्रतिमा

1.ओं नमः सिद्धेज़्यः श्री वीर नि.(निर्वाण) 2537 वि. (विक्रम संवत्) 2067 पौष शुज़्ल 14 मंगलवासरे श्री मूलसंघे दिगज़्बर जैन कुंदकुंदाचार्याज़्नाये ललितपुर मंडलान्तर्गते श्री नवागढ़ दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्रे

2.गणाचार्य विरागसागरस्य शिष्यः मुनि श्री विश्ववीरसागरः आचार्यश्री विशुद्धसागरस्य ससंघे

3.पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' निर्देशन तस्य पुत्रः प्रतिष्ठारत्न ब्रा. ब्र. जयकुमार 'निशांत' प्रतिष्ठाचार्यत्वे

4.टीकमगढ़ वास्तव्यः परिवारान्वये भारूमूर भारिल्य गोत्रोत्पन्ने बाबूलालस्य पुत्र उज़्मचन्द्रः पौत्राः अरविन्दः नरेन्द्रः डॉ. सचिनः एभिः प्रतिष्ठापितमिदं बिज़्बम् शुभं भूयात्।

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ-प्रतिमा

1.स्वस्ति श्री वीर नि. 2537 वि. 2067 पौष शु. 14 मंगलवासरे कुंदकुंदाचार्याज़्नाये श्री नवागढ़ दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे

2.श्री विशुद्ध सागरस्य ससंघ सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्य बा. ब्र. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे।

वासुपूज्य

ओं नमः सिद्धेज़्यः स्वस्तिश्री वीर निर्वाणाज़्दे 2536 मार्गशीर्ष मासे कृष्ण पक्षे तृतीया तिथौ गुरुवासरे श्रीमूलसंघे दिगज़्बर जैनाचार्य कुन्दकुन्दाचार्या आज़्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे मध्यप्रदेशे अशोक नगरे श्रीमज्जिनेन्द्र जिनबिज़्ब पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे परम पूज्य गणाचार्य श्री विरागसागरस्य तछिष्य, परम पूज्य आचार्य श्री विशुद्धसागरस्य ससंघ सान्निध्ये सहितासूरि पंडित श्री बाबूलाल जैन बाल ब्र. जिनेश शास्त्री निर्देशनाचार्यत्वे बा. ब्र. नरेश कुमार जैन वर्णीगुरुकुल जबलपुर प्रतिष्ठाचार्यत्वे श्री दि. जैन श्रेष्ठिना ब्रा. ब्र. मनोज जी सोलापुर महाराष्ट्र, बा. ब्र. भरतेश जी आरोन गुना म.प्र., बा.ब्र.जितेश जी दुर्ग छज़ीसगढ़ श्री 1008 भगवान् शान्तिनाथ दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ जिला ललितपुर (उ.प्र.) जिनालये नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे प्रतिष्ठापितमिति ते नित्यं प्रणमति इदम् जिनबिज़्बम् लोक कल्याण कारकम् भवतु।

मल्लिनाथ

ॐ स्वस्ति श्री 2542 निर्वाणाज़्दे 2072 विक्रमाज़्दे माघमासे कृष्णपक्षे दशज़्यां तिथौ बुधवासरे श्री दिगज़्बर जैन मूलसंघे कुंदकुंदाचार्याज़्नाये सरस्वति-गच्छे आ. शान्तिसागर (छाणी) परज़्परायां आचार्य सुमतिसागरस्यशिष्यः आचार्य विद्याभूषण सन्मतिसागरस्य षष्ठ पट्टाचार्य ज्ञानसागरस्य ससंघ सान्निध्ये श्री अरनाथ जिनबिज़्ब पंचकल्याणक मानस्तंभ प्रतिष्ठा गजरथमहोत्सवे नवागढ़

(नन्दपुरे) ब्र. जयकुमार निशांत निर्देशने/आगरा वास्तव्यः जैसवालान्वये नायक गोत्रोत्पन्ने भोगी रामस्य पुत्रः मुन्नालालः पौत्र मनोजः एभि प्रतिष्ठापित मिदं बिम्बं। प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्रे नवागढ़ (नन्दपुरे) स्थापितं।

नेमिनाथ

आगरा वास्तव्यः जैसवालान्वये महतिया गोत्रोत्पन्ने विशम्भरदयालस्य पुत्रौ रवीन्द्रकुमारः मनोजकुमारः पौत्रौ ऋषभः शुभांग एभिः प्रतिष्ठापित मिदं बिम्बं। प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्रे नवागढ़ (नन्दपुरे) स्थापितम्।

पार्श्वनाथ

कृष्णानगर दिल्ली वास्तव्यः अग्रवालान्वये मिज़ल गोत्रोत्पन्ने पद्मावती प्रसाद जैन पुत्रः सतीशचन्द्रः पौत्रः अजयकुमारः प्रपौत्र संयम एभिः प्रतिष्ठापित मिदं बिम्बं। प्रागैतिहासिक अतिशय नवागढ़ (नंदपुरे) स्थापितम्।

महावीर

कानपुर वास्तव्यः अग्रवालान्तये भूधरमलस्यपुत्रः रामस्वरूप पौत्रः अशोकः संदीपः राकेशः प्रपौत्रौ सिद्धार्थ ऋषभः एभिः प्रतिष्ठापित मिदं बिम्बं। प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़ (नंदपुरे) स्थापितम्।

मानस्तम्भ के आठों भगवान की प्रशस्ति

ॐ स्वस्तिश्री 2542 वीरनिर्वाणाब्दे 2072 विक्रमाब्दे माघ मासे कृष्णपक्षे दशम्यां तिथौ बुधवासरे श्री दिगम्बर जैन मूलसंघे कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये सरस्वति गच्छे आ. शान्तिसागर (छाणी) परम्परायां आ. सुमतिसागर आ. विद्याभूषण सन्मतिसागरस्य षष्ठपट्टाचार्य ज्ञानसागरस्य ससंघ सान्निध्ये श्री अरनाथ जिनबिम्ब पंचकल्याणक मानस्तम्भ प्रतिष्ठा गजरथमहोत्सवे नवागढ़ (नन्दपुरे) ब्र. जयकुमार निशांत निर्देशने सागरवास्तव्यः गोलापूर्वान्वये फुसकेले गोत्रोत्पन्ने सेठ रमेश कुमारस्य पुत्राः आनन्दः अमितः अखिलेशः अंकुशः पौत्राः अतिशयः आदीशः आलेखः अर्चितः वर्धनः एभिः प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम्। शंभू भूयात् ।

धातु पंचमेरू की प्रशस्ति

1. स्वस्ति श्री वीराब्दे 2521 सं. 2051 माघ मासे कृष्णपक्षे 5 शनिवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे रजवांस नगरे

श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे आ. विरागसागरस्य शिष्य मुनि विशुद्ध सागर, ए.विज्ञान सागर सान्निध्ये टीकमगढ़ नि. संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाबचन्द्र पुष्प बा.ब्र. पं. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे रजवांस निवासी गोलापूर्वान्वये चन्देरिया गोत्रोत्पन्न ज्ञानचन्द्र धन्नालाल राजेन्द्र कुमार रमेश कुमार चि. रोहित राहुल मातेश्वरी कामनी इत्येतैः प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम् रजवांस दि. जैन मन्दिरे स्थापितम्।

2. स्वस्ति श्री वीराब्दे 2521 सं. 2551 माघ मासे कृष्णपक्षे 5 शनिवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे रजवांस नगरे श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे आचार्य विरागसागरस्य शिष्य मुनि विशुद्ध सागर, ए. विज्ञान सागर सान्निध्ये टीकमगढ़ नि. संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाबचन्द्र पुष्प बा. ब्र. पं. जयकुमार निशांत प्रतिष्ठाचार्यत्वे । राजवांस निवासी गोलापूर्वान्वये फुसकेले गोत्रोत्पन्न सेठ लखमीचन्द दीपचन्द्र उज़मचन्द्र किशनचन्द इत्यै प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम् राजवांस दि. जैन मन्दिरे स्थापितम्।

3. स्वस्ति श्री वीराब्दे 2521 सं. 2051 माघ मासे कृष्णपक्षे 5 शनिवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे रजवांस नगरे श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे आचार्य विरागसागरस्य शिष्य मुनि विशुद्ध सागर, ए. विज्ञान सागर सान्निध्ये टीकमगढ़ नि. संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाबचन्द्र पुष्प बा. ब्र. पं. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे/खुरई निवासी परवारान्वये लालूमूर वाझल्ल गोत्रोत्पन्न चौधरी प्रेमचन्द्रस्य पुत्रः धनकुमार पी.डी. बाझल्ल प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम् रजवांस दि. जैन मन्दिरे स्थापितम्।

4. स्वस्ति श्री वीराब्दे 2521 सं. 2051 माघ मासे कृष्णपक्षे 5 शनिवारवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे रजवांस नगरे श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे आ. विरागसागरस्य शिष्य मुनि विशुद्ध सागर, ए.विज्ञान सागर सान्निध्ये टीकमगढ़ नि. संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाबचन्द्र पुष्प बा.ब्र. पं. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे। रजवांस निवासी गोलापूर्वान्वये चन्देरिया वंशोत्पन्न

सिं. शीतल प्रसादस्य पुत्रः सुमत कुमार ध.प. आशा प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम् रजवांस दि. जैन मन्दिरे स्थापितम्।

5. स्वस्ति श्री वीराब्दे 2521 सं. 2051 माघ मासे कृष्णपक्षे 5 शनिवारवासरे मूलसंघे दि. जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे रजवांस नगरे श्री मज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिन प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे आ. विरागसागरस्य शिष्य मुनि विशुद्ध सागर, ए. विज्ञान सागर सान्निध्ये टीकमगढ़ नि. संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाबचन्द्र पुष्प बा.ब्र. पं. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे। रजवांस निवासी महिला समाजैः प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बम् दि. जैन मन्दिरे स्थापितम्।

तीर्थंकर श्री आदिनाथ जी प्रतिमा

ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2537 विक्रमाब्दे 2067 पौष मासे शुक्ल पक्षे 14 मंगलवासरे श्री मूलसंघे दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये सरस्वतीगच्छे भारतदेशे उत्तरप्रदेशे ललितपुर मंडलान्तर्गते श्री नवागढ़ दिग. जैन अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे गणाचार्य श्री विरागसागरस्य शिष्याः मुनिश्री विश्ववीरसागरः आचार्य श्री विशुद्धसागरः तस्य शिष्याः मुनि श्री मनोज्ञसागर प्रमेयसागर प्रशमसागर प्रत्यक्षसागर सुप्रभसागर सुब्रत सागर सुयश सागरस्यः सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्यः प्रतिष्ठा दिवाकर संहितासूरि पं. गुलाबचन्द 'पुष्प' निर्देशने तस्य पुत्रः प्रतिष्ठारत्न बा. ब्र. जयकुमार 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्यत्वे, मुजफ्फरनगर वास्तव्यः अग्रवालान्वये गर्ग गोत्रोत्पन्ने रमेशचन्द्रस्य पुत्र राजेशकुमारस्य पुत्रौ ऋषभकुमार सनतकुमार एभिः प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बं श्री दिगम्बर जैन नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे स्थापितं लोक कल्याणाय भवतु।

श्री भरत स्वामी जी प्रतिमा

ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2537 विक्रमाब्दे 2067 पौष मासे शुक्ल पक्षे 14 मंगलवासरे श्रीमूलसंघे दिगम्बर जैन कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये सरस्वतीगच्छे भारतदेशे उत्तरप्रदेशे ललितपुर मंडलान्तर्गते श्रीनवागढ़ दिग. जैन अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक जिनबिम्ब प्रतिष्ठा गजरथमहोत्सवे, गणाचार्य श्री विरागसागरस्य शिष्याः मुनिश्री विश्ववीरसागरः आचार्य श्री विशुद्धसागर

तस्य शिष्याः मुनि श्री मनोज्ञसागर प्रमेयसागर प्रशमसागर प्रत्यक्षसागर सुप्रभसागर सुव्रतसागर सुयश सागरस्यः सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्यः प्रतिष्ठा दिवाकर संहितासूरि पं. गुलाबचन्द 'पुष्प' निर्देशने तस्य पुत्रः प्रतिष्ठारत्न बा. ब्र. जयकुमार 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्यत्वे, मेरठ वास्तव्यः अग्रवालान्वये गोयल गोत्रोत्पन्ने मूलचन्द्रस्य प्रथम पुत्रः सुनीलः तस्य प्रथम पुत्रः अंकितः पौत्रौ आगमः, प्रशमः, द्वितीय पुत्र विकासः पौत्रः ओजसः मूलचन्द्रस्य द्वितीय पुत्रः प्रवीणः तस्य पुत्रः आकिंचन एभिः प्रतिष्ठापितमिदं बिम्बं श्री दिगम्बर जैन नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे स्थापितं लोक कल्याणाय भवतु।

श्री बाहुबली भगवान्

ओं नमः सिद्धेभ्यः स्वस्ति श्री महावीर निर्वाणाब्दे 2511 विक्रमाब्दे 2041 माघ मासे शुक्ल पक्षे 14 सोमवासरे श्री मूलसंघे दिग. जैन कुंदकुंदाचार्याम्नाये बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्री दिग. जैन नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा गजरथ महोत्सवे, श्री 108 मुनिराज नेमिसागर सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्यः वाणीभूषण धर्मरत्न संहितासूरि प्रतिष्ठारत्न प्रतिष्ठातिलक पं. गुलाब पुष्प प्रतिष्ठाचार्यत्वे रामटोरिया वास्तव्यः गोलापूर्वान्वये चन्देरिया वंशोत्पन्ने सिं. नरेन्द्र कुमार कपूरचन्द्र जिनेशकुमार चन्द्रेशकुमार एवं पथराई वास्तव्यः सि. बेनीप्रसाद तस्य पुत्रः महेन्द्रकुमार चिं. नवीनकुमार प्रकाश चन्द्र प्रतिष्ठापितमिदं जिनबिम्बम् श्री जैन मन्दिर प्रतिष्ठापितः लोक कल्याणाय भवतु।

श्री सुपार्श्वनाथ-श्वेत पाषाण पद्मासन

ओं स्वस्ति श्री 2546 महावीर निर्वाणाब्दे 2076 विक्रमाब्दे फाल्गुन शुक्ल पक्षे एकम् सोमवासरे प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव भगवतः परम्परायां चतुर्विंशति तीर्थंकर महावीर भगवतः शासनकाले श्री दि. जैन मूलसंघे कुन्दकुन्दाचार्याम्नाये सरस्वतीगच्छे बलात्कारगणे आचार्य आदिसागर (अंकलीकर) परम्परायां गणाचार्य विरागसागरस्य शिष्यः श्रमणाचार्य विनिश्चयसागरस्य ससंघ सान्निध्ये उत्तरप्रदेशे ललितपुर जिलान्तर्गते प्रागैतिहासिक अतिशय नवागढ़ क्षेत्रे पंचकल्याणक प्रतिष्ठामहोत्सवे टीकमगढ़ वास्तव्यः प्रतिष्ठाचूड़ामणि ब्र. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्यत्वे मैनवार वास्तव्यः टीकमगढ़ निवासिनः गोलापूर्वान्वये फुसकेले

गोत्रोत्पन्ने हल्काई लालस्य पुत्रौः ज्ञानचन्द्रः देवेन्द्रः पौत्राः अखलेशः आशीषः अक्षयः अंकुरः प्रपौत्रौ अंशः अनयः एभिः प्रतिष्ठापितमिदं बिज़्बम्। शुभंभूयात्।

चन्द्रप्रभ पद्मासन पाषाण 21

ओं नमः सिद्धेज़्यः श्री वीराज़्दे 2524 वि. सं. 2054 मार्गशीर्ष शुज़्ल पक्षे 7 शनिवासरे श्री मूलसंघे दिगज़्बर जैन कुंदकुंदाचार्याज़्नाये बलात्कारगणे सरस्वतिगच्छे मध्यप्रदेशे टीकमगढ़ नगरे श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक प्रतिष्ठा महोत्सवे आचार्य श्री 108 आदिसागर अंकलीकरस्य तृतीय पट्टाधीश आचार्य श्री सन्मतिसागर ससंघ सान्निध्ये टीकमगढ़ वास्तव्यः संहितासूरि प्रतिष्ठा दिवाकर पं. गुलाब चन्द्र 'पुष्प', पं. जगन प्रसाद, पं. मूलचन्द्र, ब्र. जयकुमार निशान्त प्रतिष्ठाचार्येण कुज़्हैड़ी निवासी सिंघई दीपचन्द्र हीरालाल, सन्तोष कुमार एवं सकल दिगज़्बर जैन इत्यतै, श्री दिगज़्बर जैन नवागढ़ अतिशय क्षेत्रे स्थापितमिदं जिनबिज़्बं शुभं भूयात्।

पाषाण खण्ड : साबु पाहल

उपाध्याय परमेष्ठी : स्य (तस्य) न (नमः) श्रीरत सं. 1188

पद्मप्रभ : साहु लि लष्मा प्रलमति नित्यं

श्रेष्ठी पाहल : साहु श्री संघधनस न्यास कला

आदिनाथ आसन - 1202

आदिनाथ - संवतु स 1123........

- श्वेत मार्बल खंडित पार्श्वनाथ -

संवत् 1548 वर्ष वैशाख सुदा 3 श्री मूलसंघे नाटाराम.... जा श्रा जैन चन्द्रदेव साहा जवराज पापड़ावाल नीता प्रण नता राजा..... संघ सैहर मुकासा ।

बगाज टोरिया चट्टान पर - स्वस्तिस्री स्य ज्नाहतश्रि सोमे

- खंडित चंद्रप्रभ पीतल - संवतु 1688

सन्दर्भ—

१. मुले, गुणाकार, भारतीय लिपियों की कहानी, पटना 1974, पृ. 19
2. वही, वूली सी एल दि सुमेरियन्स, पृ. 189
3. वही
4. पांडेय राजबली, इंडयिन पेल्योग्राफी, भाग प्रथम (1952) पृ., 31
5. वही एवं दीक्षित के एन प्री हिस्टोरिक सिविलाइजेशन आफ इंडस वेली पृ. 46
6. बूहलर जी इण्डियन पेल्योग्राफी (1959) पृ. 15, पाण्डेय राजवली उक्त पृ. 3
7. वही
8. वही
9. वही एवं सी यू की 1,77 (वील द्वारा अनुदित)
10. पाण्डेय राजबली इण्डियन पेल्योग्राफी पृ 4,
11. सरकार डी सी इंडियन एपीग्राफी
12. रमेश के वी इण्डियन एपीग्राफी भाग-प्रथम 1984 पृ. 1-2
13. सरकार डी सी सिलेज़्ट इन्क्रप्संस पृ. 254
14. वही पृ. 288
15. वही पृ. 288
16. एपिग्राफिया इंडिया भाग 6, पृ. 1-2
17. आदि पुराण, आचार्य जिनसेन, श्लोक 141 से 145
18. त्रिलोकसार, आचार्य नेमिचंद, श्लोक 823
19. हाथी गुज़्फा अभिलेख, 42

नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखीय साक्ष्यों के आधार पर सामाजिक एवं धार्मिक परिदृश्य का समीक्षात्मक अध्ययन

सामाजिक परिदृश्य

समाज एक महज़्वपूर्ण संस्था है यह अतीत के तथ्यों एवं विचारों का उद्‌बोधन है। 'महाजनो ऐन गतो सा पन्थाः' यह वाज़्यांश आज भी समाज के लिए एक उदाहरण है। समाज के लिए कई परिभाषाएँ प्रचलित हैं जिसका आधार सामाजिक वर्गीकरण, जाति विभाजन एवं कार्यकलाप पर निर्भर है। भारतीय संस्कृति के आचार-विचार, कार्यशैली, सांस्कृतिक मान्यताएँ और मानवीय विचारों का आदान-प्रदान ही समाज को प्रस्तुत करता है । इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत विभिन्न तथ्यों का अंकन किया गया है। यथा-वर्ण तथा आश्रम व्यवस्था, शिक्षा, स्थापत्य कला, विवाह, नारी स्थिति, भोजन तथा पेय, वज़्भरण, उत्सव एवं रीति-रिवाज, आस्था एवं विश्वास एवं मनोरंजन आदि । उपरोक्त सभी विषयों द्वारा नवागढ़ के सामाजिक परिप्रेक्ष्य को उजागर करने का प्रयास किया गया है।

वर्ण व्यवस्था

वर्ण अथवा वरण शज़्द में समानता है जिसका अर्थ होता है वरण करना। वर्ण शज़्द की संस्कृत व्युत्पज़ि वृत्र, वरण या वारी धातु से हुई है, जिसका अभिप्राय दूसरे शज़्दों में रंग अथवा वर्ण से है।

वर्ग अथवा श्रेणी अर्थ में भी वर्ण शज़्द का अभिप्राय माना जाता है। जो स्वयं द्वारा चयनित विशिष्ट व्यवसाय से आबद्ध होता है। प्रत्येक क्षेत्र की वर्ण व्यवस्था उस समाज के परिस्थिति, देश-काल एवं वर्गीकरण के वैशिष्टय को दर्शाता है। मानवीय सामाजिक गतिविधियाँ अपनी विलक्षण विशेषताओं के कारण अन्य वर्णों से अपनी मान्यता पृथक कर लेती हैं।

भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था वैदिक काल से ही चली आ रही है। ऋग्वेद में पुरुष सूक्त के अनुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र की उत्पज़ि विराट पुरुष के मुख, बाह, जंघा एवं चरणों से उत्पन्न मानी जाती है।

ब्राह्मण – समाज में इनका स्थान सर्वोच्च माना जाता है। धर्मशाज़ में इन्हें

दृश्य शक्ति का अवतार कहा गया है। जैन एवं बौद्ध धर्म के प्रचार-प्रसार पूर्व तक ब्राह्मण वर्ण को समाज में अति मान-सज़्मान प्राप्त था। इसकी दो श्रेणियाँ थी - 1. आध्यात्मिक संत बाह्मण, 2. सांसारिक ब्राह्मण।

जहाँ आध्यात्मिक ब्राह्मण तपस्वी एवं कर्मकांड कृत्य करने वाले पुजारी हुआ करते थे। उन्हें समाज में सज़्मान प्राप्त था, वही सांसारिक ब्राह्मण धार्मिक कृत्यों का परित्याग कर क्षत्रियों एवं वैश्यों के साथ व्यवसाय किया करते थे।

क्षत्रिय – इनका समाज में द्वितीय स्थान था। इनका कार्य वर्णों की रक्षा करना था। सामाजिक नियमों, विधियों को लागू करना, अधर्मियों के दंड देना आदि समाज में इनके मुज़्य कार्य थे। छठी शताज़्दी ईस्वी पूर्व महावीर भी क्षत्रिय वर्ग के अन्तर्गत आते हैं।

वैश्य – वैश्यों की जीविका का मुज़्य साधन व्यवसाय अथवा कृषि कार्य था। इनका स्थान क्षत्रियों के पश्चात् आता है। कौटिल्य के अर्थशाज़ में वैश्यों का मुज़्य कार्य पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना एवं कृषि करना बताया गया है।

शूद्र – ये समाज में निज़्न कोटि के मान जाते थे। इनका प्रमुख कार्य सभी वर्णों की सेवा करना था। वृद्धारण्यक उपनिषद् में शूद्रों को पूषण कहा गया है । पूषण वैश्यों को समान अपनी आय का एक भाग कर्ज स्वरूप समाज को प्रदान किया करते थे। समाज द्वारा इस वर्ण के लोगों का विद्या ग्रहण और सैनिक बनने पर निषेध था। साहित्यिक तथ्यानुसार कालान्तर में शूद्रों के लिए दास शज़्द का उपयोग होने लगा और वर्तमान में दास शज़्द गुलाम शज़्द से अभिहित है ।

आश्रम व्यवस्था

आश्रम शज़्द श्रम धातु से व्युत्पन्न है । यह प्राचीन समाज का महज़्वपूर्ण अंश है। मानव जीवन के सौ वर्षों को चार भागों में पच्चीस-पच्चीस वर्षों की अवधि में विभक्त किया गया है। यथा-

ब्रह्मचर्य आश्रम - 1 से 25 वर्ष

गृहस्थ आश्रम - 25 से 50 वर्ष

वाण्यप्रस्थ आश्रम - 50 से 75 वर्ष

संन्यास आश्रम - 75 से 100 आश्रम

जबालोपनिषद में सर्वप्रथम इस आश्रम शज़्द का उल्लेख हुआ है । प्राचीन काल में गृहस्थाश्रम के साथ-साथ वाण्यप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम भी मनुष्य के लिए अनिवार्य था। समयानुसार आश्रम व्यवस्था में कई बदलाव समाज में दिखलाई पड़ते थे। यथा- गृहस्थ आश्रम के पश्चात् संन्यास आश्रम का ग्रहण करना जैसै जैन तीर्थंकर महावीर ने किया।

परिवार

परिवार हिन्दू समाज की अन्तिम और सबसे महज़्वपूर्ण इकाई था। मध्ययुग में इसके स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं हुआ था। मौलिक रूप से परिवार के संघटन में पति, पत्नी तथा माता और उसकी सन्तानें सज़्मिलित थीं। लेकिन बड़े परिवार की भावना क्रमशः बढ़ती जा रही थी। चारों वर्णों के पारिवारिक आचार और रीतियों में पर्याप्त विभिन्नता पाई जाती थी। रहन-सहन-स्थिति और कुल व्यवहार सभी भिन्न-भिन्न थे। फिर ज़ी सज़ी परिवारों में वृद्ध पिता अथवा पितामह ही प्रधान माना जाता था। विग्रह और पारिवारिक विवाद उत्पन्न होने पर वही अन्तिम सामाजिक अधिकारी माना जाता था। जीवन की ऊँची साधनाओं के लिए परिवार एक अनिवार्य सीढ़ी माना जाता था।

ब्राह्मणों को यह स्वतन्त्रता प्राप्त थी कि उपजीविका के लिए वे शेष तीन वर्णों के कार्य भी अपना सकें–वे जैविक या अन्य सरकारी नौकरियाँ निज़्न कोटि की भी सहर्ष ग्रहण कर लेते थे। लेकिन विद्योपार्जन और पांडित्य का व्यवसाय तो उन्हीं के हाथों में था। ''कुछ व्यज़्ति ऐसे हैं जो धर्म और विज्ञान परिचर्या में लगे हैं, जो राजाओं के दरबार में रहते हैं, कुछ ज्योतिर्विद, दार्शनिक और निमिज़क भी होते हैं।''[1] यद्यपि धर्म और विद्योपार्जन ब्राह्मणों के और शस्त्र क्षत्रियों के व्यवसाय थे किन्तु कुछ ऐसे भी क्षत्रिय थे जो विद्या व्यवसाय में संलग्न थे। क्षत्रिय अबोध रूप ये वेदों और शास्त्रों का अध्ययन करते थे। पराशर स्मृति से ज्ञान होता है कि कितने ही ब्राह्मण और क्षत्रिय कृषि व्यवसाय में लगे थे। सचमुच प्राचीन युग में जहाँ केवल वैश्य ही कृषक थे, वहाँ मध्ययुग में वैश्य कृषि कार्य से एकमात्र विरत हो गये और शूद्रों के साथ ब्राह्मणों और क्षत्रियों ने इसे हस्तगत कर लिया और वह ही आज प्रमुख कृषक हैं।[2]

विवाह

हिन्दुओं के सामाजिक जीवन का प्रमुज़ अवयव विवाह है, जिसे सर्वदा से अत्यन्त महज़्व का स्थान प्राप्त है। प्राचीन और मध्यकालीन भारत के हिन्दुओं के लिए तो यह केवल यौन सज़्बन्ध नहीं था, यह दो व्यज़्तियों का संघटन था जो साथ होते ही व्यज़्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक और राष्ट्रीय कर्तव्यों के उदाज़ दायित्व से आबद्ध हो जाते थे। एक हिन्दू जब तक विवाहित नहीं हो जाता था पूर्ण हिन्दू नहीं माना जाता था। इसीलिए ये विवाह धार्मिक क्रिया भी था। समाज यदि वैवाहिक सूत्रों में न आबद्ध हो तो सुव्यवस्थित रूप से संचालित भी नहीं हो सकता। अतः एक हिन्दू के लिए विवाह सामाजिक कर्ज़व्य था। प्राचीन युग से मध्ययुग में तो विवाह पद्धति से गुरुतर परिवर्तन हुए। मनु ने जो व्यवस्था दी थी उसमें ब्राह्मण को क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कन्या से विवाह करने का अधिकार था किन्तु मध्ययुग में शूद्र कन्या का विवाह ब्राह्मण या अन्य उच्च वर्ण से वर्जित हो गया था। यह धारणा सामान्य व्यवहार में परिणत हो गयी फलतः आगे चलकर वर्णोतर विवाह एकमात्र निषिद्ध हो गया। जहाँ-तहाँ केवल वाचाल और उच्चस्तरीय ब्राह्मण क्षत्रिय या वैश्य कन्या प्राप्त कर लेते थे।

बाल विवाह

हिन्दू समाज में बाल विवाह का प्रादुर्भाव कब हुआ–यह प्रामाणिक रूप से नहीं कहा जा सकता। परन्तु मध्ययुग के उज़रकाल में यह अज़्यास प्रचलित हो चुका था। अलबरूनी का कथन है, ''हिन्दू अल्प वय से ही विवाह कर देते हैं। विवाह की व्यवस्था माता पिता करते हैं।'' (*1. सज़्भव, भाग 2, अ, 19, पृ. 155*) पराशर स्मृति में सामान्य रूप से कन्या के विवाह के लिए आठ वर्ष की अवस्था ठीक बतलाई गयी है। (*2. अष्टवर्षसिद्धहंत।*)

विधवा विवाह

विवाह सूत्र ग्रन्थों और वेदों में आर्यवंश में विधवा के लिए विवाह मना किया गया था। उस युग में विधवाओं का विवाह नहीं हो सकता था। किन्तु यह कथन केवल प्रौढ़ और वृद्ध विधवाओं के सज़्बन्ध में ही मान्य प्रतीत होता है।

बहु विवाह प्रथा

हिन्दुओं में बहुविवाह परज़्परागत प्रथा थी। राजा तो इच्छानुकूल जितने चाहें विवाह करते थे। किन्तु समाज का एक साधारण आदमी तो एक ही विवाह करता था। धनी और समृद्धिशाली व्यज़्ति अवश्य ही इच्छा होने पर कई स्त्रियाँ रखते थे। तलाक की मान्यता कभी हिन्दुओं में नहीं हुई। उस समय तो इसका कोई संकेत भी नहीं मिलता।

नारी की स्थिति

''यत्र नार्यस्तु पूज्यते रमन्ते तत्र देवता।'' यह उज़्ति उस समय प्रचलित थी, फलतः धार्मिक कार्यों में, समाज में स्त्रियों को उच्च स्थान प्राप्त था। परन्तु धीरे-धीरे स्त्रियों के सज़्मान, गौरव, गरिमा और अधिकारों का हनन होने लगा। समाज सुधारकों ने स्त्रियों के सज़्मान के लिए समाज को जागृत किया। अतः स्त्रियों की स्थितियों में धीरे-धीरे सुधार होना प्रारज़्भ हुआ।

अलबरूनी का यह कथन सर्वदा उचित है कि प्रत्येक पारिवारिक व्यवस्था और असाधारण स्थितियों में स्त्रियों का परामर्श बड़ी निष्ठा से लिया जाता था। उनकी राय का महज़्व होता था। उन्हें शिक्षा दी जाती थी। शिक्षिता की मर्यादा समाज में स्थापित थी।

भोजन और पेय

तत्कालीन समाज के विभिन्न अंगों का परिशीलन करने से प्रकट होता है कि हिन्दुओं के भोजन और पेय भी विशेषताओं से भरे थे। चन्देलों के दानपात्रों के वर्णन में ज्ञात होता है कि समाज के सामान्य भोजन में विविध अन्न, चीनी, दूध, घी और फल सज़्मिलित थे। किन्तु बौद्ध धर्म के विलोप के साथ मांसाहारी व्यज़्तियों का द्रुतगति से बढ़ावा हो रहा था। साधारणतया ब्राह्मण मांस भक्षण के

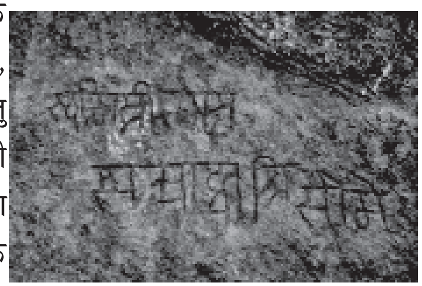

विरोधी थे किन्तु सज़ी नहीं। अलमसउदी का कथन है कि वे (ब्राह्मण) किसी भी पशु का मांस नहीं खाते थे । स्मृतियों से भी प्रकट होता है कि ब्राह्मण साधारणतया मांस खाने वाले नहीं थे। गाय तथा महाकाय सिंह आदि पशुओं का मांस खाने में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी को रुकावट थी। किन्तु शेष तीन वर्णों द्वारा अन्य पशुओं का मांस खाया जाता था।

विशेष महज़्व की बात यह है कि उस समय उच्च जातियों को एक-दूसरे के यहाँ भोजन करने में कोई आपज़ि नहीं थी। एक ब्राह्मण किसी क्षत्रिय या वैश्य के यहाँ भोजन करता–तो इसके विरुद्ध कोई व्यवस्था नहीं थी और न इसे अनुचित माना जाता था । 'मध्ययुग में विभिन्न जातियों और उपजातियों के बीच सीमित विवाह सज़्बन्ध के समान उस समय खान-पान की उदारता ने भारतवर्ष के विज़िन्न भागों में एकता का भाव भरने में कोई विशेष बल दिया। इस युग के अन्त में अस्पृश्यता की भावना को वृद्धि के साथ-साथ खान-पान में ज़ी अनुदारता आती गयी और संकोच होता गया।

भारतवासी मद्य के आदी नहीं थे। प्राचीन युग में ब्राह्मण तो प्रत्येक मादक पेय से सर्वथा मुज़्त था। अरब यात्रियों ने क्षत्रियों के सज़्बन्ध में भी ऐसा ही लिखा है। अलमसउदी लिखता है–''हिन्दु मद्यपान से निवृज़ है और सेवन करने वालों की निन्दा करते हैं। यदि यह सिद्ध हो जाय कि राज ने मद्य सेवन किया है तो उसका राजमुकुट छिन जाता है। ज़्योंकि यह समझा जाता है कि उसका मस्तिष्क मद्य से प्रभावित है। अतः वह शासन करने योग्य नहीं है।''[3] इन कथनों के होते हुए ज़ी ऐसा ज्ञात होता है कि क्षत्रिय धार्मिक निर्देशों से मद्यपान न करने के लिए अपने को बाध्य नहीं समझते थे। मद्यपान को समाज में अत्यन्त घृणा की दृष्टि से देखा जाता था। उसका रंचमात्र भी सज़्मान नहीं था। अपने स्तर के समाज में भी उसको स्थान नहीं प्राप्त था।

साधारण लोगों की आर्थिक व्यवस्था सज़्पन्न थी अतः लोग भोजन और सौज़्य से भरा जीवन व्यतीत करते थे।

वस्त्राभरण

जेजाकभुक्ति से एक विशेष प्रकार के वस्त्राभरण का विकास हो रहा था। साहित्य के माध्यम से ऐसे स्पष्ट संकेत प्राप्त हुए हैं। पुरुष एवं स्त्री अधोज़ाग में नीचे तक की लज़्बी धोती, कुची, ताला या परदनी पहनते थे। घुटन्ना पहनने की परिपाटी भी पुरानी है। अलबरूनी का जैसा कथन है, भारतवासी अपेक्षाकृत कम वस्त्र पहनते थे। वो धोती पगड़ी सामान्य पोशाक था। अधोवस्त्रों में पैजामे का प्रयोग प्रचलित होने लगा था। ऊर्ध्व वस्त्रों में पुरुष मिरजई और बगलबन्दी के ढंग का वस्त्र पहनने थे। स्त्रियाँ फतुही और अंगरखा पहनती थीं। स्त्रियों के अधोवस्त्र कई प्रकार के मिलते हैं। वे बहुधा रंगीन नस्ल ही पहनती थीं।

आभूषण पहनने की चाह इस देश में प्राचीन है। स्त्री-पुरुष, वृद्ध-बालक, सम्राट-विपन्न सभी नाना प्रकार के आभूषण पहनते थे। उनके पहने जाने वाले आभूषणों में और धातुओं में अन्तर अवश्य था। आभरण प्रायः सोने, चाँदी, कांसा, काँच और पीतल आदि धातुओं के बनते थे। सीप और शंख आदि के भी आभूषण वनवासी पहना करते थे। कर्णफूल, कंठहार और चूड़ियाँ तो भारतवर्ष भर में स्त्रियों के प्रिय आभूषण थे। बुन्देलखंड के भाग में आभूषणों का प्रचलन उस समय अपेक्षाकृत अधिक था। स्त्रियाँ और बालक पैर में पैंजना, सांकर, बिछिया और अनोटा पहनते थे। गले में मूल्यवान कंठहार, खंगरिया और हमेल की भाँति को आभूषण पहनते थे। हाथ को भी विविध आभूषणों से सजाया जाता था। हाथ के लोकप्रिय आभूषणों में खग्गा और बस था। कान और सिर को वे मनोहर भूषणों से अलंकृत करते थे।[4] इन आभूषणों में कर्णफूल, सांकर, राशिफूल और सींग आदि हैं। हाथ की अंगूठी, माला आदि का स्त्री पुरुष दोनों प्रेम से पहनते थे।

भारतवासियों के तत्कालीन पहनावे की चर्चा करते हुए **अलबरूनी** में भी इसका वर्णन किया है।[5] उस समय के निवासी विशेषकर बुन्देलखंड के पान का सेवन करते ये–अधिकतर तो मुखाकृति को शोभन बनाने के लिए और कुछ आदत से विवश होकर। स्त्री-पुरुष दोनों केश प्रसाधन करते थे। साधन को अनेक

विधियाँ प्रचलित थीं। स्त्रियाँ फूल शाखाओं से भी केश अलंकृत करती थी। प्रकृति साहचर्य का बड़ा ही उत्कृष्ट लोभ उस समय लोगों में था। स्त्रियाँ प्राकृतिक विभूतियों के सान्निध्य और सज़्पर्क से अपने सौन्दर्य को और भी उद्दीप्त बनाती थीं।

रीति-रिवाज

जेजाकभुक्ति के लोगों का रीतियों का बड़ा हृदयग्राही विषय है। सामाजिक रीतियों के आतिथ्य सर्वोच्च स्थान दिया जाता था। जैसा कि अरब इतिहासकारों और **अलबरूनी** के विवरण से पता चलता है कि भारतवासी अपने ही लोगों के प्रति नहीं, हर किसी के प्रति जो उसके यहाँ आ जाता था–बड़े ऊँचे आतिथ्य भाव प्रकट करते थे। ब्राह्मण के घर पर यदि कोई बाहर से आता तो द्वार के भीतर प्रवेश करने से पूर्व पाद प्रक्षालन करना पड़ता था।[6] ब्राह्मणों का सबके द्वारा समादर और पूजन होता था। आतिथ्य की हिन्दुओं की अपनी परज़्परा न केवल उत्कृष्ट थी बल्कि अन्य देशों के निवासियों से भी विशिष्ट थी।

विविधि धर्मों के अनुयाइयों में अलग-अलग सामाजिक रीतियाँ रूढ़ हो गयी ... पान, सामाजिक पर्व मनाने, धार्मिक कृत्यों को करने की विविध ...लित थीं। जेजाकभुक्ति में कृषिकार्य से सज़्बन्धित अनेक रीतियाँ ... वैशाख सुदी तीज 'कृषिवर्ष' का आरज़्भ माना जाता है। उस दिन खेत और मिट्टी की पूजा की जाती थी और बीज बोना भी आरज़्भ कर दिया जाता था। वर्तमान अखती और हरैता त्यौहारों का जन्म इसी रीति से हुआ। देवशयन का भी सज़्बन्ध खेती से जोड़ा गया था। आषाढ़ सुदी ग्यारस को देवशयन फिर कार्तिक सुदि ग्यारस को देव जागरण इन दोनों अवसरों पर कृषि सज़्बन्धी पूजा अनेक रीतियों से होती थीं। बालिकाओं और पशुओं के पूजने की रीतियाँ भी प्रचलित थीं।

आस्था एवं विश्वास

भारतीय संस्कृति में संस्कारों एवं कर्मकांडों का भारी महज़्व बतलाया गया है। जीव के गर्भ में आने से मृत्यु तक सोलह संस्कार करने आवश्यक माने जाते हैं। धर्म ग्रन्थ व्यक्ति को मोक्ष हेतु नाना प्रकार के कर्मकांड करने की प्रेरणा देते

हैं। पंडितों, ब्राह्मणों को दान देने पर जोर दिया गया है। नरक के कष्ट की वीभत्सता एवं स्वर्ग के आनन्द को ऐसा चित्रित किया गया है कि ब्राह्मणों के आशीर्वाद से स्वर्ग की प्राप्ति होती है तथा कृपण एवं शास्त्रों के लेख में विश्वास न रखने वाला नरकगामी होता है। धर्म, कर्म की प्रधानता से हटकर प्रदर्शन की राह पकड़ गया। सेवा और भक्ति तथा आचरण की पवित्रता एवं वीतरागी जीवन बिताने वाले वर्ग के कुछ सन्त-महन्त, साधु-वैरागी नशीली वस्तुओं का सेवन करने लगे क्योंकि ऐसे साधु ज्ञान-भक्ति, समाज-सेवा एवं आचरण की पवित्रता के लिए नहीं बल्कि अपने पूर्व कालिक दुष्कर्मों एवं अकर्मण्यताओं को छिपाने के लिए साधु मार्ग अपना लेते थे। इससे धर्मोपदेशों, आस्था, विश्वासों से लोगों में अनास्था घर करने लगी थी, क्योंकि वैदिक धर्म तो पूर्णतः निराकारी एवं उपयोगितावादी विज्ञान सम्मत था, जिसको कर्मकांडों, वैष्णवी अवतारवाद के चमत्कारों ने काल्पनिक बना दिया।

कर्मकांडों के मकड़जाल से विमुक्ति पाने एवं पंडितवाद से छुटकारे के लिए सनातन संस्कृति एवं धर्म के एक वर्ग ने आन्दोलित होकर शुद्धात्म भावना की प्रतिष्ठा के लिए श्रमण संस्कृति पर जोर दिया। श्रमण संस्कृति में कर्मकांडों से हटकर आत्मा की शुद्धता, सात्विक जीवन, सत्कर्मों एवं सामाजिक समता पर बल दिया। शुद्धात्म भाव संस्कृति के अनुयायी जैन, बौद्ध, धामी सिख, निरंकारी एवं सूफी इस्लामी बुन्देलखंड में हैं। इनमें से जैन विरासत के तीर्थ सोनागिरि, देवगढ़, अहार, सीरौन, नवागढ़, पपौरा, द्रोणगिरि, खजुराहो, चन्देरी, थूबौन, बूढ़ी चन्देरी, पटनागंज एवं कुंडलपुर विशेष दर्शनीय हैं। बौद्ध विरासत के क्षेत्र थे– खजुराहो, गुर्जरा, मोहनगढ़, अजयगढ़, ऐरण एवं भरहुत, जिनके मात्र ध्वंसावशेष ही अवलोकनीय हैं। हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रतीक प्रभु प्राणनाथ जी का तीर्थ धाम पन्ना में है। इस्लाम की सूफी चिश्ती परम्परा के सन्तों-पीरों की मजारें बुन्देलखंड के सागर, धामौनी, टीकमगढ़, झाँसी, ललितपुर, बल्देवगढ़, कालपी, महोबा, बाँदा एवं हमीरपुर में हैं, जहाँ प्रतिवर्ष उर्स आयोजित होते हैं, मेले लगते हैं और दरगाहों पर हिन्दू, मुसलमान समान रूप से दुआ माँगते हैं। सिख एवं निरंकारी समुदाय के गुरुद्वारे भी बुन्देलखंड के अनेक नगरों में हैं जो सामाजिक समता एवं प्रेम का सन्देश देते हैं।

बुन्देलखंड विविध धर्म-संस्कृति का क्षेत्र है। यह जनपद ऐसी बहुआयामी संस्कृति का उपवन है, जिसमें भारत की सभी शास्त्रीय एवं क्षेत्रीय संस्कृति रूपी पुष्प खिले हुए हैं। विविधि सांस्कृतिक धाराएँ यहाँ एक साथ प्रवाहित हैं। विविधता में एकता यहाँ ही देखने को मिलती है। यहाँ विविध धर्म-संस्कृति के लोग प्रेमपूर्वक एक ही स्थल पर बसते हैं। अनेकों आस्था-विश्वास के देवालय भी एक स्थल पर निर्मित हैं, जिनमें कभी विरोध नहीं उभरा वह एक दूसरे के अधिक करीब रहते हैं। एक-दूसरे के सुख-दुख में शामिल होते हैं।

धर्म-संस्कृति की जड़ें बुन्देलखंड के लोगों में गहरे तक पैठी हैं। चाहे उसे ढोंग कहा जाए, चाहे अन्धविश्वास और चाहे उसका लोगों के जीवन के प्रत्यक्ष कोई लाभ हो अथवा न हो। शिक्षित हो अथवा अशिक्षित सभी लोग देव प्रतिमाओं का पूजन करते, उन्हें नमन करते और उनके जन्मदिनों पर व्रत रखते। ऐसे सभी पुनीत-पवित्र दिनों को 'पर्व' कहते हैं। पर्व, त्योहार और व्रत लोगों की जीवन शैली हैं। संस्कृति का आधार हैं। पर्वों, त्योहारों एवं व्रत-उपवासों के रूप में ही बुन्देलखंडी संस्कृति जीवित है, हरी-भरी है। पर्व और त्यौहार किसी न किसी देव से जुड़े हैं। पर्वों और त्योहारों पर महिलाएँ व्रत रखती हैं, पूजा करती हैं। इस प्रकार महिलाओं के माध्यम से धर्म-संस्कृति में परिवार के बच्चे-बच्चियाँ भी प्रशिक्षित होते हैं और यह क्रिया परम्परा का रूप लेकर पीढ़ी दर पीढ़ी चलती रहती है।

स्त्रियों की धारणा व्यापक रूप से कर्तव्य से हटकर भाग्य पर आ जाती थी। किसी काम के लिए अपेक्षित श्रम को नहीं तौलने से केवल भाग्य को कोसते थे। लोगों को विश्वास था कि सुकर्म दूसरे जन्म में सहायता देते थे। गौड़, सौर, आदि अनार्य धर्मियों का विश्वास तो सभी ओर से हटकर भूतप्रेत में दृढ़ हो चुका था। फलस्वरूप अनेक काल्पनिक देवताओं की पूजा करके धर्मभावना की तृप्ति करते थे। भाव-मंगल अवारा, झाड़ फूँक पर लोगों को औषधियों से भी अधिक विश्वास था।

यह तान्त्रिकों और अघोर पंथियों का युग था। इस सम्प्रदाय का व्यापक प्रभाव जनजीवन पर पड़ा था। मन्त्र तन्त्रों की शक्ति से लोगों का सर्वाधिक विश्वास था।

यह विश्वास पहले तो असज़्य लोगों में ही था किन्तु क्रमशः यह विश्वास अर्धसज़्यों में भी में भी घर कर गया। वर्तमान जीवन में बुन्देलखंड में जो अनेक देवी-देवताओं, प्रेतों की पूजा आज जगह-जगह चल पड़ी है, यह उसी भावना का परिणाम है। ऐसे में 'खैरमाता', 'भिड़ोहिया', 'घटाइया', 'गौंडबाबा', 'मसानबाबा', 'ज़टबाबा', 'छीद' आदि वहाँ के बड़े लोकप्रिय ग्राम देवता हैं। महामारियों के देवता ज़ी वहाँ के लोगों के ने पूजने आरज़्भ कर दिये थे। कुछ जातिगत विश्वास भी वहाँ के लोगों में प्रौढ़ हो रहे थे।

कुछ कृषि सज़्बन्धी विश्वास भी यहाँ के लोगों के विचित्र ढंग से पाए जाते थे। अमावस्या की हल बैल नहीं चलाना, हल आदि कृषि उपकरणों की पूजा आरज़्भ समाप्ति पर अनेक दूसरे अज़्यास लोगों में आज भी प्रचलित हैं। कृषि को ओले आदि आपज़्यिों से बचाने के लिए पूजादिक कर्म यहाँ की एक विशेषता थी।

क्षेत्रीय पर्व

शास्त्रीय पर्वों के अतिरिज़्त बुन्देलखंड के अपने क्षेत्रीय पर्व भी हैं। होली के दस दिन पूर्व पंचमी को बरूला पाँचें कहते हैं। इस दिन महिलाएँ गोबर के बरूला बना कर रख लेती हैं जिनसे होली के दिन घर-घर विधिवत् पूजा कर होली जलाई जाती है। महोबा के राजा परमाल देव के समय से प्रारज़्भ हुआ कजलिया पर्व लड़कियों को कृषि कर्म सज़्बन्धी ज्ञान देने वाला है। रंग पंचमी होली रंग-गुलाल खेलने का अन्तिम दिन है तो नौरता-कुवांरी कन्याओं को लीपना-पोतना और कलात्मक चौक पूरने के प्रशिक्षण के साथ-साथ गौरा देवी (पार्वती) की भज़्ति का द्योतक है। पूजनें (पज = उपज पूर्णिमा) कृषि उपज और उत्पादन का पर्व होता है। बाराजीत व्रत में आसमाई कथा महिलाओं में धैर्य, सहिष्णुता, आशा और विश्वास को बनाए रखने की शिक्षा देती है। खेर-बहेर पूजन में ग्रामीण महिलाएँ अपने स्थानीय देवों, वृक्षों के पूजन-मनौती के साथ-साथ स्थानीय भौगोलिक जानकारी प्राप्त करती हैं। कुनघुसू पर्व बहुतों को सज़्मान देने का पर्व है तो हरियाली अमावस हल-बैलों की छुट्टी-विश्राम का दिन माना गया है। नबैमाई उपवास पति-पत्नी में प्रेम स्थापना की शिक्षा देता है। हरछट हलधर जयन्ती तो है ही, वनोपज के पूजन का भी पर्व है। सन्तान सातैं पुत्र-पुत्रियों

सन्तानों के सुखी जीवन की कामना का पर्व है। मामुलिया बेर, मकोरा जैसी बनोपज से अकाल जैसे दुर्दिन काट लेने की शिक्षा लड़कियों को देता है। विवाह-पंचमी ओरछा के राम राजा में भगवान् रामचन्द्र एवं सीता जी के विवाह समारोह का पर्व है। आषाढ़ मास में कृषि बुवाई प्रारज़्भ करने से पूर्व जिस घड़े में बीज रखा जाता है उसे बिजा कहा जाता है, उसका हल्दी चावल एवं दूर्वा से पूजन किया जाता है, उस पर स्वस्तिक चिह्न बनाया जाता है। हल में प्रयुज़्त नाना पगईयाँ नामक रस्सियों का भी पूजन किया जाता है। यह बुन्देलखंड के क्षेत्रीय पर्व हैं जो बुन्देलखंड की संस्कृति के आधार हैं और बुन्देलखंड के लोगों को सांस्कृतिक रूप से जीवन बनाए हुए हैं। बुन्देलखंड की संस्कृति विलक्षण है, अनूठी है, सद्भाव युज़्त है, सौहार्द्रमयी है। गंगा की धारा की तरह है कि वह अन्य सभी धाराओं को अपने में विलीन कर लेती है जिसके दर्शन बुन्देलखंड के लोगों की बोली, वाणी, वस्त्राभूषणों, लोकनृत्य, लोकगीत, लोक राग, लोक कला, मेलों की ठेलम पेल, देवों, देवालयों, व्रत, त्योहारों में आस्था विश्वास, भज़्ति भावना, सामाजिक समरसता, सहयोग, सद्भाव एवं भूमि से आत्मिक लगाव के स्वरूप में किये जा सकते हैं। यह सभी बुन्देलखंड की विरासत के तज़्व हैं जिनमें देवालय विरासत के स्थाई मोटे खूँटे हैं, जिनसे ज्ञानी, विज्ञानी, साहित्यकार, गायक, कलाकार, भजनी, बहुरूपिए, राजनेता, रणबाँकुरे, किसान, मजदूर सभी बँधे हैं। चाहे उसे ईश्वर का घर मानकर, चाहे प्राकृतिक सुषमा सौन्दर्य का स्थल मानकर, चाहे कलात्मक पर्यटन स्थल मानकर, सभी ल्रोग वहाँ जाते हैं। भावनात्मक सज़्बन्ध से सभी वहाँ खिंचे चले जाते हैं, बहाना कुछ भी हो। बुन्देलखंड का मनुष्य तो दवा की अपेक्षा दुआ में अधिक विश्वास रखता है। अन्ततः मेरा सोच है कि ''भगवान् पंच महाभूतौं–(भ) = भूमि, (ग) = गगन, (व) = वायु (अ) = अग्नि एवं (न) = नीर अर्थात् पृथ्वी, आकाश, वायु, अग्नि एवं जल का समवेत यौगिक स्वरूप है। जो अमर हैं, अविनाशी, सर्व शज़्तिमान सर्वव्यापी निराकारी हैं। इन्हीं की कृपा तक जीव और जीवन है। वह सृष्टि का सृजनकर्ज़ा हैं, स्वामी हैं और सबके मालिक हैं।''

बुन्देलखंड की संस्कृति, परज़्परा और विरासत पर केन्द्रित यह कृति देव, यति, मुनि चर्चिम बुन्देलभूमि और इसके निवासियों को समर्पित है।[7]

मनोरंजन

उस युग में लोगों के सामाजिक विनोद के साधन वर्तमान थे। राज्य इसमें किसी प्रकार का हस्तक्षेप नहीं करता था। यहाँ के निवासियों का अत्यन्त प्रिय विनोद मृगया था। चन्देलों का साम्राज्य विशेष रूप से वनाच्छादित प्रदेश में ही फैला था जहाँ प्रत्येक व्यक्ति आखेट में प्रवीण होता था। इस देश के आखेटकों द्वारा पशुओं का पीछा करते हुए जिस उच्चकोटि की वीरता और कौशल का प्रदर्शन किया जाता था। प्रजाजन मनोरंजन चौपड़, घुड़दौड़, हाथी रमन्ना, लोकगीत, लोकनृत्य, जैसे -रावला, मोनिया, राई, ढिमरया, काड़ला आदि के साथ मुर्गों की लड़ाई, तीतर लड़ाना आदि द्वारा करते थे ।

बुन्देलखण्ड में विशेष अवसरों पर वाद्ययंत्रों का उपयोग किया जाता है जिनमें मुख्यतः दुंदुभि, ढोल, भेरी, मृदंग,बांसुरी, शंख, शहनाई, तुरही, नगाड़े, किंकिणी,घुंघरू, घंटे, डमरू,करनाल,सिंगी, बीन, नफीरी, सुरमंड, मुंहचंग, झांझ,मजीरा, मारुबाजे, तारंतुभा, चारुतार, तूतूकारी, धौंस,रबाब आदि हैं ।[8]

बुन्देलखण्ड के अस्त्र-शस्त्र

निद्रास्त्र - मूर्च्छित करने हेतु, बाड़वागीन बाण–चलाने हेतु, कूहवान अस्त्र–विध्वंस कारक, इसके अतिरिक्त देवी अस्त्र, सिंहनख, अग्नि हस्त, बिछुआ , परिघ, बकसुआ, सेल्ह, हस्तत्राण, तलवार, खंजर, कटार, बरछी, धनुषबाण, खडग, गुर्ज, सिंजनी, कवच, जंबूर, सांकल, भाला, किरवान, जमदाढ़, निसान का उल्लेख साहित्य में प्राप्त होता है ।[9]

धार्मिक परिदृश्य

अतिशय क्षेत्र नवागढ़ में भौंयरे में भगवान् अरनाथ स्वामी की 4.5 फुट उत्तुंग प्रतिमा प्राप्त हुई । इसके अतिरिक्त अनेक तीर्थंकर प्रतिमाएँ अभिलेखीय साक्ष्य के साथ प्राप्त हुई है। अनेक कलाशिल्प, प्राकृतिक शैल गुफाएँ, शैलोत्कीर्ण प्रतिमा एवं चित्रकला का प्रमाण अभिलेख समूह पर अंकित पाषाण शिलाओं, फलकों एवं मूर्तियों पर अंकित हैं ।

नवागढ़ से लगभग 70 से भी अधिक अभिलेख संस्कृत में प्राकृत भाषा में प्राप्त हैं, जिनकी लिपि नागरी है। सभी अभिलेखों में तीर्थंकर, आचार्य, उपाध्याय,

साधु परमेष्ठी के बिम्ब प्राप्त हैं। अतः सर्वप्रथम धार्मिक परिदृश्य को समझने के लिए सर्वप्रथम जैनधर्म का स्वरूप, तीर्थंकर परम्परा चक्रवर्ती आदि तरेसठ शलाका पुरुषों का विस्तृतण वर्णन आवश्यक है।

जैनधर्म का उद्भव एवं विकास

जैनधर्म दो शब्दों से बना है जैन और धर्म। अर्थात् जिन्होंने अपनी इन्द्रियों और मन को जीत लिया है जिन-जिनने अपने आत्मिक विकारों पर विजय प्राप्त कर ली हैं वह 'जिन' है।

वस्तु के स्वभाव को धर्म कहते हैं जैसे अग्नि में उष्णता तथा जल में शीतलता उसका धर्म है। उसी तरह आत्मा का धर्म चेतना, जानना, देखना है।

'चारित्रं खलु धम्मो' अर्थात् संसार से मुक्ति दिलाने वाला आचरण-चारित्र ही धर्म है।

जैनधर्मानुसार प्रत्येक जीवात्मा परमात्मा बन सकता है। जीवात्मा और परमात्मा इतना ही अन्तर है जीवात्मा अपने काम, क्रोधादि के कारण अशुद्ध अष्टकर्मों से घिरा रहता है। जब जीवात्मा उन कर्मों का नाश करके परमात्मा बन जाता है जो जिन कहलाता है।

जैनधर्म वस्तुतः शाश्वत सत्य है, जैनधर्म कोई सम्प्रदाय नहीं हैं यह तो प्रत्येक आत्मा में प्रतिष्ठित होता है । इसकी कोई स्थापना या निर्माण नहीं कर सकता यह तो अनादि से है तथा अनादि तक रहेगा ।

जैन दर्शनानुसार काल चक्र उत्सर्पिणी एवं अवसर्पिणी रूप सदैव गतिशील है, प्रत्येक काल में 24 तीर्थंकर होते हैं जो धर्म का प्रवर्तन करते हैं। उनके माध्यम से श्रमण एवं श्रावक को धर्म का ज्ञान होता है। श्रमण संसार मार्ग से परे सांसारिक व्यामोह गृहस्थी को स्वीकार न करके सीधे वीतराग अवस्था प्राप्त करते हैं तथा जो श्रावक धर्म अर्थात् गृहस्थी को स्वीकार करते हैं वह अपने षट् कर्मों का प्रतिदिन पालन करके अपने कर्तव्य का पालन करके प्रौढ़ावस्था में आरोहण करके वीतरागता को अंगीकार करके आत्म कल्याण पथ प्रशस्त करते हैं।

प्रत्येक उत्सर्पिणी-अवसर्पिणी काल में चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ

बलभद्र, नौ नारायण और नौ प्रतिनारायण, ये 63 महापुरुष होते हैं। भरतक्षेत्र के इस अवसर्पिणी काल में भी इतने ही हुए हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं–

तीर्थंकरों के नाम -1. ऋषभ, 2. अजित, 3. सज़्भव, 4. अभिनन्दन, 5. सुमति, 6. पद्मप्रभ, 7. सुपार्श्व, 8. चन्द्रप्रभ, 9. पुष्पदन्त, 10. शीतल, 11. श्रेयांस, 12. वासुपूज्य, 13. विमल, 14. अनन्त, 15. धर्म, 16. शान्ति, 17. कुन्थु, 18. अर, 19. मल्लि, 20. मुनिसुव्रत, 21. नमि, 22. नेमि, 23. पार्श्व और 24. वर्द्धमान, ये चौबीस तीर्थंकर हैं।

चक्रवर्तियों के नाम—

1. भरत, 2. सगर, 3. मघवा, 4. सनतकुमार, 5. शान्ति, 6. कुन्थु, 7. अर, 8. सुभौम, 9. पद्म, 10. हरिषेण, 11. जयसेन और 12 ब्रह्मदज़ ये बाहर चक्रवर्ती छः खंडरूप पृथ्वीमंडल को सिद्ध करने वाले और कीर्ति से भवनतल को भरने वाले उत्पन्न हुए हैं।

बलदेवों के नाम—

1. विजय, 2. अचल, 3. सुधर्म, 4. सुप्रभ, 5. सुदर्शन, 6. नन्दी, 7. नन्दिमित्र, 8.राम और 9. पद्म ये नौ बलदेव हुए हैं।

नारायणों के नाम—

1. त्रिपृष्ठ, 2. द्विपृष्ठ, 3. स्वयंभू, 4. पुरुषोज़म, 5. पुरुषसिंह, 6. पुंडरीक, 7. दज़, 8.लक्ष्मण और 9 कृष्ण ये नौ नारायण हैं।

प्रतिनारायणों के नाम—

1.अश्वग्रीव, 2.तारक, 3.मेरक, 4.मधुकैटभ, 5.निशुज़्भ, 6.बलि, 7.प्रह्लाद, 8.रावण और 9.जरासंध–ये नौ प्रतिशत्रु (प्रतिनारायण) हैं।

रुद्रों के नाम—

तीर्थंकर काल में 1.भीमबलि, 2.जितशाहू, 3.रुद्र, 4.विश्वानल, 5.सुप्रतिष्ठ, 6.अचल, 7.पुण्डरीक, 8.अजितन्धर, 9.जितनाभि, 10. पीठ, 11. महादेव ये ग्यारह रुद्र होते हैं।

नारदों के नाम इस प्रकार हैं—

1. भीम	2. महाभीम	3.रौद्र	4. महारुद्र
5.काल	6. महाकाल	7. दुर्मुख	8.नरमुख
9.अधोमुख			

कामदेवों के नाम इस प्रकार हैं—

1.बाहूबली	2.प्रजापति	3.श्रीधर	4.दर्शनभद्र
5.प्रसेनचन्द्र	6.चन्द्रवर्ण	7.अग्निमुख	8. सनत्कुमार
9.वत्सराज	10.कनकप्रभ	11.मेघप्रभ	12. शान्तिनाथ
13. कुन्थुनाथ	14. अरनाथ	15. विजयराज	16. श्रीचन्द
17. नलराज	18. हनुमंत	19. बलिराज	20. वसुदेव
21. प्रदुज़्न	22. नागकुमार	23.जीवंधर	24. जज़्बूस्वामी [9]

धार्मिक परिदृश्य

तीर्थंकर : इस तीर्थंकर शज़्द में आगम तीर्थ शज़्द के स्वरूप पर विचार करना उचित है। आचार्य प्रभाचन्द्र ने लिज़ा है 'तीर्थमागमः तदाधारसंघश्च' अर्थात् जिनेन्द्र कथित आगम तथा आगम का आधार साधुवर्ग तीर्थ हैं। तीर्थ शज़्द का अर्थ घाट भी होता है अतएव **तीर्थकरोतीति तीर्थंकरः** का भाव यह होगा कि जिनकी वाणी के द्वारा संसार सिन्धु से जीव तिर जाते हैं वे तीर्थ के कर्ता तीर्थंकर कहे जाते हैं सरोवर में घाट बने रहते हैं, उस घाट से मनुष्य सरोवर के बाहर सरलतापूर्वक आ जाता है, उसी प्रकार तीर्थंकर भगवान् के पथ-प्रदर्शन का अवलज़्बन लेने वाला जीव संसार सिन्धु में न डूब कर भव समुद्र से पार उतर जाता है।

तीर्थंकर श्री ऋषभनाथ

तीर्थंकर आदिनाथ जी का नाम ऋषभदेव था, उन्हें वृषभ नाथ भी कहा गया है। ऋषभदेव अयोध्या के राजा नाभिराज एवं मरुदेवी के पुत्र थे।[10] ये चैत्र कृष्ण नवमी को उज़राषाढ़ा नक्षत्र में उत्पन्न हुए थे। राजा नाभिराज ने कुमारावस्था में

युवराज वृषभनाथ का विवाह राजा कच्छ की बहिन यशस्वती और महाकच्छ की बहिन सुनन्दा से कर दिया था। वृषभदेव जी की रानी यशस्वती से राजकुमार भरत पैदा हुए। इसके अतिरिक्त यशस्वती के गर्भ से क्रम से अनन्त विजय, अन्तवीर्य, अच्युत, वीर और वरवीर नाम के पुत्र एवं ब्राह्मी पुत्री हुए। दूसरी पत्नी सुनन्दा के गर्भ से पुत्र बाहुबली एवं पुत्री सुन्दरी हुई। पुत्रों की शिक्षा के बाद वृषभदेव ने ज्येष्ठ पुत्र भरत को गद्दी सौंप दी एवं अन्य पुत्रों को भी राजा बनाया गया। स्वयं महाराज वृषभदेव तप करने हेतु वन में चले गये। वन में वस्त्राभूषणों को त्याग कर पंचमुष्ठियों से केश लुंचन किया और सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार कर समस्त परिग्रहों का त्याग कर दिया। इस तरह ऋषभदेव ने चैत्रवदी नवमी के दिन सायंकाल के समय जिन दीक्षा ग्रहण की थी। उनके साथ कई राजाओं ने दीक्षा ग्रहण की थी। भगवान् आदिनाथ छः माह तक अनशन धारण कर एक आसन में बैठे रहे। जब भगवान को कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ, तो स्वयं इन्द्र पूजा करने आए। ऋषभदेव ने कैलाश पर्वत से निर्वाण प्राप्त किया । भगवान् आदिनाथ का चिह्न वृषभ है।

तीर्थंकर श्री अजितनाथ

तीर्थंकर अजितनाथ जी अयोध्या के इक्ष्वाकु वंशीय काश्यप गोत्री राजा अजितशत्रु एवं महारानी विजयसेना के पुत्र थे। जेठ महीने की अमावस्या की रात्रि के पिछले भाग में जबकि रोहिणी नक्षत्र का उदय था, तब ब्रह्म मुहूर्त के कुछ पहले महारानी विजय सेना ने ऐरावत आदि स्वप्न में देखे और एक हाथी को अपने मुँह में प्रवेश करते देखा। यह महारानी के गर्भाधान का समय था। माघ शुक्ल दशमी के दिन महारानी विजय सेना ने पुत्र को जन्म दिया। इसी पुत्र का नाम अजित रखा गया। महाराजा अजितशत्रु ने कई सुन्दर कन्याओं के साथ अजित का विवाह किया और गद्दी सौंपकर स्वयं धर्म सेवन कर सद्गति को प्राप्त हुए।

एक दिन राजा अजित महल की छत पर बैठे हुए थे, उन्होंने चमकती हुई बिजली को अचानक नीचे गिर कर नष्ट होते देखा, उसे देखकर उनका हृदय विषयों से विरक्त हो गया। उन्होंने अजित सेन नामक पुत्र को गद्दी सौंप कर वन

के लिए प्रस्थान किया। वन में कठोर तपस्या के पश्चात् एकादशी के दिन सायंकाल के समय रोहिणी नक्षत्र के उदय में उन्हें 'केवलज्ञान' प्राप्त हुआ। तीर्थंकर अजितनाथ अन्त में सम्मेद शिखर पर पहुँचे और वहाँ एक माह मौन धारण कर तप किया। यहीं पर चैत्र शुक्ल पंचमी के दिन रोहिणी नक्षत्र के उदय में प्रातः काल के समय निर्वाण प्राप्त किया। भगवान् अजितनाथ का चिह्न हाथी है।[11]

तीर्थंकर श्री सम्भवनाथ

तीर्थंकर सम्भवनाथ जी का जन्म श्रावस्ती में राजा दृढ़राज्य के यहाँ उनकी पत्नी महारानी सुषेणा के गर्भ में हुआ था। इक्ष्वाकु वंशी काश्यप गोत्रीय राजा दृढ़राज्य को पुत्र रत्न की प्राप्ति कार्तिक शुक्ल पूर्णमासी के दिन हुई। पुत्र का नाम 'सम्भव' रखा गया। युवा अवस्था में पिता ने योग्य कन्याओं से विवाह कर दिया। वे भार्याओं के साथ सांसारिक सुख भोगते हुए शासन करते रहे। एक दिन वे महल की छत पर बैठे हुए प्रकृति की सुन्दरता देख रहे थे कि उनकी दृष्टि एक श्वेत मेघ खंड पर पड़ी। हवा के वेग से क्षण भर में ही मेघ खंड विलीन हो गया। उसी समय राजा सम्भवनाथ संसार के विषय भोगों से सहसा विरक्त हो गये। वे सोचने लगे कि संसार की सभी वस्तुएँ इस मेघ खंड की भाँति क्षणभंगुर है। एक दिन मेरा दिव्य शरीर भी नष्ट हो जाएगा, मैं जिस स्त्री पुत्रों के मोह में उलझा हुआ अपने हित की ओर प्रवृत्त नहीं हो रहा हूँ, वे एक भी मेरे साथ न जावेंगे। ऐसा सोच कर अपने-अपने पुत्रों को राज्य सौंप दिया और श्रावस्ती के समीपवर्ती सहेतुक वन में गये। वहाँ उन्होंने मृगसिर की शुक्ल पूर्णिमा के दिन शाल वृक्ष के नीचे दीक्षा ली। चौदह वर्ष तपस्या के बाद कार्तिक कृष्ण चतुर्दशी को केवल्य प्राप्त हुआ। तीर्थंकर सम्भवनाथ ने सभी जगह उपदेश दिये और अन्तिम समय में सम्मेद शिखर पर ब्रह्मलीन हुए। देवों ने आकर उनका निर्वाण महोत्सव मनाया। भगवान् सम्भवनाथ का चिह्न घोड़ा है।

तीर्थंकर श्री अभिनन्दन नाथ जी

तीर्थंकर अभिनन्दन का जन्म अयोध्या नगरी में राजा स्वयंवर के यहाँ उनकी पत्नी महारानी सिद्धार्था के गर्भ से हुआ था। राजा स्वयंवर विद्वान् एवं

पराक्रमी राजा थे। रानी सिद्धार्था ने माघ शुक्ल द्वादशी के दिन आदित्य योग और पुनर्वसु नक्षत्र में उत्तम पुत्र को जन्म दिया, जिसका नाम 'अभिनन्दन' रखा गया। राजा स्वयंवर ने राजकुमार अभिनन्दन को राज्य सौंप कर दीक्षा ग्रहण की। राजा अभिनन्दन ने अनेक वर्षों तक शासन करने के पश्चात् सब कुछ छोड़कर दीक्षा लेने का निश्चय किया। अपने पुत्र को राज्य सौंपकर वन में माघ शुक्ल द्वादशी के दिन पुनर्वसु नक्षत्र में दीक्षा ग्रहण की। कठोर तप के बाद कैवल्य प्राप्त हुआ। अनेक जगह विहार करने के बाद वे आयु के अन्तिम समय में सम्मेद शिखर पहुँचे। यहाँ पर उनका निर्वाण हुआ। तीर्थंकर अभिनन्दन नाथ का चिह्न कपि (बन्दर) था।

तीर्थंकर श्री सुमतिनाथ जी

तीर्थंकर सुमतिनाथ जी का जन्म अयोध्या नगरी में महाराजा मेघरथ की पत्नी महारानी मंगला के गर्भ से हुआ था। श्रावण शुक्ल एकादशी के दिन मघा नक्षत्र में जन्में पुत्र का नाम सुमति रखा गया। राजकुमार सुमति को गद्दी सौंपकर राजा मेघरथ ने दीक्षा ग्रहण की, किन्तु कुमारावस्था में राजकुमार सुमति का विवाह करवा दिया था। राजा सुमति ने वर्षों शासन किया। अन्त में अपनी विषय वासनाओं से विरक्त होकर अपने पुत्र को राज्य सौंपकर स्वयं तप के लिए वन में चले गये। सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार कर वैशाख शुक्ल नवमी के दिन दीक्षा ग्रहण की। बीस वर्षों की कठिन तपस्या के बाद प्रियंगु वृक्ष के नीचे केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। जीवन के अन्तिम समय में सम्मेद शिखर में तप में लीन होकर विराजमान हो गये और निर्वाण प्राप्त किया। सुमतिनाथ जी का चिह्न चकवा है।

तीर्थंकर श्री पद्मप्रभ जी

तीर्थंकर पद्मप्रभ जी का जन्म कौशाम्बी नगर में इक्ष्वाकु वंशी राजा धरण की महारानी सुसीमा के गर्भ से हुआ। उनका जन्म कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी के दिन चित्रा नक्षत्र में हुआ। बालक के शरीर की प्रभा (कान्ति) पद्म (कमल) के समान होने के कारण नाम पद्मप्रभ रखा गया। पिता से राज्य पाकर नीतिपूर्वक शासन किया। एक दिन द्वार पर बँधे हुए हाथी के पूर्व भव सुनकर प्रतिबुद्ध हो गये, तत्क्षण उन्हें अपने पूर्व भवों का ज्ञान हो गया, जिससे उनके अन्तरंग नेत्र

खुल गये। वैराग्य के पराकाष्ठा पर पहुँचने पर पुत्र को राज्य सौंप दिया और निवृत्ति नामक पालकी में आरूढ़ होकर मनोहर नामक वन में गये। कठिन तप के बाद चैत्र पूर्णिमा के दिन कैवल्य प्राप्त हुआ। सम्मेद शिखर जी पर निर्वाण प्राप्त हुआ। भगवान् पद्मप्रभ जी का चिह्न कमल है।

तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ जी

तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ जी का जन्म काशी देश में गंगा तट पर वाराणसी नगर में हुआ था। उनके पिता राजा सुप्रतिष्ठित तथा माता का नाम महारानी पृथ्वीसेना था। इनका विवाह होने के बाद पिता ने राज्य सौंप दिया, इन्होंने प्रजा पालन के सतत कार्य किये। संसार के बढ़ाने वाले विषय भोगों से विरक्त होकर पुत्र को राज्य सौंपकर 'मनोगति' नामक पालकी में सवार होकर सहेतुक वन चले गये। वन में कठोर तप करके केवलज्ञान प्राप्त किया। तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ का अन्य तीर्थंकरों की भाँति निर्वाण सम्मेद शिखर में हुआ। इनका चिह्न स्वस्तिक है।

तीर्थंकर श्री चन्द्रप्रभ जी

तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का जन्म इक्ष्वाकु वंश में चन्द्रपुर में हुआ था, उनके पिता का नाम राजा महासेन तथा माता का नाम लक्ष्मणा था। उनका जन्म पौष कृष्ण एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र में हुआ, उनका नाम 'चन्द्रप्रभ' रखा गया। युवा होने पर उनका विवाह कई कुलीन कन्याओं के साथ हुआ। राज्य प्राप्त कर चन्द्रप्रभ ने लम्बे समय तक शासन किया। एक दिन उनका हृदय सांसारिक भोगों से विरक्त हो गया। चन्द्रप्रभ ने अपने श्रेष्ठ पुत्र को राज्य देकर देवनिर्मित विमला पालकी में सवार होकर सर्वर्तुक नाम के वन में पहुँचे। वहाँ पर सिद्ध परमेष्ठी को नमस्कार कर पौष कृष्ण एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र में निग्रन्थ मुनि हो गये। कठोर तप करने के बाद फाल्गुन कृष्ण सप्तमी को अनुराधा नक्षत्र में दिव्य ज्योतिमय केवल ज्ञान प्राप्त हुआ। अन्त में सम्मेद शिखर में फाल्गुन शुक्ल सप्तमी को ज्येष्ठ नक्षत्र में संध्या के समय मोक्ष की प्राप्ति हुई। इनका चिह्न चन्द्रमा है।

तीर्थंकर पुष्पदन्त जी (श्री सुविधिनाथ)

तीर्थंकर पुष्पदन्त जी का जन्म काकन्दी नामक नगरी में हुआ था, उनके पिता इक्ष्वाकुवंशी राजा सुग्रीव तथा माता जयरामा थी। उनका जन्म मृगसिर शुक्ल प्रतिपदा के दिन हुआ। इनका नाम पुष्पदन्त रखा गया। पुष्पदन्त जी का विवाह कई सुन्दर कन्याओं से हुआ और लम्बे समय के बाद राज्य करने के बाद उनका हृदय विरक्त हो गया। अपने पुत्र सुमित को राज्य सौंपकर सूर्यप्रभा नामक पालकी में सवार होकर पुष्पक वन में गये। वहाँ दीक्षा प्राप्त कर निर्ग्रन्थ मुनि बन गये। कठिन तपस्या करने पर कार्तिक शुक्ल द्वितीया के दिन केवलज्ञान प्राप्त हुआ। पुष्पदन्त ने अपने दिव्य उपदेशों से समस्त जीवों को सन्तुष्ट किया। पुष्पदन्त का दूसरा नाम सुविधिनाथ था, उनका निर्वाण सम्मेद शिखर से हुआ था। इनका चिह्न मकर है।

तीर्थंकर श्री शीतलनाथ जी

तीर्थंकर शीतलनाथ जी का जन्म जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में मलय देश के भद्दलपुर नगर में इक्ष्वाकु वंश में हुआ था। इनके पिता का नाम दृढरथ और माता का नाम नन्दा था। उनका जन्म माघ कृष्ण द्वादशी के दिन पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में हुआ। इन्द्र द्वारा इनका नाम शीतलनाथ रखा गया। शीतलनाथ की आयु का चौथाई भाग होने पर राज्य प्राप्त हुआ, उन्होंने धर्म, अर्थ, काम का समान रूप से पालन किया।

एक दिन शीतलनाथ घूमने के लिए वन में गये, वहाँ उन्होंने प्रातः ओस के कण देखे, पर थोड़ी देर में सूर्य का उदय होने से ओस अपने आप नष्ट हो गयी, यह देख उनका हृदय विरक्त हो गया। अपने पुत्र को राज्य सौंप कर वन गये, वहाँ दीक्षा ग्रहण की। पौष कृष्ण चतुर्दशी के दिन संध्या के समय पूर्वाषाढ़ नक्षत्र में उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हुआ। सम्मेद शिखर पर अश्विन शुक्ल अष्टमी को पूर्वाषाढ़ में संध्या के समय निर्वाण प्राप्त हुआ। इनका चिह्न कल्पवृक्ष है।

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

तीर्थंकर श्री श्रेयांसनाथ जी

तीर्थंकर श्रेयांसनाथ का जन्म जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र के सिंहपुर नगर में इक्ष्वाकु वंश में हुआ था। उनके पिता का नाम राजा विष्णु नरेन्द्र था तथा माता का नाम महारानी वेणुदेवी था। उनका जन्म फाल्गुन कृष्ण एकादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में हुआ। इन्द्र ने महाराज विष्णु के परामर्श से बालक का नाम श्रेयांस रखा। पिता का राज्य पाकर प्रजा का सुचारु रूप से पालन किया। एक दिन बसन्त ऋतु का परिवर्तन देखकर इन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। राजा श्रेयांस ने अपने पुत्र श्रेयस्कर को राज्य सौंप कर वन जाने का निश्चय किया। वन में दीक्षा ली और दो वर्ष मौन रह कर तप किया। तुम्बुर वृक्ष के नीचे माघ कृष्ण अमावस्या के दिन श्रवण नक्षत्र में सायंकाल के समय लोकालोक को प्रकाश करने वाला पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो गया। उन्होंने आर्यक्षेत्र में अनेक उपदेश दिए, अन्त में सम्मेद शिखर में निर्वाण हुआ। इनका चिह्न गेंडा था।

तीर्थंकर श्री वासुपूज्य जी

तीर्थंकर वासुपूज्य का जन्म चम्पा नगर में इक्ष्वाकु वंश में हुआ था। उनके पिता का नाम वसुपूज्य तथा उनकी माँ का नाम विजया था। राजा वसुपूज्य को पुत्र रत्न की प्राप्ति फाल्गुन शुक्ल चतुर्दशी को हुई, बालक का नाम वासुपूज्य रखा गया। राज परिवार में लालन-पालन हुआ, किन्तु उनका हृदय भोगों से विरक्त हो गया। उनका वैराग्य परम अवधि तक पहुँच गये और वे गृह त्याग कर मनोहर वन में पहुँचे, वहाँ उन्होंने दीक्षा ली। वन में कठिन तपस्या कर कदम्ब वृक्ष के नीचे माघ शुक्ल द्वितीया के दिन विशाखा नक्षत्र में संध्या के समय केवल्यज्ञान प्राप्त हुआ। इन्द्र की आज्ञा पाकर कुबेर ने दिव्य सभा समवरण की रचना की, इसके बीच में स्थित होकर तीर्थंकर वासुपूज्य ने सात तत्त्व, नव पदार्थ, छह द्रव्य, सम्यग् दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक् चारित्र आदि विषयों का व्याख्यान देकर अपना मौन भंग किया। कई देशों में विहार के बाद वे चम्पा नगर आए और शेष समय उन्होंने मन्दारगिरि के सुन्दर शिखर पर चौरानवे मुनियों के साथ तीर्थंकर वासुपूज्य को केवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ। वासुपूज्य का चिह्न महिष (भैंसा) है।

तीर्थंकर श्री विमलनाथ जी

तीर्थंकर विमलनाथ जी का जन्म भरतक्षेत्र की कज़्पिला नगरी में हुआ। उनके पिता इक्ष्वाकु वंशी राजा कृतवर्मा और माता महारानी जयश्यामा थी। उनका जन्म माघ शुज़्ल चतुर्दशी के दिन पूर्व भाद्रपद नक्षत्र में हुआ था। बालक का नाम 'विमलप्रभ' रखा गया था। युवा होने पर राज्य की प्राप्ति हुई और अनेक सुन्दर कन्याओं से विवाह हुआ। अचानक एक दिन होकर अपने पुत्र को राज्य देकर सहेतुक वन में प्रस्थान किया। वहाँ 'नमः सिद्धेज़्यः' कहते हुए माघ शुज़्ल चतुर्थी के दिन उज़राभाद्र नक्षत्र में दीक्षा ग्रहण की। कठिन तप के बाद केवल्यज्ञान प्राप्त हुआ। आचार्य गुणभद्र ने लिखा है कि उनके साथ सब मिलाकर 68 हजार राजा थे। पद्मा आदि एक लाख तीन हजार आर्यिकाएँ थीं, लाखों श्रावक-श्राविकाएँ थीं। उनके अन्तिम समय में वे सज़्मेद शिखर आए, वहाँ उन्हें निर्वाण प्राप्त हुआ। उनका चिह्न शूकर था।

तीर्थंकर श्री अनन्तनाथ जी

तीर्थंकर अनन्तनाथ का जन्म अयोध्या नगरी में इक्ष्वाकु वंश में हुआ, उनके पिता सिंहसेन एवं माता सर्वयशा थे। उनका जन्म ज्येष्ठ कृष्ण द्वादशी के दिन हुआ। देवों ने बालक नाम अनन्त रखा। युवा होने पर कई कन्याओं के साथ विवाह हुआ। राज्य पाकर लज़्बे समय तक शासन किया। एक दिन इन्हें उल्कापात दृश्य को देखकर वैराग्य प्राप्त हो गया। अपने पुत्र अनन्त विजय को राज्य सौंपकर सहेतुक वन में प्रस्थान किया। उन्होंने दीक्षा लेकर कठोर तप किया। पीपल वृक्ष के नीचे अनन्तनाथ को चैत्र कृष्ण अमावस्या को में प्राप्त हुआ। तीर्थंकर विमलनाथ ने धर्मोपदेश एवं विहार करते हुए अन्त में सज़्मेद शिज़र में निर्वाण प्राप्त किया। आपका चिह्न सेही है|

तीर्थंकर श्री धर्मनाथ जी

तीर्थंकर धर्मनाथ का जन्म जज़्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में उज़र कौशल में रतनपुर नामक नगर में हुआ था। उनके पिता महाराज भानु नरेन्द्र एवं माता महादेवी सुब्रता थी। उनका जन्म माघ शुज़्ल त्रयोदशी को पुष्य नक्षत्र में हुआ। पिता की सहमति से इन्द्र ने धर्मनाथ नाम रखा था। युवावस्था में पिता का

राजकार्य से सहयोग किया। धर्मनाथ का विवाह कुंडिनपुर की राजकुमारी शृंगारवती से हुआ था। धर्मनाथ ने वर्षों शासन किया और वैराग्य भाव आने पर अपने पुत्र सुधर्म को राज्य देकर वन में प्रस्थान किया और दीक्षा ग्रहण की। एक वर्ष की तपस्या के बाद धर्मनाथ को शालवन में सप्तच्छद वृक्ष के नीचे केवलज्ञान प्राप्त हुआ। इसके बाद तीर्थंकर धर्मोपदेश देते रहे और अन्त में सज़्मेद शिखर में निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न वज्रदंड है।

तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ जी

तीर्थंकर शान्तिनाथ का जन्म कुरुजांगल में हस्तिनापुर नगर में हुआ था, उनके पिता राजा विश्वसेन एवं माता का नाम ऐरा था। उनका जन्म ज्येष्ठ कृष्ण चतुर्दशी के दिन भरणी नक्षत्र में हुआ। युवावस्था में राज्य पाकर चक्रवर्ती होने का निश्चय किया। वह विशाल सेना लेकर भरत क्षेत्र के छः खंडों पर विजय प्राप्त कर वापस हस्तिनापुर आए। चक्रवर्ती राजा शान्तिनाथ विषय भोगों में लिप्त थे, एक दिन वह श्रृंगारगृह में अपना मुँह देख रहे थे, मुँह के दो प्रतिबिज़्ब देखकर उन्हें आश्चर्य हुआ और उसी समय आत्म ज्ञान प्राप्त हो सका। अपने पुत्र नारायण को राज्य सौंपकर सर्वार्थसिद्धि पालकी में सवार होकर सहस्रनाम वन में गये। वहाँ दीक्षा लेकर 16 वर्षों तक इधर-उधर भ्रमण किया। पुनः सहस्रनाम वन में कैवल्य प्राप्त हुआ। तीर्थंकर शान्तिनाथ के लाखों अनुयाई थे, वे अन्तिम समय में सज़्मेद शिखर आए और निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न मृग था।

तीर्थंकर श्री कुन्थुनाथ जी

तीर्थंकर कुन्थुनाथ का जन्म हस्तिनापुर में कुरुवंश में हुआ था। उनके पिता काश्यप गोत्री महाराजा सूर्यसेन और महारानी श्रीमती देवी उनकी माता थी। तीर्थंकर का अवतरण वैशाख शुज़्ल प्रतिपदा के दिन कृतिका नक्षत्र में हुआ था। बालक का नाम कुन्थुनाथ रखा गया। युवा होने पर योग्य कन्याओं से विवाह हुआ और राज्य पाकर प्रजा पालन किया। राजा कुन्थुनाथ ने दिग्विजय कर चक्रवर्ती पद प्राप्त किया। लज़्बे समय तक शासन करने के बाद उन्हें वैराग्य हो गया। अपने पुत्र को राज्य देकर देव निर्मित विजया नामक पालकी पर सवार होकर सहेतुक वन पहुँचे। वहाँ दीक्षा लेकर 16 वर्ष तक कठिन तपस्या की। तिलक वृक्ष के नीचे

चैत्र शुक़्ल तृतीया के दिन कैवल्य प्राप्त हुआ। उनके उपदेशों से प्रभावित होकर अनेक नर-नारियों ने मुनि, आर्यिका और श्रावक-श्राविका के व्रत धारण किए थे। अन्त में सज़्मेद शिखर पर निर्वाण प्राप्त हुआ। इनका चिह्न अज (बकरा) था।

तीर्थंकर श्री अरनाथ जी

तीर्थंकर अरनाथ जी का जन्म हस्तिनापुर नगर में सोमवंशीय काश्यप गोत्र में हुआ था। इनके पिता का नाम राजा सुदर्शन और माता का नाम मित्रसेना था। उनका जन्म मृगसिर शुक़्ल चतुर्दशी के दिन रोहिणी नक्षत्र में हुआ था। राजभवन में बालक अरनाथ का लालन पालन हुआ युवा होते ही उनका 96 हजार कन्याओं से विवाह किया गया। राज्य प्राप्त होते ही उन्होंने सेना लेकर चतुर्दिक दिग्विजय की। चक्रवर्ती होकर लज़्बे समय तक शासन किया। आयु का तीन चौथाई गृहस्थ अवस्था में व्यतीत कर एक दिन शरद ऋतु के बादलों का नष्ट होता देखकर उनको वैराग्य उत्पन्न हो गया। अरनाथ ने अपने पुत्र अरविन्द कुमार को राज्य देकर सहेतुक वन में प्रस्थान किया। वहाँ पर दीक्षा लेकर कठोर तप किया। 16 वर्ष की साधना के बाद आम्र वृक्ष के नीचे कैवल्य प्राप्त किया। इसके बाद अनेक क्षेत्रों में विहार कर धर्मोपदेश दिए। अन्त में सज़्मेद शिखर में निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न मछली है।

तीर्थंकर श्री मल्लिनाथ जी

तीर्थंकर मल्लिनाथ का जन्म बंगाल देश के मिथिला नामक नगर में इक्ष्वाकु वंश में हुआ। उनके पिता राजा कुज़्भ काश्यप गोत्रीय थे, उनकी माँ का नाम महारानी प्रजावती था। मल्लिनाथ का जन्म मार्गशीर्ष शुक़्ल एकादशी के दिन हुआ था। युवा होने पर उनके विवाह की तैयारी की गयी किन्तु उन्होंने दीक्षा का मार्ग चुना। दीक्षा लेने के बाद छः दिन बाद अश्विनी नक्षत्र में प्रातःकाल के समय दिव्य ज्ञान कैवल्य प्राप्त हुआ। भगवान मल्लिनाथ ने अनेक आर्य क्षेत्रों में विहार कर पथ भ्रान्त पथिकों को मोक्ष का सच्चा रास्ता बतलाया। अन्त में सज़्मेद शिखर में निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न कलश था।

तीर्थंकर मुनिसुव्रतनाथ जी

मुनिसुव्रतनाथ जी का जन्म मगध राज्य के राजगृह नामक नगर में हुआ था। उनके पिता हरिवंश शिरोमणि राजा सुमित्र थे तथा माँ का नाम पद्मा था। उनका जन्म वैशाख कृष्ण दशमी के दिन श्रवण नक्षत्र में हुआ था। युवा होने पर योग्य कन्याओं से विवाह हुआ। वर्षों राज्य करने के बाद एक दिन हाथी के पूर्वभव घटना की। जानकारी पाकर आत्म ज्ञान उत्पन्न हो गया। सांसारिक कार्यों से विरक़्त होकर युवराज विजय को राज्य देकर वन में प्रस्थान किया, वहाँ दीक्षा लेकर ग्यारह महीने कठिन तप किया। चज़्पक वृक्ष के नीचे वैशाख कृष्ण नवमी को श्रवण नक्षत्र में संध्या के समय कैवल्य प्राप्त हुआ। मुनि सुव्रतनाथ ने कई क्षेत्रों में बिहार किया, उनके बाद आयु के अन्तिम समय में सज़्मेद शिखर में निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न कछुआ है।

तीर्थंकर श्री नमिनाथ जी

तीर्थंकर नमिनाथ का जन्म मिथिला नगर के इक्ष्वाकु वंश में हुआ था, उनके पिता महाराज श्री विजय एवं माता महारानी विप्पला थी। उनका जन्म आषाढ़ कृष्ण दशमी के दिन स्वाति नक्षत्र में हुआ था। युवा होकर राज्य प्राप्त किया। दुष्टों का निग्रह और साधुओं का अनुग्रह किया। इस प्रकार लज़्बे समय तक शासन तक के बाद वैराग्य उत्पन्न हुआ। अपने पुत्र सुप्रभ को राज्य दे कर स्वयं चित्रवन में पहुँचे, वहीं दीक्षा ली। चित्रवन में 9 वर्ष की साधना के बाद एक दिन मौलिश्री (नकुल) के नीचे मार्गशीर्ष शुक़्ल पूर्णमासी के दिन अश्विनी नक्षत्र में पूर्ण ज्ञान (कैवल्य) प्राप्त हुआ। भगवान् श्री नमिनाथ ने कई स्थलों का बिहार करने के बाद अन्त में सज़्मेद शिखर में निर्वाण प्राप्त किया। इनका चिह्न नीलकमल है।

तीर्थंकर श्री नेमिनाथ जी

तीर्थंकर नेमिनाथ का जन्म यादव कुल में शौरिपुर नगरी में हुआ था, उनके पिता समुद्र विजय वासुदेव श्रीकृष्ण के पिता वसुदेव के ज्येष्ठ भ्राता थे। नेमिनाथ की माँ का नाम शिवा देवी था, उनके गर्भ से वैशाख शुक़्ल त्रयोदशी के दिन चित्रा नक्षत्र में उद्भूत हुए। उनका लालन-पालन एक राजकुमार की तरह शौरिपुर नगरी में हुआ। युवा होने पर वासुदेव कृष्ण ने इनका विवाह जूनागढ़ की

राजकुमारी राजमती से करने का निश्चय किया। श्रीकृष्ण के प्रस्ताव से नेमिनाथ सहमत तो हो गये, किन्तु बचपन से उनका मन विरक्त था। जब उनकी बारात जा रही थी, मार्ग में कुछ पशुओं की चीत्कार सुनकर नेमिनाथ ने सारथी से पूछा तब सारथी ने कहा—आपके विवाह में इन जानवरों को काट कर मांस बारातियों को खिलाया जाएगा। यह सुनकर उनमें उत्कट वैराग्य उत्पन्न हो गया, उसी क्षण वे बारात को छोड़कर गिरनार पर्वत पर गये और दीक्षा ग्रहण की। यह समाचार सुनकर राजकुमारी राजमती ने भी दीक्षा लेकर भगवान नेमिनाथ की शरण में आर्यिका बन गयी। ऊर्जयन्त पर्वत (गिरनार) पर उन्हें कैवल्य प्राप्त हुआ। उनके कैवल्य प्राप्ति की सूचना पाकर श्रीकृष्ण, बलराम आदि यादवों ने उनकी वन्दना की। भगवान् नेमिनाथ का गिरनार पर्वत पर ही निर्वाण प्राप्त हुआ। इनका चिह्न शंख है।

तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ जी

तीर्थंकर पार्श्वनाथ का जन्म काशीदेश की वाराणसी नगरी में हुआ। उनके पिता गोत्री इक्ष्वाकु वंशी राजा विश्वसेन थे, उनकी माँ का नाम ब्राह्मी (वामा) देवी था। उनका जन्म पौष कृष्ण एकादशी को अनिल योग में हुआ था। राज परिवार में बालक पार्श्वनाथ का लालन-पालन हुआ। पार्श्वनाथ जब सोलह वर्ष के थे, तब उन्होंने एक साधु को अग्नि तप करते देखा। वह साधु पार्श्वनाथ के नाना महीपाल थे। पार्श्वनाथ को तापस के व्यवहार से पीड़ा हुई और उन्होंने यज्ञ की लकड़ी में जलते हुए नाग-नागिन को बचाया। जब पार्श्वनाथ तीस वर्ष के हुए तो अयोध्या के राजा जयसेन द्वारा भेजे गये दूत के मुख से अयोध्या नगरी में हुए तीर्थंकरों की कहानी सुनी, तो उन्हें आत्म ज्ञान प्राप्त हो गया। जब भगवान् पार्श्वनाथ तप कर रहे थे, उस समय मूसलाधार वर्षा व ओलों से रक्षा के लिए नागराज धारणेन्द्र ने अपना फण तीर्थंकर के सिर के ऊपर छत्र बना कर लिया था, उसी समय पार्श्वनाथ को कैवल्य प्राप्त हुआ। ज़गवान् पार्श्वनाथ अपनी आयु के अन्तिम समय सज़्मेद शिखर आए और यहाँ निर्वाण प्राप्त हुआ। भगवान् पार्श्वनाथ का चिह्न सर्प है।

तीर्थंकर श्री महावीर स्वामीजी

तीर्थंकर महावीर का जन्म कुंडलपुर नामक नगर में हुआ था। उनके पिता राजा सिद्धार्थ तथा माता का नाम त्रिशला था, जो वैशाली के राजा चेटक की पुत्री थी। राजा सिद्धार्थ नागवंश के थे। महावीर का जन्म ईसा पूर्व 599 चैत्र शुज़्ल त्रयोदशी के दिन उज़्रा फाल्गुनी नक्षत्र में हुआ था। उनका नाम वर्द्धमान रखा गया। युवा होने पर राजा सिद्धार्थ ने वर्द्धमान का विवाह करना चाहा, किन्तु वर्द्धमान ने न तो विवाह करना स्वीकार किया और न राजगद्दी स्वीकार की। माता-पिता को समझाकर विरक्त हृदय से वन में प्रस्थान किया। वे दीक्षा लेकर आत्म ध्यान में लीन हो गये। मौन व्रत धारण कर उन्होंने कई आर्य देशों में विहार किया। कैवल्य प्राप्त कर वर्द्धमान महावीर बन गये और अपनी दिव्य ध्वनि से उपदेश करने लगे। महावीर स्वामी ने कई राज्यों में विहार किया और उपदेश दिए। अपनी आयु के अन्त में पावापुरी में उन्हें निर्वाण 527 ईसा पूर्व प्राप्त हुआ।

चक्रवर्ती परिचय

नवागढ़ में भौंयरे से प्राप्त मूलनायक भगवान् अरनाथ की प्रतिमा है। भगवान् अरनाथ तीर्थंकर, कामदेव एवं चक्रवर्ती पद के धारी थे। अतः चक्रवर्ती वैभव एवं परिचय का विस्तृत ज्ञान भी आवश्यक है। पूर्व में की गयी विशेष तपस्या के प्रभाव से चौदह रत्न और नव निधियाँ चक्रवर्ती को प्राप्त होती हैं। सजीव रत्न चक्रवर्ती के अधीन ही कार्य करते हैं। कुछ अजीव रत्नों का संचालन सेनापति आदि अन्य किया करते हैं।[12] किन्तु चक्ररत्न का संचालन चक्रवर्ती ही करता है जब चक्रवर्ती चलता है तब चक्ररत्न सबसे आगे चलता है। चक्रवर्ती की पहचान चक्ररत्न से ही होती है। अतः उसे चक्रवर्ती कहते हैं।[13]

चक्रवर्ती का वैभव

तीर्थंकर प्रज़ु को छोड़कर सभी मनुष्यों में चक्रवर्ती का पुण्य, बल, शरीरिक क्षमता एवं अन्य सज़ी प्रकार के साधन सर्वोत्कृष्ट होते हैं उसके पुण्य प्रभाव से उनकी आयुधशाला में सर्वप्रथम चक्ररत्न उत्पन्न होता है, उसके पश्चात् शेष रत्न एवं नवविधियों की उत्पज़ि होती है। इन रत्नों एवं निधियों के साथ एक-एक

हजार यक्ष अधिष्ठायक रूप से विद्यमान रहते हैं, जो सदैव चक्रवर्ती की सेवा में तत्पर रहते हैं, इन्हीं के सद्भाव में चक्रवर्ती छः खंड के दिग्विजयकाल में छोटे बड़े राजा चक्रवर्ती की आज्ञा स्वीकार कर उन्हें अपनी कन्याएँ समर्पित करने का गौरव प्राप्त करते थे।

सभी चक्रवर्ती वज्रवृषभसंहनन से सहित, सुवर्ण के समान वर्णवाले उज़म शरीर धारक, सज़्पूर्ण सुलक्षणों से युज़्त और समचतुरस्र रूप शरीर संस्थान से संयुज़्त होते हैं।

इनमें से प्रत्येक चक्रवर्ती के मन को हरण करने वाली और अभिनव लावण्यरूपरेखा से युज़्त छियानवे हजार युवतियाँ होती हैं। इनमें से बज़ीस हजार आर्यखंड की राजकन्याएँ, इतनी ही विद्याधर राजकन्याएँ और इतनी अच्छी ज़्लेच्छ राजकन्याएँ होती हैं।

प्रत्येक चक्रवर्ती के पास एक-एक युवतिरत्न होता है। उनके साथ वे संकल्पित सुख भोगते हैं। चक्रवर्ती के संज़्यात हजार पुत्र-पुत्रियाँ होती हैं और बज़ीस हजार गणबद्ध नामक देव उनके परिचायक होते हैं।

उनकी गायों की संज़्या तीन करोड़, एक करोड़ थालियाँ तथा भद्र हाथी एवं रथ प्रत्येक चौरासी लाख प्रमाण होते हैं। इसके अतिरिज़्त अठारह करोड़ घोड़े, चौरासी करोड़ उज़म वीर, अनेकों करोड़ विद्याधर और अठासी हजार ज़्लेच्छ राजा होते हैं।

चक्रवर्ती के पास बज़ीस हजार मुकुटबद्ध राजा, इतनी ही नाट्यशालाएँ और इतनी ही संगीतशालाएँ भी होती हैं। चक्रवर्ती के अधिकार में पदानीक (पदाति) दुगुणित चौबीस अर्थात् अड़तालीस करोड़ और देश बज़ीस हजार होते हैं। चक्रवर्ती के अधिकार में छियानवे करोड़ ग्राम, पचहज़र हजार नगर और सोलह हजार खेट एवं मटंब आदि होते हैं।

किमिच्छिक दान

औषधिदान, शास्त्रदान, अभयदान और आहारदान ये चार दान गृहस्थ श्रावकों के द्वारा मुनि, आर्यिका, श्रावक, श्राविका आदि को धार्मिक भावना से दिए

जाते हैं। किमिच्छिक दान चक्रवर्ती के द्वारा राज्य में अभावग्रस्त गृहस्थों को दिया जाता है जिससे वे अपना जीवन सुख से व्यतीत करते हुए धर्माराधना करते हैं। याचकों को उनकी इच्छानुरूप उपयोगी वस्तुओं को इतना दिया जाता है जिससे उनकी इच्छा शेष न रहे, वह किमिच्छिक दान कहलाता है। इस प्रकार के दान देने की योग्यता चक्रवर्ती में ही होती है।

चक्रवर्ती की राजविद्या

1. **बान्वीक्षिकी :** साँच, झूठ एवं अपना बल रूप ज्ञान लेना।
2. **त्रयी :** अधर्म एवं धर्म का विशेष ज्ञान।
3. **वार्ता :** अर्थ, अनर्थ समझना।
4. **दंडनीति :** दुष्टों की दंडविधि।

चौदहरत्न : चक्रवर्ती के पुण्य प्रभाव से चक्ररत्न के साथ 14 रत्नों की उत्पज़ि होती है। इनके उत्पज़ि स्थान निज़्न हैं।

सेनापति, गृहपति, स्थपति, पुरोधा (पुरोहित), गज, घोड़ा और युवती ये रत्न विजयार्द्ध पर्वत पर, काकणीरत्न, चूड़ामणिरत्न और चर्मरत्न–ये तीन रत्न श्री गृह में तथा असि, दंड, छत्र और चक्ररत्न–ये चार रत्न आयुध शाला में उत्पन्न होते हैं।

नव निधियाँ : चक्रवर्ती के पुण्य प्रभाव से उनके श्रीपुर में भोगोपभोग की सामग्री देने वाली काल, महाकाल, पांडु, मानव, शंख, पद्म, नैसर्प, पिंगल और नानारत्न नवनिधियाँ उत्पन्न होती हैं।[14] प्रकारान्तर से उनकी उत्पज़ि स्थान नदीमुख भी कहा गया है।[15] यह निधियाँ अविनाशी थी। निधिपाल नामक देवों के द्वारा सुरक्षित थी और निरन्तर लोगों के उपकार मे आती थी।[16] यह कामवृष्टि नामक गृहपति के आधीन थी और चक्रवर्ती के समस्त मनोरथों को पूर्ण करती थी।[17] यह गाड़ी के आकार की थी। चार-चार भौंरों और आठ-आठ पट्टियों से सहित नौ योजन चौड़ी बारह योजन लज़्बी आठ योजन गहरी और वक्षारगिरि के समान विशाल कुक्षी से सहित थीं।[18]

अरनाथ चक्रवर्ती

पूर्व भव परिचय : जज़्बूद्वीप के विदेह क्षेत्र में सीता नदी के उज़र तट पर कच्छ नाम का एक देश है। उसके क्षेमपुर नगर में धनपति नाम का राजा राज्य करता था। वह बुद्धिमान, बलवान, न्यायवान,प्रतापवान और बहुत ही दयावान था। उसने अपने दान से कल्पवृक्षों को और निर्मल यश से शरत् चन्द्र के मरीची-मंडल को भी पराजित कर दिया था। उसकी चतुराई और उसके बल का सबसे बड़ा प्रमाण यह था कि उसके जीवन में उसका कोई भी शत्रु नहीं था। वह दीन-दुखी प्राणियों के दुज़ को देखकर बहुत ही दुखी हो जाता था, इसलिए वह तन-मन-धन से उनकी सहायता किया करता था। उसके राज्य में राजवर्ग तथा प्रजागण–सभी लोग अपनी आजीविका के उपायों का उल्लंघन नहीं करते थे, इसलिए कोई दुखी नहीं था।

एक दिन राजा ने अर्हन्नन्दन नामक तीर्थंकर से धर्म का स्वरूप और चतुर्गतियों के दुखों का श्रवण किया, जिससे उसका चिज़ विषयानन्द से सर्वथा हट गया। उसने अपना राज्य पुत्र को दे दिया और स्वयं किसी आचार्य के पास दीक्षित हो गये। आचार्य के पास रह कर उसने ग्यारह अंगों को अध्ययन किया तथा दर्शन-विशुद्धि आदि सोलह कारण भावनाओं का चिन्तवन किया। जिससे उसे तीर्थंकर नामक महापुण्य प्रकृति का बन्ध हो गया। इस तरह कुछ वर्षों तक कठिन तपस्या करने के बाद उसने आयु के अन्त में समाधि मरण किया, जिससे वह जयन्त नामक अनुज़र विमान में अहमिन्द्र हुआ। वहाँ उसकी आयु तैंतीस सागर प्रमाण थी, लेश्या शुज़्ल थी और शरीर की ऊँचाई एक हाथ की थी। वहाँ वह अवधिज्ञान से सातवें नरक तक की बात जान लेता था। तैंतीस हजार वर्ष बाद मानसिक आहार लेता था और तैंतीस पक्ष में एक बार सुगन्धित श्वासोच्छ्वास ग्रहण करता था। वहाँ वह प्रवीचार सज़्बन्ध से सर्वथा रहित था। उसका समस्त समय जिन पूजा या तज़्व चर्चाओं में ही बीतता था। यही अहमिन्द्र आगे के भव में भगवान अरनाथ होगा।

वर्तमान परिचय : जज़्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में कुरुजांगल देश है। उसके हस्तिनापुर नगर में सोमवंशीय काश्यप गोत्री राजा सुदर्शन राज्य करता था। तरह-तरह के कौतुक करते हुए उन दोनों का समय बहुत ही सुख से व्यतीत होता था।

जब ऊपर कहे हुए अहमिन्द्र की आयु केवल छह माह की बाकी रह गयी, तब से राजा सुदर्शन के घर पर देवों ने रत्न-वर्षा करनी शुरू कर दी। कुबेर ने एक नवीन हस्तिनापुर की रचना कर उसमें महाराज सुदर्शन तथा समस्त नागरिक प्रजा को ठहराया। इन्द्र की आज्ञा से देव कुमारियाँ आ कर रानी मित्रसेना की सेवा करने लगीं। इस सब शुभ निमिज़ों को देख कर राजा प्रजा को बहुत ही आनन्द होता था।

गर्भ कल्याणक

गर्भ कल्याणक फाल्गुन कृष्ण तृतीया के दिन रेवती नक्षत्र के उदय रहते हुए, पिछली रात्रि में महादेवी मित्रसेना ने सोलह स्वप्न देखे। उसी समय उज़्त अहमिन्द्र जयन्त विमान से च्युत होकर उसके गर्ज़ में आया। प्रातः होते ही रानी ने प्राणनाथ राजा सुदर्शन ने स्वप्नों का फल पूछा, तब उन्होंने कहा कि आज तुज़्हारे गर्भ में जगद्वृन्द किसी महापुरुष ने प्रवेश किया है। नव माह बाद तुज़्हारे अत्यन्त प्रतापी पुत्र उत्पन्न होगा। इधर राजा रानी को स्वप्नों का फल सुना रहे थे, उधर जय-जय शज़्द से आकाश को गुंजाते हुए देव लोग आ गये और भावी तीर्थंकर अरनाथ का गर्भ कल्याणक उत्सव मनाने लगे। उन्होंने राजा सुदर्शन और रानी मित्रसेना का बहुत ही सन्मान किया और स्वर्ग से लाए हुए अनेक वस्त्राभूषण भेंट किए। गर्भाधान का उत्सव सज़्पन्न कर देव अपने-अपने स्थान पर चले गये।

जन्म कल्याणक

नौ माह बाद रानी मित्रसेना ने मृगसिर शुज़्ल चतुर्दशी के दिन पुष्य नक्षत्र में मति, श्रुत, अवधिज्ञान से विभूषित तीर्थंकर पुत्र को जन्म दिया। पुत्र के उत्पन्न होते ही सब ओर आनन्द छा गया। भज़्ति से ओत-प्रोत चारों निकायों के देवों ने मेरु पर्वत पर ले जाकर उनका अभिषेक किया। वहाँ से लौटकर इन्द्र ने महाराज सुदर्शन के घर पर आनन्द नामक नाटक प्रदर्शित किया तथा अनेक प्रकार के उत्सव किये। उस समय राज-भवन में जो भीड़ एकत्रित हुई, उससे ऐसा मालूम होता था कि मानों लोक के सज़्पन्न प्राणी वहाँ एकत्रित हो गये हों। तीर्थंकर पुत्र का नाम 'अरनाथ' रखा गया। देव 'जन्म कल्याणक' का उत्सव सज़्पन्न कर अपने-अपने स्थानों पर चले गये।

राज भवन में भगवान अरनाथ का बड़े प्यार से पालन होने लगा। वे अपनी बाल चेष्टाओं से माता-पिता, बन्धु-बान्धव आदि को बहुत ही हर्षित करते थे। माता मित्रसेना की आशाओं के अनुरूप वे निरन्तर बढ़ने लगे। जब उन्होंने युवावस्था में पदार्पण किया, तब उनकी शोभा अनुपम हो गयी थी। उनकी सुन्दरता से मुग्ध होकर लोग उन्हें 'कामदेव' कहने लगे थे।

जिनराज अरनाथ की उत्कृष्ट आयु चौरासी हजार वर्ष की थी। तीस धनुष ऊँचा शरीर था, शरीर की कान्ति सुवर्ण के समान पीत थी। उनके शरीर को रोग-शोक, दुख आदि तो छू भी नहीं पाए थे। योग्य अवस्था देखकर महाराज सुदर्शन ने उनका कुलीन कन्याओं के साथ विवाह कर दिया और कुछ समय बाद उन्हें युवराज पद पर नियुज़्त कर दिया। इस तरह कुमार काल के इज़्कीस हजार वर्ष जाने पर उन्हें राज्य प्राप्त हुआ और इतने ही वर्ष बाद उनकी आयुधशाला में चक्ररत्न प्रकट हुआ। भगवान् अरनाथ चक्ररत्न को आगे कर विशाल सेना के साथ दिग्विजय के लिए निकले और कुछ वर्षों में ही समस्त भरत क्षेत्र में अपना आधिपत्य स्थापित कर हस्तिनापुर वापिस लौट आए। दिग्विजयी सम्राट अरनाथ का नगर प्रवेशोत्सव धूम-धाम से मनाया गया था। उन्होंने चक्रवर्ती होकर इज़्कीस हजार वर्ष तक राज्य किया और इस तरह उनकी आयु तीन चौथाई अंश गृहस्थ अवस्था में ही बीत गया।

तप कल्याणक

एक दिन शरद ऋतु के बादलों का नष्ट होना देख कर वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसी समय लौकान्तिक देवों ने आ कर स्तुति की और उनके विचारों का समर्थन किया, जिससे उनकी वैराग्य भावना बड़ी ही प्रबल हो उठी थी। दीक्षा कल्याणक मनाने स्वर्ग से समस्त देव-देवेन्द्र उनके राज्य में आए। उन सबने मिलकर महाराज अरनाथ का दीक्षा अभिषेक किया तथा वैराग्य को बढ़ाने वाले अनेक उत्सव किए। महाराज अरनाथ अपने पुत्र अरविन्द कुमार को राज्य देकर देव निर्मित 'वैजयन्ती' नाम की पालकी पर सवार हो सहेतुक वन में पहुँचे। वहाँ उन्होंने दो दिन के उपवास की प्रतिज्ञा लेकर मृगसिर शुज़्ल दशमी के दिन रेवती नक्षत्र के समय जिन दीक्षा धारण कर ली। समस्त वस्त्राभूषण उतार कर फेंक दिए

और पंचमुष्टियों से समस्त केश उखाड़ डाले। उन्हें उसी समय मन-पर्यय ज्ञान प्राप्त हो गया। उनके साथ एक हजार अन्य राजाओं ने भी दीक्षा ली थी। देव लोग 'निःक्रमण-कल्याणक' का उत्सव समाप्त कर अपने-अपने स्थान चले गये और महा मुनिराज अरनाथ मेरु पर्वत की तरह अचल हो आत्म ध्यान में लीन हो गये। पारणा के दिन वे चक्रपुर नगर में गये, वहाँ राजा अपराजित ने उन्हें शुद्ध प्रासुक आहार दिया। पात्र-दान से प्रभावित होकर देवों ने राजा अपराजित के घर पर पंचाश्चर्य प्रकट किए। आहार लेने के बाद वे वन में लौट आए और वहाँ कठिन तपश्चर्या के द्वारा आत्म शुद्धि करने लगे।

ज्ञान कल्याणक

उन्होंने कई जगह विहार कर छद्मस्थ अवस्था के सोलह वर्ष व्यतीत किये। इन दिनों वे मौनपूर्वक रहते थे। इसके अनन्तर वे उसी सहेतुक वन आ कर दो दिन के उपवास की प्रतिज्ञा लेकर आम्र पेड़ के नीचे बैठ गये। वहाँ पर उन्हें घातिया कर्मों का क्षय हो जाने से कार्तिक शुज़्ला द्वादशी के दिन रेवती नक्षत्र में संध्या के समय पूर्णज्ञान 'केवलज्ञान' प्राप्त हो गया, जिससे वे समस्त जगत् की चराचर वस्तुओं को हस्तकमलावत् स्पष्ट जानने लगे। उसी समय देवों ने आकर 'ज्ञान कल्याणक' का उत्सव किया। कुबेर ने दिव्यसभा 'समवशरण' की रचना की, जिसके मध्य में सिंहासन पर अन्तरिक्ष विराजमान होकर उन्होंने अपना सोलह वर्ष का मौन भंग किया मधुर दिव्य ध्वनि में सबको उपदेश देने लगे। उपदेश के समय समवशरण की बारहों सभाएँ पूर्णतः भरी हुई थी। उनके उपदेश से प्रतिबुद्ध अनेक क्षेत्रों में विहार किया और जैन धर्म का व्यापाक प्रचार किया। अनेक पथ भ्रान्त पुरुषों को उन्होंने सच्चे पथ पर लगाया।

उनके समवशरण में कुज़्भार्य आदि तीस गणधर, छह सौ दश श्रुतकेवली, पैंतीस हजार आठ सौ शिक्षक, अट्ठाईस सौ अवधिज्ञानी, अट्ठाईस सौ केवलज्ञानी और एक हजार छह सौ वादी थे। इस तरह सब मिलाकर अर्द्ध लक्ष (पचास हजार) मुनिराज थे, तीन लाख श्राविकाएँ थीं, असंज़्यात देव-देवियाँ और असंज़्यात तिर्यंच थे।

मोक्ष कल्याणक

जब उनकी आयु एक माह की अवशिष्ट रह गयी, तब उन्होंने सज़्मेदशिखर पर पहुँच कर एक हजार मुनियों के साथ प्रतिमा योग धारण कर लिया और वहीं से चैत्र कृष्ण अमावस्या के दिन रेवती नक्षत्र में रात्रि के पहले प्रहर में नाटक कूट से मोक्ष प्राप्त किया। देवों ने आकर उनके निर्वाण क्षेत्र की पूजा की।[19]

नवागढ़ से प्राप्त साक्ष्य के आधार पर गुरुकुल परज़्परा

भारतीय संस्कृति गुरु शिष्य परज़्परा की पोषक है अर्थात् पुरातनकाल गुरु कुलों में गुरु अपने शिष्यों को उनकी योग्यतानुसार संस्कारारोपण करके उनके व्यज़्तित्व का परिमार्जन करते थे। इतिहास इसका साक्षी है।[20]

राजकीय भोग विलास से परे प्राकृतिक सुरज़्य उपवन/वन में स्थित आश्रमों में राजपुत्र से लेकर सामान्य विद्यार्थी तक विद्याध्ययन करते थे।[21] गुरुकुल के शिष्यों में ऊँच-नीच का भेदभाव नहीं होता था। सामान्यतः दैनिक कार्य स्वयं ही सज़्पादित करने के साथ जंगल से लकड़ी लाना, रसोई तैयार करना, सफाई करना, बागवानी, गुरुओं के समस्त कार्य में सहयोग करना सभी की दिनचर्या का अंग होता था।

अनवद्या हि विद्या स्याल्लोकद्वयफलावहा।[22]

निर्दोष, अच्छी तरह से परिश्रम पूर्वक अज़्यस्त विद्या ही ऐहिक और पारलौकिक कार्यों को सफल करती है अर्थात् जिस शिक्षा शिक्षा से शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास होता है वही यथार्थ से अनवद्य शिक्षा है। (क्षत्रचूड़ामणि 3/45 आचार्य वादीभ सिंह सूरि)

यहाँ प्राप्त चारों मानस्तज़्भों में तीन और अहित एवं एक ओर उपाध्याय बिज़्ब उत्कीर्ण है । संवत 1188 के उपाध्याय बिज़्ब, शाज़् सहित, पिच्छी चिन्ह सहित उपाध्याय बिज़्ब के साथ 7 और उपाध्याय खंडित बिज़्ब प्राप्त हुए हैं।

नन्दपुर वर्तमान नवागढ़ जिला ललितपुर (उ.प्र.) में संगृहीत कलात्मक शिल्पों का पुरातज़्ववेज़ाओं द्वारा सूक्ष्म अध्ययन से ऐसे तथ्य सामने आए हैं, जो इसे विशाल गुरुकुल या शिक्षा केन्द्र के रूप में स्थापित करते हैं।[23]

जिनशासन के गुरुकुलों का संचालन वरिष्ठ आचार्यों के निर्देशन में शिष्यों को ब्रह्मचर्य, संयम, तपश्चरण, जीवनयापन की अहिंसक जीवन शैली के साथ गृहस्थ धर्म की शिक्षा भी दी जाती थी। शिक्षा कार्य वरिष्ठ उपाध्यायों द्वारा किया जाता था, जिसमें सामान्य विद्यार्थी, संयमी ब्रह्मचारी साधक श्रावकों के साथ साधुओं को भी शिक्षा के विशिष्ट आयामों का स्वाध्याय/अध्ययन कराया जाता था। जिससे वह अपनी क्षमता, बुद्धि, विवेकानुसार भविष्य की योजना को साकार रूप प्रदान कर सके।

ऐसे गुरुकुल नगरों से दूर एकान्त सुरज़्य क्षेत्रों में होते थे। जहाँ प्राकृतिक पर्यावरण में सभी विद्याओं एवं कलाओं का प्रयोगात्मक प्रशिक्षण भी दिया जाता था।

नवागढ़ क्षेत्र के विस्तार और वहाँ पर विभिन्न पहाड़ियों पर स्थित शैलाश्रयों, शयनाश्रयों, साधनाश्रयों 9 अध्ययन शैलाश्रय पर दृष्टिपात करने पर से कई रहस्य उद्घाटित होते हैं।

बगाज की टौरिया पर स्थित विशेष द्विभागीय गुफा का 11 जून 2016 में उद्घाटन करते समय चंवरधारिणी इन्द्राणि, अज़्बिका एवं साहु पाहल अंकित शिलाखंड प्राप्त हुए।[24] दोनों भागों का नैसर्गिक आकार विलक्षण है। द्विभागीय गुफा का फर्स 25 म 20 फुट है जो गुफा के भीतर से बाहर तक एक ही पाषाण खंड से निर्मित है, परन्तु विशेषता यह है कि भीतरी भाग बाहरी भाग से स्वाभाविक रूप से ऊँचा है अर्थात् बहिर्भाग की अपेक्षा दोनों गुफाओं का भीतरी भाग क्रमशः ऊँचा है। जहाँ वरिष्ठ आचार्य एवं उपाध्याय गुफा के भीतर बैठकर बाहर बैठे शिष्यों को विद्याध्ययन कराते होंगे।

उपाध्याय बिज़्ब

क्षेत्र से 3 किमी. दूर पश्चिम में स्थित जैन की पहाड़ी में स्थित गुफा से 28.4.2014 को प्राप्त संवत् 1188 (सन् 1131) की उपाध्याय परमेष्ठी की प्रशस्त एवं मनोज्ञ प्रतिमा[25] जिसकी मुद्रा सुखासन में हैं, बाएँ हाथ में लज़्बायमान शास्त्र एवं दाहिना हाथ ध्यानमुद्रा में है जिसकी भुजा में पिच्छी दबी हुई है। मुखाकृति सौज़्य, विशाल नयन एवं लज़्बकर्ण के साथ अत्यन्त मनोज्ञ है। गहरी

नाभि सहित उदर एवं पुष्ट वक्षस्थल इनकी सुदृढ़ संहनन के साथ दीर्घ साधना को दर्शाते हैं।

यह उपाध्याय बिम्ब देवगढ़ क्षेत्र के सुप्रसिद्ध उपाध्याय बिम्ब संवत् 1333 (सन् 1276) से 145 वर्ष प्राचीन है। देवगढ़ क्षेत्र में आचार्य एवं उपाध्याय परमेष्ठी द्वारा विद्याध्ययन (पाठशाला) के कई शिल्प संग्रहीत हैं।[26]

अकलंक एवं निकलंक

सिर विहीन कुमार युगल कृति का शिल्प, आभूषण सज्जा, देहाकृति एवं सौष्ठव अत्यन्त चित्ताकर्षक है। एक शिलाखंड में दोनों कुमार अग्रज एवं अनुज के रूप में दृष्टव्य हैं। दोनों के गलहार, स्तनहार, बाजूबन्द, कटिबन्ध आदि अन्य अलंकरण अत्यन्त सूक्ष्मता से गढ़े गये हैं। हीयमान कटिप्रदेश, सुदीर्घ पुष्ट वक्षस्थल उत्कृष्ट शिल्प की अभिव्यक्ति है।[27] अग्रज कुमार के बाएँ हाथ में लम्बायमान शास्त्र पत्र एवं दाहिने हाथ में विशेष लेखनी इनके विद्याध्ययन के संकल्प को दर्शाती है।[28]

जैन इतिहास में विद्याध्ययन के प्रति संकल्पित एवं जिनवाणी के प्रति समर्पित उत्कृष्ट एवं विलक्षण मेधा-शक्ति वाले कुमार अकलंक एवं निकलंक प्रसिद्ध रहे हैं। नन्दपुर वर्तमान नवागढ़ में स्थापित गुरुकुल एवं जिनवाणी के प्रति निकलंक के बलिदान को दर्शाने हेतु इस शिल्प की विशेष रूप से स्थापना की गयी प्रतीत होती है।

कुमार अकलंक-निकलंक ने कांचीपुरी के बौद्ध आश्रम में गुप्तरूप से विद्याध्ययन किया। कुमार अकलंक एकपाठी एवं अनुज निकलंक दोपाठी थे। इन कुमारों के जैन ज्ञात होते ही उन्हें कारागृह में डाल दिया गया है। जिनसे वे युक्तिपूर्वक भाग निकले, घुड़सवार सैनिकों द्वारा पकड़े जाने के भय से अग्रज अकलंक ने तालाब में छिपकर अपनी रक्षा की। अनुज निकलंक तालाब के पास धोबी पुत्र के साथ सैनिकों द्वारा मरण को प्राप्त हुआ। तत्पश्चात्–अकलंक ने विद्याध्ययन करके बौद्धों को शास्त्रार्थ

में कई जगह पराजित करके जैनधर्म की प्रभावना की। इस प्रकार जिनवाणी के लिए निकलंक का बलिदान जगत्प्रसिद्ध है।[29]

सोजना (जिला ललितपुर) की बावड़ी से प्राप्त 4 मानस्तम्भ शिल्पकला की अनुपम कृति है।[30] 4 फुट उत्तुंग मानस्तम्भ संवत् 1203 में प्रतिष्ठित कराए गये हैं। मानस्तम्भ के शीर्ष पर तीन तरफ अरिहंत बिम्ब एवं एक तरफ उपाध्याय परमेष्ठी उत्कीर्ण हैं जो वहाँ की शैक्षणिक गतिविधियों एवं जिनालय समूहों को दर्शाते हैं।

इन विशेष शिल्प साक्ष्यों से सिद्ध होता है कि नन्दपुर वर्तमान नवागढ़ में प्राचीनकाल में विशाल गुरुकुल रहा होगा, जहाँ सैंकड़ों श्रमण वहाँ की गुफाओं में आत्मसाधना करते हुए विद्यार्थियों को धर्माराधना एवं लौकिक शिक्षा प्रदान करके उनमें संस्कारारोपण करते रहे हैं।[31]

नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखों के आधार पर प्रतिमाओं का अध्ययन

प्राचीन काल से चंदेल शासन तक सभी धर्मों में आपसी सद्भाव रहा है। विशेष रूप से शैव, वैष्णव के साथ जैनधर्म को विशेष परिश्रय मिला है। यही कारण है कि अधिकांश कलाक्षेत्रों, तीर्थक्षेत्रों एवं पुरातात्त्विक नगरों में इनके मंदिरों का निर्माण एक ही स्थान में हुआ है।

नवागढ़ का विध्वंस होने के पहले यह एक धर्मभाव समृद्ध व्यावसायिक, शैक्षणिक, राजनैतिक तथा सांस्कृति वैभव सम्पन्न महानगर रहा है। आज भी यहाँ हनुमान मंदिर, देवी मंदिर, शिव मंदिर, बगाजमाता, कारस देव मंदिर, जैन मंदिरों के साथ विद्यमान हैं।

उनमें प्राप्त अभिलेखों के आधार पर निम्न रूप से प्रतिमाओं का निरूपण किया गया है।

स्वास्तिक (卐)

(卐) स्वस्तिक जैनियों का प्रमुख चिह्न है, प्रत्येक शुभ कार्य में इसका अंकन परम आवश्यक और अनिवार्य है, यह धर्म का अंग है, जैन ग्रन्थों, जैन देवालयों और जैन ध्वजों में सहज ही देखा जा सकता है।[33]

बुन्देलखंड जनपद में स्वस्तिक का प्रयोग हर मंगल कार्य में होता रहा है।

लोक जीवन में इसे साँतिया कहते हैं। इसकी आकृति (卐) दो आड़ी खड़ी रेखाओं को मध्य से काटते हुए निर्मित होती है, जिसके छोरों को बाएँ से दाएँ (क्लॉक वाईज) मोड़ दी जाती है। व्रत-पर्वों और विवाह आदि मंगल कार्यों के समय महिलाएँ हल्दी से साँतिया बनाती हैं। भवनों के प्रवेश द्वार पर भी हल्दी, मिट्टी, चूना और सीमेंट से साँतिया बनाने की परम्परा रही है। सनातन धर्म एवं जैन मत में साँतिया का विशेष महत्त्व है। यह सुख-सम्पन्नता एवं शुभ सूचक चिह्न है। बौद्ध धर्म के यति अनुष्ठानी एवं शैव-शक्ति तान्त्रिक अनुष्ठानों में साँतिया का प्रयोग करते रहे हैं। परन्तु अनुष्ठानी साँतिया के मुड़े हुए किनारे थोड़े ऊर्धमुखी होते हैं। शास्त्रीय रूप से साँतिया मंगलाचरण का संकेत चिह्न है। जहाँ साहित्यकार रचना के प्रारम्भ में मंगलाचरण लिखते हैं, वहीं जनसाधारण के लिए मंगलसूचक चिह्न (卐) साँतिया दिया गया है।

स्वस्तिक सर्वोपरि कल्याण की मंगलभावना का परिचायक है। विवाह के अवसर पर वर-वधू के मध्य आजीवन प्रेम रहे, इसलिए पाणिग्रहण के समय दोनों को स्वस्तिक पर दृष्टि स्थिर रखने के लिए कहा जाता है। नए जन्मे शिशु को छठी के दिन स्वस्तिक बनाए हुए वस्त्र पर लिटाया जाता है। लेन-देन करने वाले व्यापारी, साहूकार बहियों पर स्वस्तिक बनाते हैं। पद्मपुराण में उल्लेख है कि चतुर्मास में मन्दिर में भगवान् के पास स्वस्तिक एवं अष्टदल रंगोली बनाने वाली महिलाओं को वैधव्य का भय नहीं रहता। मन्दिरों के प्रवेश द्वार पर और बाहरी भाग में स्वस्तिक शिल्प प्राप्त होता है।

हनुमान प्रतिमाएँ

बुन्देलखंड क्षेत्र में हनुमान की भी कई मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। प्रायः ये विशालकाय आकृतियाँ हैं। इनमें हनुमान एक पैर से राक्षसी को दबाए हुए प्रदर्शित हैं। सीरोनखुर्द से प्राप्त एक मूर्ति में वे विस्फारित मुख के साथ वितर्क मुद्रा में अंकित किए गये हैं। उनकी कमर में एक छोटी कटार लगी हुई है। मूर्ति पृष्ठभाग में पूँछ तथा अन्य अलंकरणों का चिह्नाभास प्रकट किया गया है।[34]

शिव प्रतिमाएँ

शिव शंकर तो बुन्देलखंड में जन-जन के देव हैं। स्त्री-पुरुष बिना विभेद के किसी भी समय उनकी आराधना-उपासना करते हैं। आदर्श में वह शिव हैं तो यथार्थ में प्रकृति पुरुष, अर्द्धनारीश्वर (लिंग-योनि) हैं। सृष्टि के रचनाकार हैं। पुरुष एवं नारी के सहयोग, प्रेम एवं सम्भोग बिना सृष्टि का सृजन असम्भव है। सृजन एवं विकास की यह सतत अनिवार्य प्रक्रिया वैज्ञानिक हैं, प्रायोगिक है जिसे मनीषियों ने मर्यादा और आदर्श में सत्य को शिव कहा है। इसी सत्य शिव से सृष्टि का सृजन होता है जो कल्याण रूप है, सुखद है, सत्य है, सुन्दर है। इसीलिए शिव कल्याण के देव हैं। शिव जो सृजन के रहस्यमय प्रतीक देव थे, वह शंकर-पार्वती के रूप में अवतरित हुए। उनकी प्रतिमाओं का निर्माण हुआ और प्रतीक से मानवीय रूप से जो पूजे जाने लगे। बुन्देलखंड जनपद में शैव विरायत के महत्त्वपूर्ण दर्शनीय तीर्थ स्थल हैं–कुंडेश्वर, देवगढ़, बड़ागाँव, धसान, देरी, कोटरा, मोहनगढ़ जिला टीकमगढ़ में, खजुराहो मऊसानियाँ, जटाशंकर, भीमकुंड एवं गुर्जन जिला छतरपुर में आदि।

चाँदपुर से प्राप्त राबीमहल संकलन की एक नृत्य प्रतिमा बड़ी ही अलौकिक है।[35]

गणेशदेव की प्रतिमाएँ

बुन्देलखंड में गणेश देव की मान्यता सर्वाधिक है। सर्वप्रथम उनकी मनौती की जाती है। वे शिवजी के चमत्कारी पुत्र हैं। उनका रूप आधा पशु (हाथी) आधा मनुष्य का है। उनका वाहन चूहा है। वह अपने चारों हाथों में क्रमशः त्रिशूल, मोदक, पुस्तक एवं कमल लिए रहते हैं। वह पाँच कामेन्द्रियों एवं पाँच ज्ञानेन्द्रियों के देव हैं। परन्तु हर काम में विघ्न उत्पन्न करने वाले हैं, जिस कारण प्रत्येक शुभ कार्य करने से पहले उनकी पूजा-आराधना कर, मनौती कर ली जाती है कि कार्य में वह स्वयं अराजकता न उत्पन्न करें तथा यदि कोई अन्य उत्पन्न करें तो न करने दें। बुन्देलखंड में तो कोई कार्य प्रारम्भ होने अथवा करने के लिए कहने की प्रथा है कि 'श्रीगणेश कब हो रहा है।' 'श्री गणेश हो गया है।' चिट्ठी-पत्री लिखने से पहले पत्र के शीर्ष भाग पर 'श्री गणेशाय नमः' लिखा जाता है।

पूजन के समय यदि गणेश प्रतिमा उपलब्ध नहीं होती तो गोबर के गणेश तैयार कर 'दौना' में रखकर पूजन कर लिया जाता है। महिलाएँ गणेश चौथ का व्रत रखती हैं। घर-मकान हर प्रकार की विघ्न-बाधाओं, दीठ एवं प्रेत बाधा से मुक्त रहे, इसलिए प्रवेश द्वार पर गणेश प्रतिमा स्थापित करने की प्रथा यहाँ है। प्रत्येक देवालय में गणेश प्रतिमा स्थापित की जाती है। दतिया का प्राचीन नाम दन्त नगर, एक दन्त गणेश जी के नाम पर था। गणेश जी के पृथक् से कलात्मक मन्दिर भी बुन्देलखंड में हैं, जिनमें प्रमुख हैं–कर्बी जिला बाँदा का गणेश मन्दिर, बानपुर जिला ललितपुर का गणेश मन्दिर, पिठौरिया जिला सागर के गणेश जी, टीकमगढ़ का गणेश मन्दिर, भैरव मन्दिर, महोबा का भैरव मन्दिर जो दर्शनीय हैं।[36]

गणपति का अंकन भी इस क्षेत्र में गुप्तकाल से लेकर अब तक लोकप्रिय बना रहा। देवगढ़ के दशावतार मन्दिर में गणेश का अंकन हुआ है। यहाँ की नाहरघाटी तथा राजघाटी में अंकित सप्त मातृकाओं के साथ गणेश हैं। यह सभी मूर्तियाँ लगभग छठी शताब्दी ई. की है। गणेश की मध्यकालीन प्रतिमाएँ विविध रूपों में प्राप्त हुई हैं।

ललितपुर जिले के बानपुर गाँव से दो किलोमीटर आगे गणेशपुरा में नृत्य गणपति की अठाराहभुजी विशाल प्रतिमा लगी हुई है।[37] बुन्देलखंड के संग्रहालयों में भी नृत्य गणेश की कई सुन्दर प्रतिमाएँ सुरक्षित हैं। झाँसी संग्रहालय की चौदह भुजी नृत्य गणेश की मूर्ति उल्लेखनीय है।

सूर्य प्रतिमाएँ

सूर्य-पूजा बुन्देलखंड में प्राचीन काल से प्रचलित रही है। सूर्य भगवान् जो पृथ्वी के प्रत्यक्ष प्रभु हैं तथा लोगों के समक्ष साक्षात् प्रकट होकर दर्शन देते हैं–ऊर्जा, गति, ज्ञान एवं प्रकाश के एक मात्र भगवान् हैं। वह प्राकृतिक हैं। न वह किसी के बनाए हैं और न किसी के अवतार हैं बल्कि सूर्य ही शिव हैं और विष्णु भी सूर्य हैं। इस प्रकार सूर्य आदि देव हैं। भगवान् सूर्य नहीं तो सृष्टि जी नहीं। संसार को जो भी रूप-स्वरूप दिखता है वह सब सूर्य नारायण की कृपा है। भगवान् रामचन्द्र जी रावण पर विजय सूर्य देव की स्तुति करने के पश्चात् ही प्राप्त कर पाए थे। द्वापर में श्रीगणेश ने सूर्य नारायण को देवाधि देव माना था तथा

सूर्य उपासना-आराधना के लिए मध्य एशिया से माघ ब्राह्मणों को आमन्त्रित किया था। संसार में प्रकाश एवं लोगों में नेत्र ज्योति के रूप में सूर्य भगवान् व्याप्त रहते हैं। नन्दिकेश्वर संहिता में उल्लेख है कि जब तक सूर्य को अर्घ्य न दिया जाए तब तक विष्णु एवं शक्ति देवी की पूजा का किसी को अधिकार नहीं है। प्रातःकाल दातून करने अथवा स्नान करने के पश्चात् सूर्य को नमस्कार करते एवं अर्घ्य देते हैं। मकर संक्रान्ति जो सूर्य भगवान् का पर्व है, वह यहाँ के राष्ट्रीय पर्व जैसा है जिसे यहाँ के लोग संक्रान्ति अथवा बुड़की कहते हैं। शनि मन्दिर चन्देरी, झाँसी एवं मऊसानियाँ, मामौन पहाड़ी टीकमगढ़, मामौन पहाड़ी (छतरपुर) में दर्शनीय है।[38]

बुन्देलखंड क्षेत्र में कई सूर्य मन्दिर निर्मित हुए हैं, जिनमें चित्रगुप्त मन्दिर, खजुराहो, ऊमरी तथा मड़खेड़ा (जिला-टीकमगढ़), रहलिया, रहली (सागर) आदि सूर्य मन्दिरों का उल्लेख किया जा सकता है। सूर्य देव की अनेक स्थानक तथा आसन प्रतिमाएँ जो सामान्यतया अन्य क्षेत्रों में भी मिलती है, यहाँ भी उपलब्ध हुई हैं।[39]

शक्ति प्रतिमाएँ

इस क्षेत्र में पार्वती, दुर्गा, लक्ष्मी, सरस्वती आदि देवियों की प्रतिमाएँ भी प्राप्त हुई हैं। सीरोनखुर्द से प्राप्त पद्महस्ता तथा पद्म संस्थिता लक्ष्मी की स्थानक मूर्ति उल्लेखनीय है। दुधई, चाँदपुर से सरस्वती की अनेक प्रतिमाएँ उपलब्ध हुई हैं। गंगा तथा जमुना का अंकन मन्दिर के गर्भगृह के द्वार स्तम्भों पर गुप्तकाल से ही प्रारम्भ हो गया था।

ब्रह्मा की एकाकी तथा शक्ति के साथ अंकित अनेक प्रतिमाएँ इस क्षेत्र से प्राप्त है। ब्रह्मा के प्रत्यक्षतः तीन मुख दिखलाए गये हैं। शक्ति के साथ आलिंगन मुद्रा में अंकित ब्रह्मा की इतनी अधिक प्रतिमाएँ इसी क्षेत्र से प्राप्त हुई है।

सीरोनखुर्द से प्राप्त एक द्विभुजी आकृति ब्रह्मा अपने दाहिने हाथ से वायुपूरित वस्त्र को ताने हुए खड़े हैं। उनका बायाँ हाथ कट्यवलम्बित है। पृष्ठांकन में उनका वाहन मृग प्रदर्शित किया गया है। कला की दृष्टि से लगभग आठवीं शताब्दी की यह प्रतिमा उत्कृष्ट कोटि की है। **नवागढ़ के देवी मन्दिर में त्रिमुखवाली प्रतिमा स्थापित है जो अन्वेषण का विषय हैं ।**

सन्दर्भ—

1. इलियट, भाग 1, पृ. 10
2. हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मेडिकल इंडिया, भाग-2
3. इलियट, भाग 1, पृ. 27
4. प्रबोध चन्द्रोदय, अनुवाद, टेलर, पृ. 187
5. अलबरूनी, अनु. संतराम, भाग-2, पृ. 102
6. इलियट, भाग 1, पृ. 491
7. बुन्देलखंड : संस्कृति, परज़्परा और विरासत –डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी
8. कजली समय-कजरियन की समैया -डॉ. वीरेन्द्र निर्झर, पृष्ठ 104,113,118
9. कजली समय, कजरियन की समैय – डॉ. वीरेन्द्र निर्झर
10. तिलोयपण्णज़ी, गाथा 533–आचार्य यतिवृषभ
11. मध्यप्रदेश के जैन संस्कृत अभिलेखों का अध्ययन-शोध प्रबन्ध 2013, अरविन्द कुमार जैन, अध्याय 3
12. चक्रवर्ती अरनाथ–सज़्पादक ब्र. जयकुमार जैन 'निशान्त', पृ. 10
13. चक्रवर्ती अरनाथ–सज़्पादक ब्र. जयकुमार जैन 'निशान्त', पृ. 11
14. सिद्धान्तसार दीपक, आचार्य सकलकीर्ति
15. तिलोयपण्णज़ी, आचार्य यतिवृषभ, गाथा 1397
16. हरिवंश पुराण, आ. जिनसेन, सर्ग 11, 109-111
17. हरिवंश पुराण, आ. जिनसेन, सर्ग 11, पृ. 112-113
18. सिद्धान्तसार दीपक, आचार्य सकलकीर्ति
19. चक्रवर्ती अरनाथ, सज़्पादक, ब्र. जयकुमार निशांत, पृ. 106
20. संस्कृत जैन प्रबन्ध में प्रतिपादित शिक्षा पद्धति, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
21. संस्कृत जैन प्रबन्ध काव्यों में प्रतिपादित शिक्षा पद्धति, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
22. क्षत्र चूड़ामणि 3/45, आ. वादीभ सिंह सूरि
23. 1. प्राचीन जैनतीर्थ नन्दपुर शिलालेखों के दर्पण में, हरिविष्णु अवस्थी
    2. प्राचीन क्षेत्र के शिलालेख अहारजी–पं. गोविन्द दास जैन कोठिया 'न्यायतीर्थ'
    3. अहार क्षेत्र के शिलालेख–डॉ. कस्तूरचन्द जैन 'सुमन'
    4. श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़ नन्दपुर–डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी
24. नवागढ़ (नन्दपुर) इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी
25. 1. प्राचीन जैनतीर्थ नन्दपुर शिलालेखों के दर्पण में, हरिविष्णु अवस्थी
    2. श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नन्दपुर–डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी

26. नवागढ़ (नन्दपुर) इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी
27. सन्तों की पुरातन साधना स्थली, नवागढ़ प्रो. भागचन्द्र जैन, 'ज़ागेन्दु'
28. तीर्थंकर महावीर एवं उनकी आचार्य परज़्परा–भाग 2, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
29. 1. श्री दिग. जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नन्दपुर–डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी
    2. श्री अखिल भा. दिग. जैन गोलापूर्व डायरेज़्टरी, पं. मोहनलाल काव्यतीर्थ
    3. नवागढ़–एक महज़्वपूर्ण मध्यकालीन जैनतीर्थ, नीरज जैन सतना
30. 1. नवागढ़ (नन्दपुर) का इतिहास–हरिविष्णु अवस्थी
    2. सन्तों की पुरातन साधना स्थली, प्रो. भागचन्द्र जैन 'ज़ागेन्दु'
31. गुरुकुल परज़्परा का संवाहक–नवागढ़ (नन्दपुर) डॉ. श्रेयांस कुमार जैन–अनेकान्त 70/3-जुलाई-सितज़्बर, 2017
32. बुन्देलखंड : संस्कृति परज़्परा और विरासत, काशी प्रसाद त्रिपाठी, पृ. 19-19
33. उड़ीसा में जैनधर्म, डॉ. लक्ष्मीनारायण साहू पृ. 8-9
34. बुन्देलखंड का पुरातत्व, पृ. 49
35. वही
36. बुन्देलखंड : संस्कृति, परज़्परा और विरासत, काशी प्रसाद त्रिपाठी,
37. मुकर्जी, पी.सी. रिपोर्ट, आन दि एंटीकुटीज इन दि डिस्ट्रिज़्ट ऑफ ललितपुर, पृ. 37
38. बुन्देलखंड : संस्कृति, परज़्परा और विरासत–काशी प्रसाद त्रिपाठी
39. बुन्देलखंड का पुरातज़्व : डॉ. एस.डी. त्रिवेदी पृ. 51

नवागढ़ में प्राप्त शैल एवं धातु जैन मूर्तियों का अनुशीलन

जैन मूर्तिकला का विकास

जैन मान्यतानुसार प्रथम तीर्थंकर भगवान् ऋषभनाथ के पुत्र भरत चक्रवर्ती ने कैलाश पर जिनमन्दिर निर्माण कराकर प्रतिमाओं की स्थापना कराई थी। तभी से यह परम्परा निर्बाध चली आ रही है।[1]

जिन सिद्धान्तानुसार अकृत्रिम जिनबिम्ब एवं जिनमन्दिर अनादिनिधन (अविनाशी) है। अकृत्रिम चैत्यालय इसका साक्षात् प्रमाण हैं।[2] आज भी सौधर्मेन्द्र विदेह क्षेत्र में तीर्थंकरों के पंचकल्याणक मनाता है, अरिहन्त प्रभु के समवसरण में उनकी दर्शन पूजा करता है, प्रत्येक अष्टाह्निक में वह पूरे इन्द्र परिवार सहित नन्दीश्वर द्वीप में जाकर 24 घंटे लगातार 8 दिन तक अकृत्रिम जिनबिम्बों का अभिषेक एवं पूजन करता है।[3] साक्षात् अरिहन्त प्रभु का समवसरण छोड़कर रत्नमयी प्रतिमाओं का अभिषेक पूजन करते हैं क्योंकि साक्षात् केवली भगवान् का स्पर्श सम्भव नहीं है। अतः वह भगवान् का स्पर्शन एवं दर्शन प्राप्त करने की अभिलाषा से ही भक्ति करता है। नन्दीश्वर द्वीप के अकृत्रिम जिनबिम्बों के दर्शन पूजन से मिथ्यादृष्टि देव सम्यक्त्व को प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं।[4]

इस प्रकार जिनबिम्ब के साथ अभिषेक एवं पूजन की परम्परा भी अनादिनिधन है।

प्रतिमा निर्माण विधि

सभी प्राणियों में केवल मनुष्य ही आवास के साथ मन्दिर का निर्माण करता है। सभी प्राणी निर्वाह एवं निर्माण तक ही सीमित हैं, जबकि मानव निर्वाह एवं निर्माण के साथ-साथ निर्वाण की राह चुनता है। यह राह नवदेवताओं की आराधना, उपासना एवं गुणों को जीवन में उतार कर अपने चरण आचरण की ओर बढ़ाकर प्रशस्त करता है।

श्रावक का कर्तव्य है स्वयं मोक्षामार्गी बने एवं भावी पीढ़ी को भी मोक्षमार्गी बनाए। इसका सर्वोत्कृष्ट साधन है जिनमन्दिर एवं जिनबिम्ब की स्थापना।[5] प्राचीन काल में श्रावक में जब विशुद्ध तरीके से द्रव्यार्जन करके जीवन को

सार्थक बनाने के लिए जिनमन्दिर एवं जिनबिम्ब स्थापना के भाव होते थे तो वह दिगम्बर गुरुओं के पादमूल में जाकर अपनी भावना प्रकट करके आशीर्वाद एवं मार्ग निर्देशन प्राप्त करता था। तदनुसार शुभ लग्न, शुभ तिथि में जिनेन्द्रदेव की पूजा करके निर्व्यसनी एवं योग्य शिल्पी को साथ लेकर पहाड़ में जिनबिम्ब निर्माण योग्य शिला का चयन विधिपूर्वक करता था।[6] यथा शिला मोटी, विशाल, चिकनी, ठंडी, सुन्दर मजबूत, ठोस, अच्छी गन्धवाली, सुन्दर रंग एवं चमक वाली, बिन्दु दाग एवं रेखा से रहित मधुर ध्वनि वाली हो।[7]

तत्पश्चात् शुभलग्न में जिनेन्द्र पूजा करके, शिल्पी का यथायोग्य सम्मान कर मंगलगान करते हुए मन्त्रोच्चारणपूर्वक शिला को तराश कर सावधानीसे निकलवाता था।

शिला को गजरथ में विराजमान कर वादित्रों के साथ उल्लासपूर्वक लाकर जिनालय में स्थापित करवाता था। शुभलग्न-मुहूर्त-वार में अनादिमन्त्र से उस शिला को शुद्ध करके, उत्तम औषधियों के क्वाथों से शिला के परीक्षण से उसके अन्दर व्याप्त दोषों का निराकरण करते हैं, बिम्ब निर्माण का शुभारम्भ विनायक–सिद्ध यन्त्र की पूजा, शान्ति विधान करके शिल्पी को सप्तव्यसन का त्याग, ब्रह्मचर्य का पालन, अभक्ष्य पदार्थों का त्याग कराके स्वयं भी इसका संकल्प कर श्रावक अपना सौभाग्य मानता था।

शिला परीक्षण या आकर शुद्धि विधि

यह क्रिया जिनबिम्ब निर्माण के पूर्व शिला के भीतरी दोषों को जानने के लिए विधि-विधानपूर्वक दिन में सूर्य के प्रकाश में अनुष्ठानपूर्वक की जाती थी। जबकि वर्तमान में क्रिया औपचारिक रूप में जिनबिम्ब के ऊपर गर्भकल्याणक या जन्म कल्याणक के समय अर्धरात्रि में की जाती है।[8]

इस क्रिया में निम्न क्वाथों का प्रयोग किया जाता है–[9]

1. सप्तौषधि क्वाथ 2.पंचफल क्वाथ 3. छल्लपंच क्वाथ
4. दिव्यौषधि मूलाष्टक क्वाथ 5. द्वादशपल्लव क्वाथ
6. सर्वोषधि 7.अष्टगन्ध 8.उवटन

इन क्वाथों में विशेष औषधियों के प्रभाव से शिला खंड के भीतरी दोष प्रकट

हो जाते हैं। इस प्रकार निर्दोष शिला का चयन करके पूर्ण विधि-विधान से आगमोक्त एवं वास्तु के नियमानुसार बिम्ब निर्माण किया जाता था।

पाषाण प्रतिमा के दाग प्रकट करने के लिए निर्मल कांजी के साथ बेल वृक्ष की छाल का प्रयोग तथा पानी के साथ छिला हुआ गरी गोला प्रतिमा पर रगड़ने से रेखाओं की जानकारी हो जाती है।

जिनबिम्ब निर्माण की वर्तमान प्रक्रिया

वर्तमान में जिनबिम्ब प्रतिष्ठाओं का अतिरेक हो गया है, जिससे जिनबिम्ब की अवमानना एवं अवज्ञा होने लगी है शिल्पी की दृष्टि भी भावप्रधान न होकर अर्थप्रधान हो गयी है। प्रतिमाओं का परीक्षण एवं निर्माण विधिपूर्वक त्याज्य मुहूर्त एवं आगमोक्त न होने पर बिम्बप्रतिष्ठा समाज के लिए अशुभ सिद्ध हो रही है।[10] वास्तु ग्रन्थों का स्पष्ट उल्लंघन हो रहा है। सत्य तो यह है कि जिनबिम्बों की प्रतिष्ठाएँ श्रावक एवं श्रमण की मान प्रतिष्ठा का साधन बन गयी हैं। उनमें न मुहूर्त देखा जाता है और न पात्रों की संयम साधना न धर्माचरण ।[11]

जिनबिम्ब का वास्तु विधान

जिनबिम्ब अरिहन्त प्रभु की प्रतिकृति होता है। अतः वास्तु जिनबिम्ब के प्रत्येक आंगोपांग पर आधारित है। तीर्थंकर बालक 10 अतिशयों के साथ जन्म लेता है, उनमें एक समचतुरस्रसंस्थान भी है।[12] कृत्रिम चैत्यालय में जिनबिम्ब समचतुरस्रसंस्थान वाले होते हैं।[13] आचार्यों ने प्रतिष्ठिाग्रन्थों एवं वास्तुग्रन्थों में जिनबिम्ब के समचतुरस्रसंस्थान की अनिवार्यता कही है।[14] इसका माप निम्नानुसार है–

1. दाहिने घुटने से बाएँ घुटने तक 2.दाहिने घुटने से बाएँ कन्धे तक

3. बाएँ घुटने से दाहिने कन्धे तक 4. आसन से केशान्त तक

यह चारों बराबर-बराबर होना चाहिए, इसमें थोड़ा सा भी अन्तर हो तो समचतुरस्रसंस्थान नहीं होगा, अतः प्रतिमा प्रतिष्ठा योग्य नहीं है।

जिनबिम्ब का माप

जिनबिम्ब का माप ताल से किया जाता है, एक ताल जिस प्रतिमा का माप करना हो, उसके 12 अँगुल का होता है।

1. त्रिलोकसार–आचार्य नेमिचन्द्र के अनुसार 10 ताल

2. वास्तुसार–ठक्कुरफेरु के अनुसार 9 ताल

3. धवला–आचार्य पुष्पदन्त भूतबलि के अनुसार देवों, मनुष्यों एवं नारकियों का उत्सेध क्रमशः दश, नौ एवं आठ ताल के अनुसार होता है।

4. प्रतिष्ठा पाठ–आचार्य जयसेन के अनुसार बिम्ब 108 अँगुल होना चाहिए।

प्रतिष्ठा ग्रन्थानुसार जिनबिम्ब सुन्दर अंगोपांग, कान्तिलावण्य सहित, वृद्ध बालावस्था रहित, प्रसन्न, सौम्य, शान्त स्वरूप, श्रीवत्स लक्षण सहित, नखकेश सहित, समचतुरस्रसंस्थान युक्त, वैराग्य और तप की मुद्रा सहित, पद्मासन एवं कायोत्सर्ग मुद्रा सहित अन्य नाना प्रकार के आसनों से रहित, अष्टप्रातिहार्ययुक्त, नासाग्र स्थित अविकारी दृष्टि, शुभ लक्षण सहित एवं रौद्रादि बारह दोषों से रहित, दाग एवं प्रतिकूल रेखाओं रहित होता है।[15]

प्रतिमा का माप नियमानुसार है–

माप पद्मासन प्रतिमा[16]

ललाट	4 अँगुल	गला से हृदय	12 अँगुल
नासिका	4 अँगुल	हृदय से नाभि	12 अँगुल
मुख	4 अँगुल	नाभि से लिंग स्थान	12 अँगुल
गला	4 अँगुल	घुटना	4 अँगुल

कुल 56 अँगुल

माप कायोत्सर्ग[17]

ललाट	4 अँगुल	नाभि से लिंग स्थान	12 अँगुल
नासिका	4 अँगुल	लिंग स्थान से घुटना	24 अँगुल
मुख	4 अँगुल	घुटना	4 अँगुल
गला	4 अँगुल	घुटना से गाँठ	24 अँगुल
ग्रीवा से हृदय	12 अँगुल	गाँठ से पैर का तलवा	4 अँगुल
हृदय से नाभि	12 अँगुल		

कुल 108 अँगुल प्रमाण

दोनों पैरों के बीच 4 अँगुल का अन्तर तथा हाथ लम्बायमान होते हैं।

अरिहन्त एवं सिद्ध बिम्ब में अन्तर[18]

अरिहन्त बिम्ब सुन्दर अंगोपांग सहित, दिगम्बर स्वरूप वाला अष्टप्रातिहार्य एवं चिह्न सहित होता है। सिद्ध बिम्ब अष्टप्रातिहार्य एवं चिह्न रहित होता है। दोनों ही बिम्ब रूप होते हैं, तभी उनके ऊपर संस्कारारोपण एवं मन्त्रन्यास की क्रिया किया जाना सम्भव होता है।

समाँगुल प्रतिमा प्रतिष्ठा योग्य नहीं होती है, विषम माप की प्रतिष्ठा श्रेष्ठ होती है।[19]

1.एक अँगुल जिनबिम्ब श्रेष्ठ

2.दो अँगुल जिनबिम्ब धननाशकारक

3.तीन अँगुल जिनबिम्ब सिद्धिकारक

4.चार अँगुल जिनबिम्ब दुखकारक

5.पाँच अँगुल जिनबिम्ब धनधान्य यशकारक

6.छः अँगुल जिनबिम्ब उद्वेगकारक

7.सात अँगुल जिनबिम्ब पशु वृद्धिकारक

8.आठ अँगुल जिनबिम्ब हानिकारक

9.नौ अँगुल जिनबिम्ब पुत्रादिवृद्धिकारक

10.दस अँगुल जिनबिम्ब धननाशक

11.ग्यारह अँगुल जिनबिम्ब इच्छित कार्य सिद्धि कारक होता है।

हीनांग जिनबिम्ब का फल[20]

जिनबिम्ब के अंगोपांग उपरोक्त माप अनुसार होना चाहिए। बेडौल, भिन्नमाप, हीनांग एवं अधिकांग का प्रभाव प्रतिष्ठाकारक पर पड़ता है। अतः प्रतिष्ठाकारक को जिनबिम्ब का माप अनुभवी प्रतिष्ठाचार्य से कराकर ही प्रतिष्ठा कराना चाहिए। मूलनायक प्रतिमा का सूक्ष्म परीक्षण अनिवार्य है।

हीनांग प्रतिमा का फल निम्नानुसार है—

वक्रनासिका	–	दुखकारक
अंग छोटे हो	–	क्षयकारक
विकृत नेत्र	–	नेत्र विनाशक
छोटा मुख	–	भोग विनाशक
हीन कटि	–	आचार्य विनाशक
हीन जंघा	–	पुत्र-मित्र विनाशक
हीन आसन	–	ऋद्धि नाशक
हीनहस्त एवं चरण	–	धन-क्षयकारक
ऊर्ध्वमुख	–	धन नाशकारक
अधोमुख	–	चिन्ताकारक
वक्र-ग्रीवा	–	स्वदेशनाशक
ऊँचा नीचा मुख	–	विदेश गमन
विषम आसन	–	व्याधिकारक
अन्याय के धन से निर्मित	–	दुष्कालकारक
न्यूनाधिक अंग	–	स्व-पर-पक्ष को कष्ट
रौद्र रूप	–	बिम्ब निर्माता का नाश
अधिक अंग	–	शिल्पकार का नाश
दुर्बल अंग	–	द्रव्य का नाश
पतला उदर	–	दुर्भिक्ष कारक
तिरछी दृष्टि	–	अपूजनीय विरोधकारक
गाढ़ दृष्टि	–	अशुभकारक
अधोदृष्टि	–	विघ्नकारक पुत्रनाश
ऊर्ध्वदृष्टि	–	भार्यानाश

नेत्ररहित	–	नेत्र नाशकारक
बड़ा उदर	–	उदर रोगकारक
हीनाधिक हृदय	–	हृदय रोगकारक
हीन अंस	–	पुत्र नाशक

खंडित जिनबिम्ब का फल

रथोत्सव, विमानोत्सव एवं अन्य कार्यक्रमों में धातु के बिम्ब ही स्थापित करना चाहिए। पाषाण या कोमल सन्धि वाले जिनबिम्ब स्थापित नहीं करना चाहिए।[21] प्रक्षाल करते समय प्रतिमा को ले जाते समय, द्वार एवं घंटे आदि से विशेष सावधानी रखना अनिवार्य है। शक्ति से अधिक वजन वाली प्रतिमा को नहीं उठाना चाहिए, बिम्ब गिरकर या टकराकर खंडित हो सकते हैं। खंडित प्रतिमा का प्रभाव व्यक्ति के परिवार के साथ-साथ समाज पर तथा पूजक पर भी पड़ता है इसलिए ज़ंडित अंग की प्रतिमा को मूलनायक के रूप में विराजमान नहीं करना चाहिए।[22]

नख खंडित होने पर	–	शत्रु भयकारक
अँगुली खंडित होने पर	–	देश विनाशकारक
बाहु खंडित होने पर	–	बन्धक कारक
नासिका खंडित होने पर	–	कुल नाशकारक
चरण खंडित होने पर	–	द्रव्य क्षयकारक
पादपीठ खंडित होने पर	–	स्वजन नाशक
चिह्न खंडित होने पर	–	वाहन नाशक
परिकर खंडित होने पर	–	सेवक नाशक
छत्र खंडित होने पर	–	लक्ष्मी नाशक
श्रीवत्स खंडित होने पर	–	सुख नाशक
कान खंडित होने पर	–	बन्धु नाशक

ग्रीवा से खंडित बिम्ब सर्वथा अपूजनीय है[23]

सौ वर्ष पूर्व से स्थापित विकलांग, बेडौल अथवा खंडित बिम्ब पूजनीय है। मूलनायक प्रतिबिम्ब मुख, नाक, कान, नयन, नाभि, कमर आदि अंगों से खंडित हो तो मूलनायक रूप से विराजमान नहीं करना चाहिए। परिकर या चिह्न खंडित हो तो पूजन कर सकते हैं।[24]

जिनबिम्ब पर रेखा विचार

हृदय, मस्तक, कपाल, स्कन्ध, कान, मुख, पेट, पृष्ठ भाग दोनों हाथ, पाँव इत्यादि अंग अथवा सब अंगों पर नीली या अन्य रंगवाली रेखाएँ हों या दाग हों तो बिम्ब की प्रतिष्ठा नहीं करना चाहिए। अपने वर्ण सदृश दाग या रेखा का दोष नहीं माना जाता है।[25]

मूलनायक जिनबिम्ब की दृष्टि

वेदी निर्माण एवं वेदी प्रतिष्ठा के समय पूर्ण विधि-विधान एवं मूलनायक प्रतिमा की दृष्टि का ध्यान रखना अनिवार्य है। मूलनायक ब्रह्म के स्थान के नाभिकेन्द्र को छोड़कर स्थल के साथ इस प्रकार स्थापित करें कि दृष्टि गज आय से होकर गर्भगृह से बाहर निकले। जिनबिम्ब दीवार के अन्दर बनी वेदी तथा वीम के नीचे विराजमान नहीं करना चाहिए, इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।[26]

यदि मूलनायक जिनबिम्ब की दृष्टि वाधित होती है तो प्रतिष्ठाकारक, समाज और नगर पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। श्रावकों के स्वास्थ्य, व्यापार, उद्योग, मानसिक स्थिति सभी प्रभावित होते हैं। आय का वर्णन वास्तुसार, वसुनन्दिकृत प्रतिष्ठासार एवं प्रासाद मंडन के अनुसार गर्भगृह के द्वार के सातवें भाग में रहना शुभ माना है।[27]

सन्दर्भ—

1. प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, श्लोक 62
2. तिलोयपण्णत्ती –आचार्य यतिवृषभ, अध्याय 4/1256, 1271
3. वही, अध्याय 5, गाथा 83
4. नन्दीश्वर द्वीप पूजन, पं. द्यानतराय, जयमाला
5. प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, श्लोक 715, श्लोक 22

6. 1. प्रतिष्ठासारोद्धार : पं. आशाधर 1/49
   2. प्रतिष्ठासारसंग्रह : आचार्य वसुनिन्द 3/77
7. 1. प्रतिष्ठा सारोद्धार : पं. आशाधर 1/50, 51
8. प्रतिष्ठा रत्नाकर, पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' पृ. 254
9. वही, अपनी बात, पृ. 33-34
10. वास्तु सारिणी : मातृप्रसाद पांडेय
    मुहूर्ज़ चिन्तामणि : देवज्ञराम
    वास्तुसारः ठज़्कुर फेरु
    मुहूर्ज़ गणपति : देवज्ञवर्य गणपति
    सर्वार्थ चिन्तामणि : पं. महीधर शर्मा
    नरपति जयचर्या : नरपति कवि
    भारतीय ज्योतिष–डॉ. नेमिचन्द ज्योतिषाचार्य
    वृहद् पाराशर होराशास्त्रम्, पाराशर मुनि
11. मुहूर्ज़ दर्पण : डॉ. नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य
    वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु
    मुहूर्ज़ चिन्तामणि : देवज्ञराम
    मुहूर्ज़ गणपति : देवज्ञवर्य गणपति
    ज्योतिष रत्नाकर : राजवैद्य पं. बारेलाल जी पठा
12. प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, पृ. 255
13. तिलोयपण्णज़ी : आचार्य यतिवृषभ, 4/1877
14. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, बिज़्ब परीक्षा प्रकरण, गाथा 4
    प्रतिष्ठा रत्नाकार : पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' अपनी बात, पृ. 36
15. प्रतिष्ठासारोद्धार : आशाधर जी, 1/63
    प्रतिष्ठासार संग्रह : आचार्य वसुनन्दि, 4/1/5
16. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, बिज़्ब परीक्षा प्रकरण, गाथा 8
    प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, पृ. 43
17. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, बिज़्ब परीक्षा प्रकरण, गाथा 6
18. प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, पृ. 43, श्लोक 180-181
19. उमास्वामी श्रावकाचार : श्लोक 101-103, वास्तुसार, गाथा 43,

20. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, पृ. 101-103
21. प्रतिष्ठापाठ : आचार्य जयसेन, श्लोक 73
22. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, गाथा 44 से 51
23. उमास्वामी श्रावकाचार : आचार्य उमास्वामी, श्लोक 111
24. वही, श्लोक 108
25. वास्तुसार : ठज़्कुर फेरु, पृ. 84
26. वही, पृ. 133, गाथा 47
27. वही, पृ. 31, गाथा 52

नवागढ़ में प्राप्त शैल एवं धातु मूर्तियों का परिचय

भारतवर्ष अपनी संस्कृति , इतिहास, शिल्पकला, मूर्तिकला आदि विधाओं का संरक्षण करने वाला गौरवशाली देश हैं । यहाँ सभी धर्मों संस्कृतियों, भाषाओं एवं कलाओं को समादर प्राप्त हैं। भारतीय कला एवं संस्कृति को आतताइयों एवं प्रकोपों ने नष्ट करने का कई बार प्रयास किया, परन्तु वह संस्कृति भारत की माटी में इतनी रची बसी है कि इनको सामूल मिटाया जाना संभव नहीं हुआ।

जैन प्रतिमाओं में दिगम्बरत्व का अपना विशिष्ट सौन्दर्य हैं, जो भौतिकता से परे आध्यात्मिक, वीतरागता एवं आंतरिक शांति के रूप में प्रस्फुटित होता है। आवश्यकता है इस मुखरित मौन को आत्मसात करने की। मानव जीवन का यही चरम लक्ष्य भी है। इसे शिल्पियों ने प्रस्तर खण्डों पर अपनी छैनी से कलात्मक भाव भंगिमा एवं मूकभाषा में बखूबी उकेरा हैं, जो अनूठा एवं अनुपम है। कलात्मक दृष्टि से दो वीतराग जिनबिम्ब अभिव्यक्ति के स्तर पर कभी समान नहीं हो सकते।

शिल्पियों ने अपनी कलात्मक भावना को इतना विस्तार दिया की वीतराग बिम्ब भी परिकर के साथ मुखरित हो उठता हैं उसका प्रत्येक अंग हमें आकर्षित करता है, चाहे वह अष्ट प्रातिहार्य हो या मंगल द्रव्य, मुखाकृति हो या हस्तपाद विन्यास। यहाँ तक कि श्रीवत्स चिह्न भी वक्षस्थल की शोभा वृद्धि करता है।

जैन वीतराग बिम्बों की विशेषता है इसमें शिल्पियों को कुछ भी छिपाने का कोई अवसर नहीं होता, जो अन्य देवी देवताओं में वस्त्रभूषण एवं रंग में छिपा देते हैं। वीतराग बिम्ब का कोई भी अंगोपांग खंडित अवस्था में प्राप्त हो उससे बिम्ब की पहचान हो जाती है यथा अँगुली सहित हाथ, घुटना, जाँघ, कमर, कँधा , शीर्ष, पाँव कोई भी अंग मिले उससे बिम्ब की पहचान हो जाती हैं।

बुन्देलखंड में भारतीय संस्कृति, इतिहास एवं पुरातत्त्व का खजाना है। यहाँ के छोटे से छोटे गाँव में शिवमन्दिर या हनुमान मन्दिर या देवी मन्दिर तो मिलता ही है तथा नगरीय सभ्यता में गुप्त काल से आज तक के कलाशिल्प मिलते हैं। टीकमगढ़ के आसपास का सर्वेक्षण ब्र. जयकुमार निशांत,श्री हरगोविंद त्रिपाठी पुष्प एवं श्री हरिविष्णु अवस्थी वरिष्ठ इतिहासविद् टीकमगढ़ द्वारा समय-समय पर किया गया, जिसमें आपको मवई, लखौरा, सागौनी, सरकनपुर (संलक्षण

पुर) लार, नैनवारी, बुढेरा, भेलसी, मौखरा, बछरावनी (घुवारा) मोहनगढ़, दुधही, चाँदपुर, देवगढ़ में गुप्तकालीन मन्दिर कलाशिल्प प्राप्त हुए हैं।

प्रतिहार कालीन सूर्यमन्दिर, शिवमन्दिर गणेश मन्दिर भी प्रचुरता में मिले हैं। देवगढ़ दुधही, चाँदपुर, सीरोन, जराव का मठ मड़खेरा, ऊमरी शिल्प कला के मुख्य केन्द्र हैं।

प्राचीनतम अभिलेख ऋषभदेव की खंडित प्रतिमा के पादपीठ पर सं. 1123 (सन् 1066 ई.), उपाध्याय बिम्ब में सं. 1188 महावीर बिम्ब सं. 1195, शांतिनाथ बिम्ब सं. 1202 (सन् 1145 ई.) चारों मानस्तम्भ सं. 1203 (सन् 1146 ई.) के अभिलेख प्राप्त हुए हैं।

कुछ मूर्तियों एवं शिलापट पर बिना संवत् के भी अभिलेख मिले हैं। जिनका विवरण निम्न है–

बिना संवत् के अभिलेख

1.कलात्मक स्तंभ	2. पाषाण खण्ड
3. पद्मप्रभ प्रतिमा	4. श्रेष्ठी पाहल प्रतिमा
5. बगाजटोरिया चट्टान	6. उपाध्याय प्रतिमा आसन
7. देवी प्रतिमा आसन	8. खंडित घुटना
9. खंडित आसन	10. खंडित आसन
11. खंडित आसन महावीर	

नवागढ़ में प्राप्त मूर्ति शिल्प एवं कलाशिल्पों का विवरण

1.	26 मार्च 1959	– इमली का पेड़ एवं टीला हटाने पर प्राप्त 23 खंडित प्रतिमाएँ
2.	6 अप्रैल 1959	– चबूतरा हटाने पर प्राप्त 37 खंडित प्रतिमाएँ एवं सांगोपांग प्रतिमाएँ
3.	8 अप्रैल 1959	– पृथ्वी से 12 फुट नीचे विशाल छत वितान के नीचे मूलनायक अरनाथ की कायोत्सर्ग प्रतिमा

4. 3 मई 1959 – निर्माण के समय भौंयरे से प्राप्त (2)
5. 28 नवम्बर 1959 – दो प्रतिमाएँ अहिरवार के आँगन से प्राप्त (2)
6. 18 मई 1961 – भौंयरे की दीवार से प्राप्त खंडित एवं सांगोपांग प्रतिमाएँ (5)
7. 2 अक्टूबर 2000 – रामगोपाल दुबे सोजना की बावड़ी से प्राप्त मानस्तम्भ (4)
8. 27 नवम्बर 2012 – रामदीन प्रजापति के खेत से प्राप्त खंडित प्रतिमा (4)
9. 9 जून 2013 – आदिनाथ जिनालय ककरवाहा से प्राप्त खंडित प्रतिमा (5 + 4 शिल्प)
10. 5 जुलाई 2013 – मुन्नू कुशवाहा की नींव से प्राप्त खंडित प्रतिमा (5)
11. 24 अप्रैल 2014 – उपाध्याय प्रतिमा संवत् 1188 जैन पहाड़ी से प्राप्त (1)
12. 8 मार्च 2015 – सिद्धों की टोरिया से यक्ष प्रतिमा
13. 16 मार्च 2015 – दक्षिण पहाड़ी से प्राप्त (2) प्रतिमा
14. 17 मार्च 2015 – जैन मन्दिर लखनऊ से खंडित स्फटिक प्रतिमा (नवीन) (2)
15. 20 मार्च 2015 – श्रीमती इन्द्राणी जैन श्री सुरेन्द्र मोहन लखनऊ से कलाकृतियाँ (19)
16. 11 जून 2015 – बगाज टोरिया की आचार्य गुफा को खोलते समय 2 खंडित प्रतिमा 1 प्रशस्ति
17. 22 नवम्बर 2015 – बृन्दा लुहार के खेत से प्राप्त चन्देल ईंटें एवं आक्रान्तिक सिंह (1)
18. 20 मार्च 2016 – देवी मड़िया से प्राप्त प्रतिमा एवं कलाकृति (4 + 1)

19. 11 मई 2016 – बावड़ी के पास के वृक्ष के नीचे शास्त्र लिए उपाध्याय (1)
20. 23 जून 2016 – देवी मन्दिर एवं जैन पहाड़ी के निकट से प्राप्त 4 शिल्प एवं कलाकृतियाँ
21. 31 जुलाई 2016 – देवी मन्दिर प्रांगण से खंडित प्रतिमा एवं शिल्प (3)
22. 16 दिसम्बर 2016– देवी मन्दिर प्रांगण से प्रतिमा एवं कलाकृतियाँ (1 + 6)
23. 26 दिसम्बर 2016 – खिमलासा से प्राप्त 33 खंडित प्रतिमा एवं कलाशिल्प
24. 10 अक्टूबर 2018 – रूपसिंह गूजर के खेत से प्राप्त पार्श्वनाथ खंडित सिर (1)
25. 26 ज़ून 2020 – खंडित मूर्ति आदिनाथ, चिलम एवं भग्न धातु, पाषाण बर्तन
26. 7 दिसम्बर 2020 - श्रेष्ठी प्रतिमा खंडित - यादव के खेत से

खनन से प्राप्त पूज्य प्रतिमाएँ

मूलनायक अरनाथ भगवान्

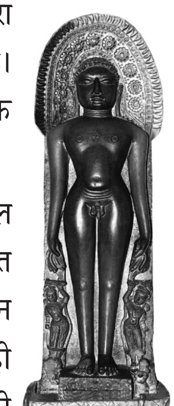

तीन हाथ कायोत्सर्ग मुद्राधारी देशी पाषाण की पन्ना के द्वारा की गयी ओपदार पालिस जिसकी चमक आज भी विद्यमान है। इस प्रतिमा की प्रतिष्ठा संवत् 1202 में आयोजित पंचकल्याणक में की गयी होगी ।

मूलनायक रूप में विराजित अरनाथ भगवान का भामंडल अतिसादा पर ऊपर से खंडित है। गुच्छकों के माध्यम से निर्मित केशावलि में दोनों ओर पड़ी हुई गुलकें और भौंहों के कमान विशाल नेत्र, मनोज्ञ नासाग्रदृष्टि, होंठों के सौष्ठव के साथ ठोड़ी की आकृति से निर्मित मनोहारी, गहन वीतरागता इस मूर्ति की विशेषता है।

ग्रीवा की रचना वक्षस्थल का अनुपात, कलात्मक श्रीवत्स एवं भगवान् की विशिष्ट नाभीयुक़्त उदर की रचना, कमर की कमनीयता, पेडू की रेखाएँ अत्यन्त दर्शनीय है। हाथ एवं जंघा की सुडोलता, हथेलियों में कमलाकृति और अँगुलियों में विशिष्ट वैचित्र्य जो संवत् 1201 की प्रतिमाओं में प्राप्त होता है चिज़ाकर्षक है।

भगवान् के पार्श्व भाग में उत्कीर्ण इन्द्रों की सुकुमारता तथा नीचे बैठे श्रावक श्राविकाओं की मुद्रा से प्रतीत होता है। मानों वह प्रभु शरण पाकर धन्य हो गये हों। आसन पर निर्मित मीन चिह्न आकृति अद्‌भुत है।

पंचतीर्थी पार्श्वनाथ भगवान्

देशी पाषाण से निर्मित बिज़्ब जिसके सिंहासन पर अंकित दो अष्टापद मध्य में नाग की पूँछ से चिह्न अंकित कर उसकी विशेष कुंडली से आसन निर्मित करने वाली सप्त फणावली से बिज़्बाकर्षण को बढ़ाया है। पद्मासन विराजित पार्श्वनाथ भगवान् सर्वांग सुन्दर हैं। केशगुच्छ, विशाल मस्तक सहित चेहरे के भाव अत्यन्त आकर्षक हैं। खंडित फणावली के ऊपर दोनों ओर दो-दो अरिहन्त बिम्ब इसे पंचतीर्थी घोषित करते हैं। दोनों पार्श्व में चंवरधारी इन्द्र एवं उनके ऊपर पुष्पमाल लिए देवगण अत्यन्त शोभायमान हैं।

शतफणी पार्श्वनाथ भगवान्

सफेद संगमरमर से निर्मित अत्यन्त साधारण आसन पर विराजित पद्मासन पार्श्वनाथ भगवान् का अंग विन्यास, लज़्बायमान कर्णाकृति, विशाल नेत्र एवं दोनों कन्धों से उठे हुए सौफणों की आकृति में चुज़्बकीय आकर्षण है।

तीर्थंकर महावीर

देशी पाषाण से निर्मित एक फुट पद्मासन बिज़्ब जिसका आसन दो शेरों से अंकित है। विशेष पद्मासन मुद्रा शारीरिक पुष्टता तथा प्रसन्न मुखमुद्रा अनायास आकर्षित करती है। पार्श्वभाग में चंवरधारी पुष्पमाला सहित इन्द्रों के साथ एक-एक पद्मासन तथा खड्गासन बिज़्बाकृति दर्शनीय है। इस लघुकाय बिज़्ब में

त्रिछत्र एवं उपरिभाग में विराजित मृदंग वादक बिज़्ब को पूर्णता प्रदान करता है।

ताम्र पार्श्वनाथ भगवान्

संवत् 1586 में प्रतिष्ठित बिज़्ब अत्यन्त प्रभावशाली है। पीतल के समचौकोर आसन जिस पर चारों ओर प्रशस्ति उत्कीर्ण है। सामने की ओर धरणेन्द्र एवं पद्मावती विराजमान हैं। आसन से ऊपर कमलाकृति पर ताँबे के पार्श्वनाथ भगवान् विशेष आसन जिसमें केवल नितज़्ब भाग आसन पर है शेष जंघा एवं घुटने आसन से बाहर हैं जो भगवान के अधर विराजमान होने का प्रतीक हैं, में विराजित हैं।

भगवान् का शारीरिक विन्यास एवं विशिष्ट मुखाकृति चिज़ाकर्षक है। सुन्दर कलात्मक नाग कुंडली बिज़्ब के पीछे शोभायमान होकर नौफणों में परिवर्तित हुई है। विशेष फणावली के मध्य बिज़्ब की छवि अत्यन्त आकर्षक है।

लघु पार्श्व बिज़्ब

पीतल धातु से निर्मित मात्र डेढ़ इंच अवगाहना वाले पार्श्व बिज़्ब के आसन ...ठा संवत् 1548 स्पष्ट अंकित हैं, पद्मासन स्पष्ट मुखाकृति एवं सातफण ...ुकाय बिज़्ब की प्राचीनता तथा इतने बड़े टीले की खुदाई में इतने छोटे ...ा मिलना स्वयं एक अतिशय है।

... भगवान्

...ल धातु से निर्मित 11 इंच अवगाहना का चौबीसी की प्रतिष्ठा संवत् 1490 में हुई थी। इसका आसन कई कोणों में बनाया गया है। आसन के ऊपर दो सिंहों के आसन पर त्रिछत्र चंवर युगल, पुष्पमाल लिए इन्द्र एवं द्विगजाकृति इसकी विलक्षण शैली को दर्शाते हैं। मूलबिज़्ब के पार्श्व में छः छः पद्मासन बिज़्ब तथा इनके ऊपर तीन-तीन खड्गासन बिज़्ब, मूलभगवान् के ऊपर 4 पद्मासन बिज़्ब तथा उसके ऊपर 3 खड्गासन बिज़्ब की रचना विलक्षण एवं आकर्षक है। आसन पर चिह्न के दोनों ओर शाज़ के प्रतीक जैनम्

एवं गुरु के प्रतीक चरण चिह्न अंकित हैं। जो देव, शाज़ एवं गुरु की अभिन्नता को दर्शाते हैं ।

अरहन्त बिज़्ब

गाढ़े हरे पाषाण (जो काला प्रतीत होता है) से निर्मित बिज़्ब का शिल्प स्वयं ही प्राचीनता को उद्घोषित करता है। इसका शिल्प वैशिष्ट्य इसकी नौवीं सदी का साक्ष्य है।

भगवान् चन्द्रप्रभ, सज़्भवनाथ, विमलनाथ धातु के अरहन्त भगवान्, देशी पाषाण निर्मित अरहन्त भगवान् वेदी में विराजमान हैं। जिनका शिल्प वैशिष्ट्य विलक्षण, आकर्षक है जो शिल्पकला की उत्कृष्टता प्रकट करता है।

संग्रहालय में संगृहीत मूर्तियाँ एवं कलाशिल्प

नवागढ़ क्षेत्र के भौंयरे का टीला मानों कलावशेषों एवं पुरासज़्पदा से ही निर्मित था। वह सैंकड़ों वर्ष न जाने कितने दुर्लभ, विशिष्ट एवं महज़्वपूर्ण शिल्पों को अपने अन्दर संरक्षित किए रहा। उसके उत्खनन से प्राप्त पुरावशेष आज जिनशासन की ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक धरोहर हैं।

विशाल तोरण

वरिष्ठ प्रतिमा विज्ञानी पं. नीरज जी जैन सतना के शज़्दों में कलाशिल्प की अपेक्षा से सज़्भवतः इस तोरण का स्थान न केवल यहाँ के संग्रहालय में प्रथम होगा वरन् आसपास के अच्छे संग्रहालयों में भी सुन्दरता, वीतरागता और लालित्य का एक साथ प्रतिनिधित्व करने वाले पाषाण शिल्प दुर्लभ ही होंगे। यह किसी विशाल वेदी पर मूल नायक मूर्ति के ऊपर लगे तोरण का एक भाग है। जिस पर भगवान् को कमल अर्पित करते हुए दो पुष्ट और अलंकरणों से सुसज्जित गजराज अंकित किए गये हैं। गजारूढ़ श्रावक-श्राविकाएँ अपने हाथों में कलश और पुष्पमाला लेकर पूजार्थ जाते हुए उत्कीर्ण किए गये हैं। हाथियों के पीछे अति सुन्दर अलंकारों के बीच दोनों ओर पाँच-पाँच तीर्थंकरों का अंकन है।

जिनका शिल्प विन्यास अत्यन्त विलक्षण एवं वास्तुकला का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है। तोरण का अन्त ऊपर की ओर शिखर की तरह शिलाज़ंडों का अंकन करके चक्र, आमलक और कलश द्वारा बड़े लुभावने ढंग से किया गया है। नागर शैली के मन्दिर शिखर के सभी अवयवों को इसमें दर्शाया गया है।

युगादि देव आदिनाथ

देशी पाषाण की 7.5 फुट ऊँची कायोत्सर्ग मूर्ति जो इस क्षेत्र की प्राचीनतम मूर्ति है। इसका कलात्मक विन्यास केशावलि, कर्णांजलि, कन्धे पर केश जटाएँ इन्द्रादिक के खड़े होने का ढंग, इनका पहिनावा इसे पूर्वमध्यकाल की कृति घोषित करता है।

पार्श्वनाथ भगवान्

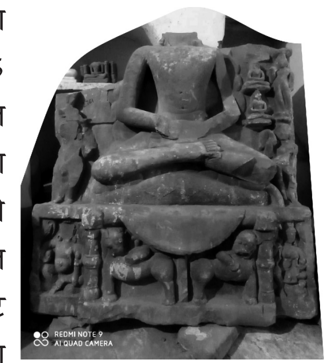

देशी पाषाण से निर्मित मनोज्ञ प्रतिमा जिसका विन्यास पूर्वमध्यकालीन है, इसकी अवगाहना 5 फुट है। इसका आसन भी नागकुंडली द्वारा निर्मित है। इसकी फणावली एवं अंगों को ध्वस्त किया गया है। इसके बारे में पं. नीरज जी सतना ने नवागढ़ के इतिहास में जो सन् 1967 में प्रकाशित किया गया था, लिखा है यह प्रतिमा कुएँ की पाट पर शिला की तरह लोगों ने पाट रखी थी। प्रतिमा के नाक मुँह तथा फणावली के कारण वह हिलती-डुलती थी। अतः वह सब लोगों द्वारा तोड़ दिए गये हैं, जब जैन समाज को ज्ञात हुआ तो कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं ने इसे नवागढ़ पहुँचाकर संरक्षित किया था।

डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी वाराणसी के अनुसार यह प्रतिमा अत्यंत विलक्षण एवं अद्भुत है । यह प्रतिमा अद्वैत सिद्धांत का बोध कराती हैं । उसमें धरणेन्द्र-पद्मावती के स्थान पर यक्ष कुबेर एवं यक्षिणी अज़्बिका उत्कीर्ण की गयी है, जबकि यह नेमिनाथ के यक्षयक्षिणी है, यह कलाशिल्प बताता है सभी तीर्थंकर समान गुण वाले होते हैं उनमें भेद नहीं है हम पहचान के लिए चिह्न एवं यक्ष-यक्षिणी को उत्कीर्ण करते हैं ।

शान्तिनाथ आसन

शिल्प कला की उत्कृष्ट कृति जिस पर विशेष रसायनों द्वारा पालिस किया गया है। इसके आसन पर संवत् 1202 की प्रशस्ति उत्कीर्ण है, प्रशस्ति के मध्य क्रीड़ा करता मृग युगल अत्यन्त शोभनीय है। इस प्रतिमा की मनोज्ञता-भव्यता आतताइयों को सहन नहीं हुई न जाने कितने टुकड़ों में इसका भंजन किया गया। इसकी अवगाहना 15 से 16 फुट प्रतीत होती है।

शिल्प स्तम्भ

4.5 ऊँचाई वाला कलात्मक शिल्पयुक्त यह स्तम्भ सहज ही आकर्षित कर लेता है। इसमें की गई घड़ाई विलक्षण है। इसका शिल्प विन्यास जिनालय की भव्यता, विशालता एवं समृद्धता को प्रदर्शित करता है। कैसा होगा वह जिनालय जिसमें ऐसे शिल्प स्तम्भों का प्रयोग किया गया होगा?

मानस्तम्भ

4 फुट ऊँचे मानस्तम्भ जिन पर संवत् 1203 आषाढ़ बदी 10 की प्रशस्ति अंकित है। इसके उपरिभाग में तीन ओर तीर्थंकर बिम्ब एवं एक ओर उपाध्याय परमेष्ठी की प्रतिमाएँ हैं। अधोभाग में सुन्दर यक्षणी एवं देवांगनाएँ उत्कीर्ण की गयी हैं। यह मानस्तम्भ न जाने कब सोजना ग्राम की बावड़ी में लगे ज्ञात नहीं हैं।

इनकी जानकारी प्राप्त होते ही जैन जागृति संघ के उत्साही कार्यकर्ताओं द्वारा 2 अक्टूबर 2000 को नवागढ़ में स्थापित किए गये । डॉ. मारुतिनंदनप्रसाद तिवारी एवं डॉ. एस. एस. सिन्हा के अनुसार यह चारों मानस्तम्भ चार मंदिरों के प्रतीक हैं ।

उपाध्याय प्रतिमा

पहाड़ी पर स्थित गुफा से प्राप्त संवत् 1188 की एक फुट अवगाहना वाली देशी पाषाण की उपाध्याय प्रतिमा सुखासन में विराजमान है। दाहिना हाथ ज्ञानमुद्रामय है, जिसमें पिच्छी दबी है। बाएँ हाथ में शास्त्र लिए है। यह कृति नवागढ़ क्षेत्र की पहाड़ियों में साधना करने वाले श्रमणों की परम्परा का द्योतक है।

जैन शासक मदनवर्मन

दो फुट अवगाहना वाला यह बिम्ब विलक्षण एवं अद्भुत है। इसके सर्वांग एवं खड़े होने की कमनीय मुद्रा एवं दुपट्टा की लहरिया से किसी देवांगना का आभास होता है। जबकि वक्षस्थल, विशाल दाड़ी मूँछ, कर्ण कुंडल से यह शक्तिशाली पुरुषाकृति है। इसके सिर के दाहिने ओर पद्मासन सम्पूर्ण जिनबिम्ब से यह जैन शासक मदनवर्मन की प्रतिमा सिद्ध होती है। जिसने हजारों साल पहले नवागढ़ (नन्दपुर) को विशाल समृद्धशाली राजधानी के रूप में स्थापित किया था। यह बिम्ब पहाड़ी पर स्थित है, जिसे ग्रामवासी बगाजमाता के रूप से पूजते हैं।

सुसज्जित उपरि परिकर

बलुआ पत्थर निर्मित विशाल प्रतिमा का उपरि भाग तीन छत्र युक्त हैं, जिसमें मृदंग वादक, कलश लिए सुसज्जित गजयुगल एवं गजारूढ़ पुष्पमालधारी अत्यन्त आकर्षक हैं। उनके ऊपर पंच अरहन्त बिम्ब शिखराकृति रूप में उत्कीर्ण किए गये हैं। कलात्मक शीर्षभाग शिखर युक्त है, यह संग्रहालय की विशिष्ट कृति है।

प्रतिहार कालीन अरहन्त

यह शिल्प ऊमरी ग्राम के चर्मकार के आँगन कुएँ के पास में दबा था। जिस पर वह अपने औजारों पर धार लगाता था। पं. नीरज जी जैन सतना के मित्र श्री पन्ना लाल जी को इसमें एक फूल नजर आया जिसे उखाड़ने पर यह दुर्लभ मनोज्ञ शिल्प प्राप्त हुआ।

महावीर प्रतिमा

1961 में भौंयरे के जीर्णोद्धार के समय प्राप्त हाथ एवं शिर विहीन भगवान महावीर की प्रतिमा जिस पर संवत 1195 की प्रशस्ति है। यह 2 फुट ऊँची पद्मासन मुद्रा में काले पाषाण पर विशेष रसायनों से की गयी ओपदार पॉलिस की सुन्दरतम कृति है। जिसके वक्षस्थल की, उदर, कटि प्रदेश का विशेष सौष्ठव

इतना मनोज्ञ एवं आकर्षक है कि आँखें हटना ही नहीं चाहती। आसन पर उत्कीर्ण प्रशस्ति के ऊपर बाईं ओर सिंह की विशेष आकृति तीर्थंकर बिम्ब की भव्यता को प्रदर्शित करती है।[28]

विशेष बात यह है कि चंदेल बावड़ी के उत्खनन कार्य करते हुए 26 जून 2020 को इस प्रतिमा का सिर प्राप्त हुआ है।

चन्देल बावड़ी

नवागढ़ क्षेत्र की पूर्व दिशा में एक किलोमीटर की दूरी पर ईंटों द्वारा निर्मित 35-40 फुट गोलाकार में फैली प्राचीन बावड़ी जिसमें नीचे तक पहुँचने के लिए पाषाण खंडों की व्यवस्थित सीढ़ियाँ निर्मित हैं। वर्तमान में यह मिट्टी से भर गयी है, जो जीर्णता एवं झाड़ियों के कारण ध्वस्त होने की कगार पर है।

क्षेत्र निर्देशक ब्र. जयकुमार निशांत भैया के सत्प्रयास से बावड़ी का उत्खनन शासकीय स्तर पर किया गया जिसमें विशेष खंडित प्रशस्ति के साथ मृदभांड उपकरण, आदिनाथ प्रतिमा, खंडित शीर्ष प्राप्त हुए हैं।

रहस्यमय मन्दिर अवशेष

बावड़ी के निकट विशाल तेंदू वृक्षों के मध्य विशेष शिलाखंडों एवं अमलसार के खंडित अवशेषों सहित यह स्थान न जाने कितने रहस्यों को समेटे है? यह खोज का विषय है, इन स्थानों पर ग्रामवासियों की अनन्य श्रद्धा है।

भावना

इस प्रकार प्रागैतिहासिक अतिशयक्षेत्र नवागढ़ में पुरा सम्पदा के बहुमूल्य एवं महत्त्वपूर्ण पुरावशेषों के मिलने की पूर्ण सम्भावना के साथ पुरातात्त्विक एवं शान्त, प्राकृतिक परिवेशमय पर्वत शृंखला के मध्य यह पर्यटन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है। शासन इसे खजुराहो से बल्देवगढ़, टीकमगढ़, बड़ागाँव, नवागढ़, सड़कौरा, ऊमरी (सूर्य मन्दिर) मदनपुर, बानपुर, कुंडेश्वर, मड़खेरा (सूर्य मन्दिर) एवं ओरछा पर्यटन स्थल से जोड़कर पर्यटकों को इन स्थानों के

दिग्दर्शन का लाभ दिला सकती है।

वेदी में विराजमान पूज्य प्रतिमाएँ

1. भौंयरे में—

1.श्री शान्तिनाथ भगवान् (पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2050, (सन् 1993)
2.श्री अरनाथ भगवान् (पाषाण) कायोत्सर्ग जिस पर प्रशस्ति नहीं है
3.कुंथुनाथ भगवान् (पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2050 (सन् 1993)
4.चन्द्रप्रभ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2067 (सन् 2011)
5.शान्तिनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2067 (सन् 2011)

2. भौंयरे के ऊपर वेदी—

1.श्री चन्द्रप्रभ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)
2.श्री शान्तिनाथ भगवान् (काला पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2041 (सन् 1985)
3.श्री चन्द्रप्रभ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन संवत् 2054 (सन् 1997)
4.श्री महावीर भगवान् (श्वेत पाषाण)पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)
5.श्री महावीर भगवान् (देसी पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है
6. श्री पार्श्वनाथ भगवान् (देसी पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है
7.श्री आदिनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है
8.श्री पार्श्वनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है
9.श्री चन्द्रप्रभ भगवान् (श्वेत पाषाण) संवत् 1955 (सन् 1898)
10.श्री सुपार्श्वनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) संवत् 2076 (सन् 2020)
11.श्री अरहन्त भगवान् (देसी पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है

3. त्रिमूर्ति वेदी—

1.श्री भरत भगवान् (श्वेत पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2067 (सन् 2011)
2.श्री आदिनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2067 (सन् 2099)
3.श्री बाहुबली भगवान् (श्वेत पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2041 (सन् 1985)

4. पंचबालयति वेदी—

1.श्री मल्लिनाथ भगवान् (बिजोलिया पाषाण) कायोतसर्ग संवत् 2072 (सन् 2016)

2.श्री नेमिनाथ भगवान् (बिजोलिया पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2072 (सन् 2016)

3.श्री वासुपूज्य भगवान् (बिजोलिया पाषाण)पद्मासन संवत् 2066 (सन् 2010)

4.श्री पार्श्वनाथ भगवान् (बिजोलिया पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2072 (सन् 2016)

5.श्री महावीर भगवान् (बिजोलिया पाषाण) कायोत्सर्ग संवत् 2072 (सन् 2016)

5. श्री कुंथुनाथ वेदी—

1.श्री शान्तिनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन संवत 2027 (सन् 1970)

2.श्री कुन्थुनाथ भगवान् (काला पाषाण) कायोत्सर्ग संवत 2041 (सन् 1985)

3.श्री आदिनाथ भगवान् (श्वेत पाषाण) पद्मासन संवत 2041 (सन् 1985)

4.श्री अभिनन्दननाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2067 (सन् 2011)

5.श्री महावीर भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 1971 (सन् 1914)

6.श्री आदिनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)

7.श्री आदिनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)

8.श्री पार्श्वनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 1548 (सन् 1491)

9.श्री सज़्भवनाथ भगवान् (काला पाषाण) पद्मासन संवत् 1511 (सन् 1454)

10.श्री चन्द्रप्रभ भगवान् (काला पाषाण) पद्मासन प्रशस्ति अस्पष्ट है–

11. श्री शान्तिनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)

12.श्री अरिहंत भगवान् (धातु) पद्मासन प्रशस्ति नहीं है

13.श्री ताम्रपार्श्वनाथ भगवान् (ताम्र) पद्मासन संवत् 1586 (सन् 1529)

14.श्री पार्श्वनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2041 (सन् 1985)

15.श्री चौबीसी भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 1490 (सन् 1433)

16.श्री विमलनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 1885 (सन् 1828)

17.श्री अरनाथ भगवान् (धातु) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2016)

6. मानस्तज़्भ में विराजमान

1.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

2.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

3.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

4.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

5.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

6.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

7.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

8.श्री अरनाथ भगवान् (बिजौलिया पाषाण) पद्मासन संवत् 2072 (सन् 2012)

क्षेत्र में संगृहीत खंडित प्रतिमाएँ एवं आसन

1.पंचमेरु (धातु) संवत् 2051	सन् 1994	
2.पंचमेरु (धातु) संवत् 2051	सन् 1994	
3.पंचमेरु (धातु) संवत् 2051	सन् 1994	
4.पंचमेरु (धातु) संवत् 2051	सन् 1994	
5.पंचमेरु (धातु) संवत् 2051	सन् 1994	
6.मानस्तज़्भ (पाषाण) संवत् 1203	सन् 1146	पद्मासन
7.मानस्तज़्भ (पाषाण) संवत् 1203	सन् 1146	पद्मासन
8.मानस्तज़्भ (पाषाण) संवत् 1203	सन् 1146	पद्मासन

9.मानस्तज़्भ (पाषाण) संवत् 1203	सन् 1146	पद्मासन
10.आदिनाथ (पाषाण) संवत् 1123	सन् 1066	पद्मासन
11.महावीर (पाषाण) संवत् 1195	सन् 1138	पद्मासन
12.उपाध्याय (पाषाण) संवत् 1188	सन् 1131	पद्मासन
13.शान्तिनाथ (पाषाण) संवत् 1202	सन् 1145	कायोत्सर्ग
14.अरिहंत (पाषाण) संवत् 1202	सन् 1145	पद्मासन
15.पार्श्वनाथ		पद्मासन
16.पार्श्वनाथ		शिरोभाग
17.पार्श्वनाथ		शिरोभाग
18.आदिनाथ		कायोत्सर्ग
19.आदिनाथ		कायोत्सर्ग
20.अरनाथ		कायोत्सर्ग
21.कुंथुनाथ		कायोत्सर्ग
22.अजितनाथ		कायोत्सर्ग
23.शान्तिनाथ		कायोत्सर्ग
24.आदिनाथ		पद्मासन
25.पार्श्वनाथ		पद्मासन
26.प्रतिहार कालीन आदिनाथ		पद्मासन
27.अरिहंत		पद्मासन
28.अरिहंत		कायोत्सर्ग
29.अरिहंत		पद्मासन
30.अरिहंत		पद्मासन

यह सभी बिज़्ब नवागढ़ के मन्दिरों की वेदियों एवं कक्ष में संगृहीत हैं, परन्तु इनकी देखरेख एवं संरक्षण के लिए संग्रहालय की अत्यंत आवश्यकता है।

नवागढ़ से प्राप्त शैलोत्कीर्ण चित्रकला का परिचय

जैनदर्शन में चित्रकला

चित्रकला मानवीय भावनाओं की सहज सशज़्त अभिव्यज़्ति का सुन्दर आधार है, यही कारण है कि यह जीवन का अभिन्न अंग है। कला मानव में अथाह और अनन्त मन की सौन्दर्यात्मक अभिव्यज़्ति है। कला का उद्भव एवं विकास मानव जीवन के उद्भव व विकास के साथ ही हुआ है। जिसके प्रमाण हमें चित्रकला की प्राचीन परज़्परा से प्रागैतिहासिक काल से ही प्राप्त होते हैं। प्राचीन काल से अब तक चित्रकला की अनेक शैलियाँ विकसित हुई हैं, जिनमें से जैन शैली चित्र इतिहास में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। जैन चित्रकला के सबसे प्राचीन चित्रित प्रत्यक्ष उदाहरण मध्यप्रदेश के सरगुजा राज्य में जोगीमारा गुफा में मिलते हैं। जिसका समय दूसरी शताज़्दी ईसापूर्व है।[1] ग्यारहवीं शताज़्दी तक जैन ज़्भिज़्ति चित्र कला का पर्याप्त विकास हुआ जिनके उदाहरण सिज़्तलवासन एलोरा आदि गुफाओं में मिलते हैं। इसके बाद जैन चित्रों की परज़्परा पोथी चित्रों में प्रारज़्भ होती है और ताड़पत्रों, कागजों एवं वस्त्रों पर इस कला शैली का क्रमिक विकास होता चला गया। जिसका समय 11वीं से 15वीं शताज़्दी के मध्य माना गया है।[2]

जैनधर्म अति प्राचीन एवं अहिंसा प्रधान धर्म है। भारत के अनेक स्थानों पर जैन स्थापत्य कला, मूर्तिकला, चित्रकला के उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं। जिनमें प्रमुख केन्द्रों में खजुराहो, कुंडलपुर, पावागिरि, श्रवणबेलगोल, कारकल, मूडविद्रि, सज़्मेद शिखर, बादामी सिज़्तनवासन है।[3] इन ललित कलाओं का निर्माण कर जैन कला में न केवल लोक का आध्यात्मिक व नैतिक स्तर उठाने का प्रयास किया है बल्कि देश के विज़िन्न स्थानों को सौन्दर्यमय भी बनाया है। कला में प्रतीकों का बहुत महज़्व होता है, इसके माध्यम से भावों की अभिव्यंजना सरल हो जाती है। जैन शैली में उपलज़्ध कलाकृतियों में भी प्रतीकों का प्रयोग स्पष्ट दिखाई देता है। जैन कला में अष्ट-प्रातिहार्य, एवं अष्टमंगल द्रव्य आठ शुभ वस्तुएँ, सांसारिक वृक्ष षट्लेश्या आदि प्रतीकों का प्रयोग किया गया है। जैन चित्र शैली में महावीर के जीवन चरित्र एवं उनकी शिक्षाओं से सज़्बन्धित जैन मुनियों, श्रावकों, 24 तीर्थंकरों और उनसे सज़्बन्धित घटनाओं का चित्रण है।

प्रत्येक तीर्थंकर के जन्म से पूर्व माता के गर्भ में आने पर माता को चौदह शुभ स्वप्नों के दर्शन होने के कई प्रमाण जैन ग्रन्थों में मिलते हैं। इन महास्वप्नों का अत्याधिक महत्त्व है। अतः चित्रकला में भी इनका चित्रण अधिक मिलता है। श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्री महावीर जी, जयपुर के महापुराण ग्रन्थ में माता मरुदेवी द्वारा देखे गये सोलह स्वप्नों का अंकन है। इस चित्र में माता मरुदेवी महल में लेटी हुई है। एक दासी उनके पैर दबा रही है, एक दासी चँवर डुला रही है, चित्र के शेष भाग में 16 स्वप्नों का अंकन है। जो इस प्रकार हैं–हाथी, वृषभ, सिंह, लक्ष्मी, दो मालाएँ, चन्द्रमा, सूर्य, मीन युगल, दो कुम्भ कलश, जलाशय, समुद्र, मणि जड़ित सिंहासन, देव विमान, धरणेन्द्र भवन, रत्न राशि, और निर्धूम अग्नि आदि पुराण ग्रन्थ में भी माता मरुदेवी के 16 स्वप्नों का चित्रण किया गया है।

नवागढ़ में प्राप्त शैलचित्र

मध्यप्रदेश के कलात्मक अवशेषों में सबसे प्राचीन आदि मानवों के चित्र कहे जा सकते हैं। ये चित्र आदमगढ़ (होशंगाबाद के पास) पंचमढ़ी, सिंहपुर (जिला रायगढ़), भोपाल, रायसेन, सीहोर, सागर आदि अनेक स्थानों में मिले हैं। हाल में सागर जिला में बरोद, नरयावली तथा भावचन्द नामक स्थानों पर अनेक चित्रित गुफाओं का पता चला है। इन गुफाओं में निवास करने वाले मानव अनेक रंगों द्वारा विविध प्रकार के चित्र गुफा-भित्तियों पर बनाया करते थे। चित्रों के मुख्य विषय मृगया, पशुओं पर सवारी, पशु, कुछ गाना-बजाना, नृत्य आदि हैं। कला की दृष्टि से यह चित्र निस्सन्देह बुन्देलखंड का अस्तित्व भौगोलिक दृष्टि से चालीस करोड़ वर्ष से भी अधिक पुराना कैम्ब्रियन युग का दर्शाते हैं।

यह भू भाग लहराते सागर की गोद में से सबसे पहले उठा था। मानव सभ्यता का विकास पाषाण काल से माना जाता है, जब मानव पाषाणों के उपकरणों द्वारा वन्य पशुओं का आखेट कर उसका मांस और कन्दमूल फल खाकर यायावरी जीवन व्यतीत करता था। धीरे-धीरे हिंसक पशुओं, सर्पों आदि एवं विभिन्न ऋतुओं के प्रभाव से अपने आपको सुरक्षित रखने की दृष्टि से गिरि कन्दराओं में निर्मित प्राकृतिक शैलाश्रयों में मानव ने रहना आरम्भ किया।

अवकाश के क्षणों में वह धीरे-धीरे शैलाश्रयों की छतों दीवालों पर चित्रांकन

करने लगा। इन शैलचित्रों में पुराकालीन मानव सभ्यता, संस्कृति, रहन-सहन, प्राकृतिक परिवेश के साथ वन्य पशुओं को चित्रित किया गया है।

शैलचित्रों का इतिहास अति प्राचीन है इन चित्रों को बनाने में प्राकृतिक रंगों का उपयोग किया गया है। जिनमें स्वेत, गेरु, मटमैला लाल, लाल, नीले, पीले आदि रंगों का प्रयोग किया गया है, जिससे यह चित्र, हजारों वर्ष बाद भी पूर्व स्थिति में विद्यमान है।

बुन्देलखंड में शैलचित्र निम्न जिलों में बहुतायत में पाए गये हैं। बाँदा, ललितपुर, झाँसी, पन्ना, छतरपुर, सागर, रायसैन, होशंगाबाद, जबलपुर, सिहोर, दमोह, नरसिंगपुर, शिवपुरी, दतिया, टीकमगढ़।

ललितपुर जिले में देवगढ, नवागढ़(नावई) मदनपुर में शैलचित्र प्राप्त हुए हैं।

नवागढ़ में प्राप्त शैलचित्र ब्र. जयकुमार 'निशान्त' टीकमगढ़ द्वारा 6 अक्टूबर 2014 में अन्वेषित किए गये हैं।[4]

नवागढ़ में प्राप्त शैलोत्कीर्ण चित्रकला

नवागढ़ के बीहड़ में जो शैलाश्रय एवं प्रागैतिहासिक शैलचित्र प्राप्त हुए हैं, उन पर डॉ. नारायण व्यास भोपाल, डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, डॉ. गिरिराज कुमार आगरा के साथ डॉ.स्नेहरानी जैन ने विस्तृत सर्वेक्षण किया है। ब्र. जयकुमार निशान्त ने गाँव के सरपंच आदि कुछ व्यक्तियों के साथ जाकर शैलाश्रय का गहन अन्वेषण किया है।

नवागढ़ में छोटा सा शैलाश्रय है और उसमें अंकित लाल रंग से बने कुछ संकेत जो अज्ञात काल से वहाँ पर हैं, जो पानी से धुलते नहीं हैं, और न ही रगड़ने पर मिटते हैं। उल्टा गीला होने पर दिखने में और भी स्पष्ट हो जाते हैं।[5]

ग्राम नावई से लगभग 3 किलोमीटर दूर पर बड़े-बड़े बोल्डरों से बना एक शैलाश्रय है जिसमें आदि शैलांकन है। इसमें शैलाश्रय की छत बनाती चट्टान है, जो पूर्वी सिरे पर चेहरे के बन्द होंठों जैसी छवि बनाती है। शैलाश्रय बड़ा नहीं है किन्तु इसमें बने चित्र अति विशिष्ट हैं। कुछ अंकन खुदा हुआ सा तो है किन्तु धूमिल होने से वहाँ आश्रय लेने वालों ने सफेद और लाल नैसर्गिक रंगों का

उपयोग करके जो भी अंकन छोड़ा है, उसे प्राचीन काल का होने का संकेत करता है।

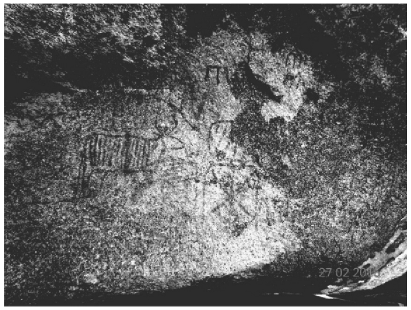

प्रथम अंकन – पालतू पशु, गाय, भैंस, खेती आवास आदि चित्र ठोड़ी के बाएँ नीचे बने लाल रंग के भिज़ि चित्र सिन्धु घाटी के प्रतीकों वाला है, जिन्हें बनाने से पहले सफेद रंग का हल्का सा लेपन किया गया और फिर कुछ लेखन अँगुलियों से और कुछ बरू द्वारा दो रंगों से लिखा गया जो दो लाल रंगों में दिखाई देता है। इसमें एक पशु शान्त खड़ा दिखाई दिखता है अर्थात् आखेट नहीं वह एक पालतू पशु है। रंगों का उपयोग इसे भीमबैठिका युग के समकक्ष ले जाता है।

दूसरा अंकन –इसमें कई सिन्धु घाटी लिपि के अंकन पाषाण उकेरित हैं। पाषाण की सतह कठोर है और उस पर अंकन आदिम युगीन, सिन्धु घाटी सज़्यता युगीन और कुछ सज़्भवतः ब्राह्मी के बाद का भी किया हुआ दीखता है। दूसरा अंकन छत्रशिला के दाहिने किनारे काल्पनिक एक होंठ के जैसी दिखती आकृति के दाहिने कोने के ही नीचे की स्थिति पर दिज़ता है जो किसी समीपस्थ नदी अथवा नाले के बहाव का होना दर्शाता है, साथ ही वहीं एक कुआँ अथवा बावड़ी है और ढलानें दर्शाता एक विशेष टीला भी है। यह लेखन कई बार किया हुआ थोड़ा-थोड़ा हटकर किया हुआ दिखता है। जे.एम. केनोअर वाला बूज़्ब स्केच भी यहाँ दिखलाई देता है, इनमें होंठ का सा आकार बनाती शिला के ही क्षेत्र में बूज़्ब स्केच, नदी, बावड़ी, पर्वत आदि किसी विशेष प्रयोजन से अंकित हैं। बावड़ी और टीले के बीच भी कुछ अंकित है, जो अभी समझ में नहीं आ रहा है। इन शैलचित्रों को किसी एक काल का नहीं कहा जा सकता। इसे भी सफेद लेपन के ऊपर लाल रंग से मांडा गया है। आगन्तुकों ने इसे पानी लगा लगा कर खूब रगड़ा है। अतएव कुछ छूट गया है, किन्तु फिर भी ऐच्छिक चीजें दर्शाने में चित्रकार सफल है।

सज़्भव है कि सेंधव अंकनों को बनाने से पूर्व के आवासीय अंकन हों किन्तु आखेट किसी काल में नहीं दीखता। नेत्र का आभास देते हुए ज़िन्न-भिन्न अंकन

भी हैं जो कदाचित् आवासी को जागते रहने के लिए सावधान करते हैं। नेत्र भी कई बार बने दिखलाई देते हैं, जो कदाचित् आसपास की बसावट को दर्शाते हैं।

2. खुदे हुए चित्रांकन

इसी से कुछ हटकर वहीं आगे छाई छत पर इस प्रकार का है कि उसमें सफेद रंग का भी उपयोग नहीं हुआ है। मात्र खुदे हुए अंकित कुछ घेरे हैं जो बावड़ी का सा अन्दाज देते हैं अथवा कदाचित् लावा फूटने के बाद का प्रथम अंकन दर्शाते हों निश्चिन्त् कुछ कहा नहीं जा सकता। उनका अंकन प्राचीन होना सज़्भव है, जब ज्वालामुखी को कदाचित् दैवी प्रकोप समझा जाता रहा हो। यहाँ और भी अनेक ऐसा संकेत भी इन रेखाचित्रों से मिलता है। किन्तु इनके अन्दर मानव ने पशुपालन का विकास भी दर्शाया है। एक बूज़्ब स्केच भी दिखता है जो कि एक सैंधव संकेत है जो उसके उच्चतम अध्यात्म की उद्घोषणा करते हैं। बसावट के चित्रांकन के कारण शैलचित्र विकासमय मानव का भी यहाँ बसना दर्शाते हैं। जिस हेतु छप्पर अंकनमय दिखता है। दो जगह सात पंखुड़ी पुष्प भी दिखता है। किन्तु इन शैलांकनों में कोई मानव अंकित नहीं है। कोई कायोत्सर्ग भी नहीं दिखता। मछली और स्वस्तिक भी नहीं दिखते। सिन्धु घाटी के संकेताक्षर इसे परज़्परागत जैनधर्म से जोड़ते हैं।[6]

यहाँ से लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर महावीर युग के बाद कब जिनधर्मी आकर यहाँ बस गये इसका संकेत नहीं मिलता, फिर भी ग्यारहवीं शती की प्रशस्ति वाले खंडित जिनबिज़्बों का अज़्बार देखकर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यहाँ एक विशाल जिनधर्मी बसावट रही जिसने कई विशाल जिन मन्दिरों का निर्माण कराया होगा और बिज़्ब पथराए होंगे। जिस भी आततायी, धर्म और कला विरोधी ने यहाँ उत्पात माचाया उसने ना केवल जिन मन्दिरों को बल्कि यहाँ समीप स्थित दो सूर्यमन्दिरों को भी बेरहमी से नष्ट किया कि जिस ओर देखो उस ओर यहाँ टीले ही टीले दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है कि कालान्तर में खंडहरों पर टीले बन गये हैं। मात्र एक टीले की जुदाई ने ही खंडित जिनबिज़्बों का अज़्बार दिखला दिया। मात्र 3-4 जिनबिज़्ब ही अखंडित मिले हैं। इनमें अतिविशेष अतिशयकारी खड्गासित अरनाथ और पद्मासित अन्य चार पाँच

बिज़्ब, सभी अति मनोज्ञ हैं, जो अब नवनिर्मित जिन मन्दिर में स्थापित हैं। आसपास के क्षेत्रों में खंडित सूर्यमन्दिर हिले हुए अब भी खड़े हैं। लगता है कि इन सब का विध्वंस हुआ था, किन्तु उसे सुधारने की चेष्टा की गयी जिसमें खज़्भे खंडित मन्दिरों में उपयोग कर लिए गये। किन्तु बाद में एक पर आसमान से बिजली गिर गयी। इसमें एक शिलालेख अपठ उड़िया ब्राह्मी में मिला है। ग्यारसपुर के खंडित जिन मन्दिर की तरह यह अब भी अपनी कला दिखलाता अधूरा खड़ा है। नवनिर्मित जिन मन्दिर के समीप ही एक टीला है जो कदाचित वहाँ की प्राचीन बस्ती को दबाए हो। उसी के पीछे कुछ बड़े-बड़े बोल्डर हैं जिन पर एक योद्धा बिज़्ब रखा है। उसे वहाँ के ग्रामीण आज भी पूजते हैं। खिंची, तनी मूँछों वाला रोबीला, शासक जो जिन भज़्त था। लगता है कि माल्यधर बना वह जिनद्वार पर द्वारपाल बना खड़ा है।[7] वो मजबूर जिनभज़्त, विधर्मी आक्रामकों से जूझकर भी सज़्भवतः हार गया और मन्दिरों के साथ-साथ अपने राज्य को विनाश से न बचा सका।

शैलोत्कीर्ण चित्रकला का विश्लेषण—डॉ. स्नेहरानी जैन

पुरा विद्या विशेषज्ञ डॉ. स्नेहरानी, डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु', डॉ. ए.पी. गौड एवं डॉ. के.पी. त्रिपाठी के अनुसार यहाँ की खुदाई से प्राप्त विशाल खंडित जिनबिज़्ब एवं जैन शासक की प्रतिमा, इस क्षेत्र के हजारों साल प्राचीन समृद्ध नगर होने की सज़्भावना व्यज़्त करते हैं।[7] यह जैनों का विशेष सज़्पन्न क्षेत्र एवं साधना स्थल है, जो काल के क्रूर थपेड़ों एवं राजसज़ा की लिप्सा से भूमि में कब समा गया था, यह ज्ञात नहीं है।

डॉ. स्नेहरानी जी ने अपने अनुभव से शैलचित्रों की रचनाधर्मिता को हड़प्पा मोहन जोदड़ो से प्राचीन बताया है।[8] इन शैलाश्रयों में शैल-चित्रों के अलावा शिलालेखों की शृंखला, पाषाण-औजार एवं अन्य शिल्प भी मिलना चाहिए, ज़्योंकि शैल-चित्रों की आकृति इस क्षेत्र को निर्वाण क्षेत्र होने का संकेत कर रही है। यह शैलचित्र भीमबैठका के शैल-चित्रों से भिन्न है।[9] नवागढ़ के शैलचित्रों में प्राकृतिक समृद्धि एवं धार्मिकता को प्रदर्शित किया गया है। अलग-अलग काल में अलग-अलग रंगों एवं शिला को उकेरित करके बनाया गया है। इससे प्रतीत होता है कि यहाँ कई पीढ़ियों ने साधना करके इस क्षेत्र को जीवन्तता प्रदान की है।

नवागढ़ के शैलचित्र वृषभ, अहिंसक जीवन शैली, प्राकृतिक समृद्धि, कृषि, धार्मिक जीवन पद्धति का प्रतीक है। वृषभ के सामने चौकोर रचना की लकीरें धर्म

के प्रभाव को चारों दिशाओं एवं विदिशाओं में प्रसारित होने का प्रतीक है। तरंगें सरोवर एवं विशाल जलाशयों का, गोल रचना विशाल कूप एवं बावड़ी का अन्य रचना में पर्वत शृंखला की चोटी इस क्षेत्र की सुरज़्य रमणीक साधना स्थली को इंगित करती है। अन्य शैलचित्र में गृहाकृति साधना बसतिका जहाँ सल्लेखना धारण कर समाधिमरण की प्रक्रिया सज़्पन्न प्रक्रिया को चित्रित किया है, उसी के ऊपर केवलज्ञान सूर्य रूप चकरी प्रकाशमान है।[10]

हल्के रंग के शैलचित्र यहाँ साधकों के महाव्रतों अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह को धारण करने वाले महामनीषियों की तपः साधना के विशेष आयाम को दर्शा रहे हैं।

एक अन्य अतिविशिष्ट रचना सन्तों की सल्लेखना चर्या की ओर संकेत कर रही है जिसमें साधक रत्नत्रय अर्थात् सज़्यग्दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र को धारण कर तपः शज़्ति से कषायों को कृष करके आत्मसाधना का संकेत है।

गाढ़े रंग की आकृति सैंधव काल के चित्रों से मिलान करने पर संसारी जीव को सल्लेखना साधना द्वारा दुखमय संसार से निकालकर पंचम सिद्धगति में आत्मा के ऊर्ध्वगमन (मोक्ष) का प्रतीक है।

इस शैलाश्रय के शैलचित्रों की चित्र संयोजना-साधना के विशेष रूपों को स्पष्ट कर रही है, ज़्योंकि बायीं ओर से दायीं ओर क्रमशः साधना के वृद्धिंगत आयामों को दर्शाया गया है, जहाँ साधक वसतिका में सल्लेखना धारण करके चारों आराधनाओं से कषाय को कृष करके अहिंसक धर्म की चतुर्दिक प्रभावना करके सप्तपरम स्थान के श्रेष्ठ मोक्ष अर्थात् निर्वाण को प्राप्त करता है।

आदरणीय ब्र. जयकुमार 'निशान्त' द्वारा खोजे गये शैलाश्रय प्रागैतिहासिक

शैलचित्र-जिन धर्म की प्राचीनता, जैन जीवन पद्धति, साधना एवं मृत्यु महोत्सव की पुरातन परज़्परा को दर्शाते हैं। इसके साथ नवागढ़ की समृद्धशाली जैन संस्कृति के संस्थापक जैन शासक की प्रतिमा इसे विशेष साधना स्थली निर्वाण भूमि के रहस्यों को उद्घाटित करने वाली है।

इस प्रकार इसमें तज़्वनिष्ठा, पंचमहाव्रत एवं श्रावकाचार के बिन्दुओं को दर्शाया गया है। इनको एक-दूसरे से जोड़ना बड़ा मुश्किल है, ज़्योंकि इस शैलचित्र का अधिकांश भाग नष्ट हो गया है। जो भाग जो शेष है, उनके अनुमानतः हम कह सकते हैं कि जैन मुनि परज़्परा एवं जैन इतिहास संस्कृति का निर्देशन करती है।

इस परिक्षेत्र के शैलचित्रों एवं शैलाश्रयों की प्राचीनता और कलावशेषों का सज़्यक् अध्ययन इस क्षेत्र के सांस्कृतिक इतिहास का अन्वेषण किस शताज़्दी तक ले जाता है? प्रतीक्षित है। शासन एवं प्रशासन का ध्यान इन शैलाश्रयों तथा शैल चित्रों के संरक्षण और कला प्रेमियों-मर्मज्ञों-मनीषियों का ध्यान इनके अध्ययन-अनुशीलन की ओर प्रार्थित है। कहीं ऐसा न हो कि यहाँ के शैल-चित्र भी अतीत की स्मृतियों को समेटे काल के क्रूर थपेड़ों में विलीन हो जाएँ या आधुनिक संसाधनों के द्वारा भवन, सेतु, मार्ग आदि के निर्माण हेतु बोल्डर-गिट्टी बनाकर हमेशा के लिए विनष्ट हो जाएँ।

शैलोत्कीर्ण चित्रकला का विश्लेषण—डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी

नवागढ़ क्षेत्र के पश्चिम में फाईटोन के पास जैन पहाड़ी के पूर्व में एक विशाल कच्छप आकृति की शिला है, जिसकी ऊँचाई 15 फुट लज़्बाई 25 फुट तथा चौड़ाई 15 फुट के लगभग है। इसकी अधो भिज़ि एवं छताकार भाग में शैलचित्र आकृतियाँ अंकित की गयी हैं, जो ऋतुक्षरित होकर नष्ट होने जा रही है। इनको किस आशय से और ज़्यों अंकित किया गया था? यह अतीत के गर्त में लुप्त हो गया है।

वर्तमान में सफेद आधार पर प्राकृतिक गेरुआ रंग, रज़्त वर्ण एवं मेरून (कत्थई) रंगों में निर्मित की गयी थी। जिनमें वर्तमान में 5''x7'' आकार में एक वृषभ/गाय चौकोर आकृति में कुछ बिन्दु ऊपरी चौकोर आकृति में धारियाँ, सरोवर,

बावड़ी, पर्वत, सूर्य, चकरी, झोंपड़ी आदि अन्य आकृतियाँ अंकित की गयी हैं। जिनका उद्देश्य अलग-अलग अन्वेषणों ने अलग-अलग मन्तव्य से वर्णित किया हैं।

डॉज़्टर मारुति नन्दन प्रसाद तिवारी बनारस एवं डॉ. एस.एस. सिन्हा वाराणसी ने बगाज टोरिया में स्थित चट्टान पर उत्कीर्ण अभिलेख का विश्लेषण किया और कहा कि यहाँ कोई विशाल उपासना गृह होना चाहिए, जो प्राकृतिक प्रकोप से नष्ट हो गया है। इसी टोरिया के पश्चिम में आचार्य शैलाश्रय को उद्घाटित करते हुए साबू पाहल का अभिलेख, अज़्बिका एवं चमर धारणी मूर्ति के साथ और भी कलाकृतियाँ प्राप्त हुई थी, जिसका साक्षी सज़्पूर्ण ग्राम है।

डॉज़्टर तिवारी ने आचार्य शैलाश्रय का गज़्भीरता से निरीक्षण करते हुए बताया यहाँ अत्यन्त समृद्धशाली चित्रांकन रहा होगा। जिसकी कला विशिष्ट रही होगी। वह धरोहर आज रखरखाव के अभाव में नष्ट हो गयी है। यह बहुत गज़्भीरता से विचारणीय है।

डॉ. गिरिराज कुमार राष्ट्रीय सचिव रॉक आर्ट सोसायटी आगरा

चित्रित रॉक से शेल्टर 3.3 मी. लज़्बा, 3 मी. गहरा तथा 1.55 मी. ऊँचा है। उसमें जानवरों के चित्र, ज्यामितीय आकृतियाँ, सरोवर, बावड़ी, पहाड़ एवं सूर्य आकृतियाँ हैं, जो पूर्व पाषाण काल के घरेलु पशु (माइक्रोलिथिक/मैसोलिथिक) काल 10 से 15 हजार वर्ष प्राचीन हैं। एक व्यक्ति ने अपना नाम वीर गुर्जर और मोटे अक्षरों से सफेद खड़िया से लिखा है, इनका संरक्षण आवश्यक है।

इसमें जंगली पशु बाइसन जैसा दिखता है, यह 19.5 × 17 से.मी. नाप का है, उसका शरीर खड़ी बहु रेखाओं द्वारा सज्जित हैं तथा सींग पूर्ण विकसित एवं मुड़े हुए हैं। उसके सामने एक ज्यामितीय रचना है जो कम तिरछी रेखाओं द्वारा भरी है। इसके बाद दो आयताकार खण्ड हैं। इस रचना का माप 52 × 44 से.मी. हैं जो एक शैल्टर की दाहिनी दीवार पर बना है। ये चित्र लाल रंग से महीन ब्रश के द्वारा बनाये गये हैं। इसके ऊपर गेरुआ रंग से मोटे ब्रश द्वारा एक रेखा के अवशेष हैं। इसके बगल में गहरे रंग से बने तीन विशेष चिह्न बाद में बनाये गये हैं। एक वर्गाकार चित्र बना हुआ है। चट्टान की सतह उखड़ने से पहले इस चित्र का दाहिना हिस्सा क्षतिग्रस्त हो गया है ।

शेल्टर वाल की बायीं तरफ 7 टेढ़ी-मेड़ी रेखायें हैं जो कि मध्यम चौड़ाई के ब्रश द्वारा लाल रंग से बनाई गई हैं। बायें तरफ की आकृति 11 × 10 से.मी.

लगभग वृत्ताकार है। एक और आकृति 16 × 12 से.मी. की है जिसे आड़ी रेखाओं द्वारा दो भागों में बांटा गया है, नीचे का हिस्सा अपेक्षाकृत बड़ा है। इसे 6 अर्धचन्द्राकार मुड़ी रेखाओं द्वारा सज्जित किया गया है। ऊपरी हिस्सा 9 रेखाओं द्वारा असमान भाग में विभाजित हैं।

इसके अलावा रॉक शेल्टर की छत पर उखड़े लाल रंग की पूर्व आकृतियों के अवशेष हैं।

शैलचित्र नष्ट होने की कगार पर

लखनऊ डॉ. ए.पी. गौड़ लखनऊ, डॉ. एस. के. दुबे झाँसी, डॉक्टर के.पी. त्रिपाठी टीकमगढ़, श्री हरिविष्णु अवस्थी टीकमगढ़ यहाँ तक की पूर्व कलेक्टर माननीय श्री मानवेन्द्र सिंह जी ने भी इसका निरीक्षण करते हुए इसके संरक्षण की अनिवार्यता को स्वीकार किया। माननीय कलेक्टर महोदय ने तो इसके संरक्षण हेतु इसे संरक्षित इमारत के रूप में लेने के लिए सचिव संस्कृति विभाग को पत्राचार भी किया है।

नवागढ़ के प्रचार मन्त्री डॉ. सुनील संचय ने बताया कि क्षेत्र निर्देशक ब्रह्मचारी जय कुमार निशान्त ने नष्ट होती चन्देल बावड़ी के संरक्षण का कार्य आरम्भ किया है । वहाँ से प्राप्त विपुल प्राकृतिक धरोहर से शासन-प्रशासन अचम्भित हुआ और उसने संरक्षण की प्रक्रिया माननीय कलेक्टर श्री के निर्देशन में आरम्भ की है।[11]

ललितपुर जिले के विशेष पुरातात्त्विक नगर नवागढ़ में स्थित शैलाश्रय, शैलचित्र, उत्कीर्ण कायोत्सर्ग मुद्रा, चरण चिह्न एवं रॉक कपमार्क के संरक्षण की ओर ध्यान देते हुए संरक्षण प्रशासन द्वारा किया जाएगा, क्योंकि यह प्राकृतिक प्रकोप के साथ ग्रामीण बालकों के क्रीड़ा स्थल एवं आमोद-प्रमोद स्थल बन गये हैं। कुछ चित्रांकन ग्रामीण बच्चों द्वारा नामांकित करने से नष्ट हो चुके हैं।

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

सन्दर्भ—

1. रायकृष्णदास, भारत की चित्रकला, पृ. 1
2. आर.ए. अग्रवाल, कला विलास, भारतीय चित्रकला का विवेचन, पृ. 69
3. शोध प्रबन्ध, रोली ज्यौहार, जैन चित्रशैली में अभिव्यंजित नारी सौन्दर्य, नारी के विविध रूपों की अभिव्यंजना
4. 1. मध्यप्रदेश में पुरातत्वीय शोध–प्रो. कृष्णदत्त वाजपेयी,
   2. क्षुल्लक चिदानन्द स्मृति ग्रन्थ, पृ. 129
5. गाइड बुक टू डेसीफर द इंडस स्क्रिप्ट, स्नेहरानी जैन, 2006
6. सैंधवपुरा अवशेष एक शाश्वत अभिव्यंजना, स्नेह रानी जैन एवं जितेन्द्र कुमार, 2002
7. एक्सकेवेशन्स एट हड़प्पा, भाग 1 और 2, 1920-21 एवं 1933-34, श्री एम. एस. वत्स
8. फर्दर एक्सकेवेशन्स एट मोहनजोदड़ो भाग 1 और 2, 1938, श्री ई. जे. मैके
9. मोहनजोदड़ो एंड द इंडस सिविलाइजेशन, भारत सरकार, 1927 एवं 1931 से 1936, सर जॉन मार्शल
10. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र–डॉ. स्नेह रानी जैन–प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार, अप्रैल 2015
11. नवागढ़ (नंदपुर)पाषाण युग का सांस्कृतिक क्षेत्र-डॉ. गिरिराज कुमार

नवागढ़ से प्राप्त प्राकृतिक शैल गुफाएँ एवं पुरापाषाण कालीन साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन

1. नवागढ़ में प्राप्त टोरिया (लघु पहाड़ियाँ)

(1) मैनवार टोरिया

(2) मुंडी टोरिया

(3) सापौन टोरिया

(4) सिद्धों की टोरिया

(5) बगाज टोरिया

(6) जैन टोरिया

(7) ग्रेनाइट वोल्डर समूह

2. नवागढ़ में प्राप्त शैलाश्रय

बुन्देलखंड एक प्राकृतिक सौन्दर्य एवं सांस्कृतिक प्रदेश है जिसका प्राचीनतम स्वरूप विंध्य एवं सतपुड़ा पर्वत मालाओं के साथ-साथ क्षेत्रीय लघु पहाड़ियों के शैलाश्रयों (गुफाओं) में देखने को मिलता है।

इनसे पुरा पाषाण कालीन सज़्यता, शैलचित्र, साधना स्थल, अध्ययन स्थलों की प्राचीनता सिद्ध होती है।

नवागढ़ में प्राप्त शैलाश्रय एवं शिलाएँ निज़्न हैं–

1. आचार्य शैलाश्रय
2. साधना शैलाश्रय
3. उपाध्याय शैलाश्रय
4. साधु शैलाश्रय
5. अध्ययन शैलाश्रय
6. विश्राम (शयन) शैलाश्रय

3. शिलाएँ

(1) कच्छप शिला

(2) मटकाटोर शिला

(3) फाइटोन शिलाएँ

(4) बैलेंस रॉक (अधर शिला)

(5) घंटा ध्वनि शिला

(6) हैंगिंग रॉक (लज़्बित शिला)

4. नवागढ़ से प्राप्त पुराताज़्विक सज़्पदा

(1) पाषाण कुल्हाड़ी

(2) पैट्रोलिक कपमार्क

(3) मिट्‌टी एवं पाषाण के मनके

(4) चन्देल बावड़ी

(5) मन्दिर अवशेष

(6) धातु उपकरण

(7) काष्ठ उपकरण

(8) उत्कीर्ण साधु की आकृति

(9) चरण चिह्न

(10) पुरापाषाण कालीन साक्ष्यों की समीक्षात्मक अध्ययन

नवागढ़ से प्राप्त टोरिया (लघु पहाड़ियाँ)

बुन्देलख खंड के भूभाग में मुज़्यतः विंध्य और सतपुड़ा की पर्वत श्रेणियाँ फैली हुई हैं, इनके अतिरिज़्त दशार्ण (इन्द्रपद) केजरापर्वत (उदयगिरि), (विदिशा), नैत्यगिरि (सांची), कलिंजर, चित्रकूट, पर्वतों का उल्लेख भी मिलता है। इसके अतिरिज़्त विभिन्न क्षेत्रों में कई लघु पहाड़ियाँ भी मिलती हैं।

नवागढ़ (नावई) के आसपास उपलज़्ध लघु पहाड़ियों (टौरिया) में प्राचीन पुरा पाषाण कालीन सज़्पदा से लेकर चन्देल कालीन पुरा सज़्पदा का भंडार है। जिनका अन्वेषण समय-समय पर पुरातज़्वविदों द्वारा किया गया है।

नवगढ़ में प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ-साथ छोटी-छोटी पहाड़ियाँ इसके सौन्दर्य को विशेष आयाम देती हैं। यहाँ प्राप्त निम्नलिखित लघु पहाड़ियाँ हैं।[1]

1. मैनवार टोरिया

नवागढ़ क्षेत्र से उत्तर प्रदेश की सीमा ललितपुर की ओर मैनवार से 1/2 किलोमीटर पहले एक ग्रेनाइट की पहाड़ी है जिसको काटकर मार्ग बनाया गया है। इसकी लम्बी शृंखला के आसपास भी पाषाण औजारों की प्राप्ति हुई है, इन औजारों में ग्रेनाइट के पाषाण खंडों को काटकर, छीलकर उनको त्रिकोण, नुकीला धारदार बनाकर विभिन्न कार्यों के उपयोगानुसार उनको विशेष आकार दिया गया है। इनमें कुछ उपकरण इस प्रकार के भी हैं जिनका उपयोग आदिमानव ने किया होगा।[2]

अभी भी इन पहाड़ियों में कई रहस्य अन्वेषित होना शेष है।

2. मुंडीटोरिया

बगाजटोरिया के निकट क्षेत्र की नैर्ऋत्य दिशा में 1/2 कि.मी. की दूरी पर लाल मुरम की लगभग आधा किलोमीटर लम्बी एवं चौड़ी तथा लगभग 50-60 फुट ऊँची पहाड़ी है। उस पर पाषाणों, चट्टानों तथा वृक्षों का अभाव है। इसकी मिट्टी का उपयोग ग्रामीणजन गृह निर्माण, रोड निर्माण एवं कूप निर्माण में करते हैं।

इस मुंडीटोरिया या मुरम (लाल मिट्टी) की पहाड़ी का ग्रामीणों के द्वारा सतत खनन होने से कई खदानें 15 से 20 फुट की सपाट दीवार रूप में हो गयी है।

डॉ. गिरिराज कुमार, आगरा ने इस मुंडीटोरिया की खनित दीवार का गम्भीरता से अन्वेषण एवं अध्ययन के द्वारा बताया। यहाँ पूर्व में पानी का भंडार (समुद्र का विशाल सरोवर) था जिसके कारण यहाँ की मिट्टी इकट्ठी होती रही, इसमें डॉ. कुमार ने प्री पैलियोलिथिक (2 लाख से 5 लाख वर्ष प्राचीन संस्कृति) मिडिल पैलियोलिथिक (35 हजार से 2 लाख वर्ष पुरानी संस्कृति) पोस्ट पैलियोलिथिक (15 हजार से 35 हजार वर्ष प्राचीन संस्कृति) के पाषाण उपकरण खोजे हैं। जिनका निर्माण जैस्पर, चर्ट, एक्वार्ट्ज, फिलट जैसे कठोर पाषाण से किया गया

होगा। जिनका खुरचने, काटने भेदने में आदिमावन ने अपने जीवन यापन के लिए उनका उपयोग किया था। यह सभी उपकरण नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर की प्राचीनता के साक्ष्य हैं जो संग्रहालय में संगृहीत हैं।[3]

3. सापौनटोरिया

नवागढ़ क्षेत्र से मध्यप्रदेश की ओर 5 किलोमीटर दूरी पर सापौन मार्ग के तिराहे पर श्वेत क्वार्ट्ज पाषाण की विशाल चट्टान वाली टोरिया है। इसका लगातार तीन बार के प्रवास में डॉ. गिरिराज कुमार, राष्ट्रीय सेक्रेटरी रॉक आर्ट सोसाइटी दयालबाग इंस्टीट्यूट, आगरा ने कई पाषाण कालीन औजारों का अन्वेषण करके इस क्षेत्र की प्राचीनता को विशेष आयाम स्थापित किये हैं।[4]

अति सूक्ष्म, सूक्ष्म एवं विशेष आकृति वाले इन पाषाण औजारों से उस काल की संस्कृति उद्घाटित हो गयी है।

4. सिद्धों की टोरिया

नवागढ़ ग्रेनाइट संरचित क्षेत्र है। यहाँ पहाड़ी के ऊपर प्राचीन रहवासियों के साधन के कुछ अवशेष प्राप्त होते हैं, पहाड़ी गाँव के दक्षिण पश्चिम में स्थित है। यहाँ से कुछ बर्तनों के अवशेष तथा प्राचीन दुर्लभ सामान यथा मिट्टी तथा पाषाण के मनके, धातु उपकरण आदि प्राप्त किए हैं।[5]

मन्दिर के पश्चिम में 1.5 किमी. की दूरी पर एक ग्रेनाइट की पहाड़ी है जिसको 'सिद्धों की टोरिया' कहा जाता है। यहाँ पर ग्रेनाइट की एक विशाल चट्टान है जो ऊपर से नीचे तक दो भागों में दरार के द्वारा विभाजित है।[6] यह चट्टान लगभग 8.6 × 3.5 मीटर लम्बी चौड़ी ऊँची है इसकी एक चट्टान पर पेट्रोलिक कपमार्क अन्वेषित किया गया है ।

बगाज टोरिया

नवागढ़ मन्दिर से दक्षिण में 500 मीटर की दूरी पर स्थित है, जो पृथ्वी तल से 50-60 फुट ऊँची एवं 200 फुट विस्तार वाली है । इसकी चोटी पर सुन्दर मनोज्ञ चंदेल शासक मदनवर्मन की 2 फुट उत्तुंग मूर्ति स्थापित है, जिसके दाहिने कन्धे के ऊपर जैन तीर्थंकर की पद्मासन आकृति है, जिसे ग्रामीणजन बगाज माता के रूप में पूजते हैं। ग्रामीण जनों की श्रद्धा विशेष इस आकृति के प्रति है, गृहस्थी में होने वाले शुभ कार्यों में ग्रामीण इसके समक्ष मिट्टी के घोड़े बनाकर समर्पित करते हैं, दशहरे पर जवारे समर्पित करते हैं तथा वर्षाकाल में यहाँ सामूहिक गीत संगीत करके अपनी निष्ठा व्यक्त करते हैं।[7] वर्तमान में इसे ब्र. निशांत भैया की प्रेरणा से एक मढ़िया (लघु मंदिर) का रूप दे दिया गया है ।

इस टोरिया के पश्चिम में आचार्य शैलाश्रय है जहाँ सन्तजन स्वाध्याय अध्ययन करते थे। इसमें अंकित प्राचीन शैलचित्र नष्ट हो चुके हैं।

इस टोरिया पर ही ब्र. जयकुमार निशांत जी ने घंटा ध्वनि वाली शिला का अन्वेषण किया है।

इस टोरिया पर उत्तर में विशाल प्रांगण है जहाँ वर्ष 1016 में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा एवं गजरथ महोत्सव की जन्माभिषेक की मांगलिक अनुष्ठान विधि पांडुक शिला निर्मित करके की गयी जो आज भी स्थित है।

इसी प्रांगण में क्षेत्र अन्वेषक पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य, पूर्व प्रधान श्री रामनारायण यादव के पिताश्री हरगोविन्द यादव एवं ब्र. राजेश भैया वर्धमान के पिताश्री कोमल चन्द्र जी के शरीर का अन्तिम संस्कार किया गया है।

इस टोरिया की विशाल चट्टान पर एक अभिलेख भी अंकित है, जिससे संकेत मिलता है कि इस टोरिया पर प्राचीन समय में कोई मन्दिर या भवन निर्मित रहा होगा जो प्रकृति प्रकोप से कालकल्वित हो गया है। इसके अवशेष, आचार्य शैलाश्रय, मनोज्ञ शासक, घंटाध्वनि वाली शिला के रूप में उसकी यशोगाथा के साक्ष्य है।

जैन टोरिया

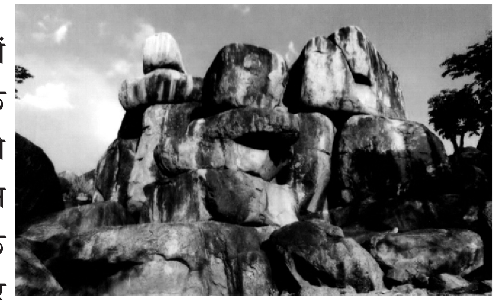

नवागढ़ मंदिर से पश्चिम में 3 कि.मी. दूर फाईटोन शिला के पास जैन टोरिया न जाने कितने रहस्यों को समेटे हुए हैं। प्राचीन काल में घने जंगल एवं हिंसक पशुओं के कारण यहाँ पहुँचना दुष्कर था। फिर भी उसका प्राकृतिक सौन्दर्य, नीलगायों, हिरणों, खरगोशों के साथ लोमड़ी एवं वानरों की उपिस्थिति अनुपम थी। वृक्षों की सघनता से आच्छादित शांत, सुरम्य, टोरिया आकर्षण का केन्द्र थी।

धीरे-धीरे मानवीय निष्ठुरता स्वार्थ एवं प्राकृतिक आघातों से इसका सौन्दर्य विकृत होता गया। सघन वृक्षों की कटाई से हिंसक पशुओं का पलायन होने लगा। शेर, चीते, हिरण, खरगोश अब किवंदती में ही रह गये हैं। यदा-कदा नीलगाय के समूह ही दृष्टव्य होते हैं। आज भी इसका सौन्दर्य विलक्षण है, इसकी चोटी से जहाँ भी नजर जाती है हरियाली ही नजर आती है, सुदूर ग्रामीणजनों के खेत खलिहान विशेष आमंत्रण देते प्रतीत होते हैं।

मेरे नवागढ़ प्रवास पर ब्र. जयकुमार निशांत जी ने बताया वर्ष 2011 में आयोजित पंचकल्याणक प्रतिष्ठा के पश्चात् क्षुल्लक चिदानंद जी महाराज के सन् 1965 एवं 1966 के चातुर्मास की जानकारी मिली तब प्रथम बार उस दुर्गम जैन टोरिया पर ग्रामीणजनों के साथ आरोहण किया। झाड़ियों एवं उबड़-खाबड़ पाषाण खंडों के बीच कंटिली झाड़ियों से बचते हुए पहाड़ी का निरीक्षण करते हुए भिन्न-भिन्न चोटियों पर पहुँचते थे। कोई मार्ग निश्चित नहीं था। कुछ दिन बाद चूने द्वारा पाषाणों को चिह्नित करके 2 -3 मार्ग सुनिश्चित किए। परन्तु चोटी के शिलाखण्डों पर पहुँचना अत्यन्त दुर्गम है।

जैन टोरिया पुरातात्त्विक साक्ष्यों का विशाल भण्डार हैं, उसके चारों ओर पुरा सम्पदा बिखरी पड़ी है। प्राकृतिक शैलाश्रय, पाषाण औजार, शैलचित्र, कच्छप शिला, शयन शैलाश्रय, साधना शैलाश्रय, साधु शैलाश्रय, उपाध्याय शैलाश्रय, के साथ न जाने कितने रहस्य समाहित हैं अन्वेषण का विषय है।

ग्रेनाइट बोल्डर समूह

यह पहाड़ी डूडा ग्राम के प्रारज़्ज़ होते ही दिखाई देती है। सड़क मार्ग से नवागढ़ जाते समय इसे देखा जा सकता है यह एक वृहद पहाड़ी समूह है जिस पर अभी अन्वेशषण किया जाना बाकी है। सभी बोल्डर गोलाकार रेड ज़्ले से युज़्त है मुरम से युज़्त यह पहाड़ी लावण्य कणों से युज़्त है। कहीं-कहीं ज़्वार्टज के शाखाएँ भी देखी जा सकती है। यह पहाड़ी समूह अन्य पहाड़ी से भिन्न है यहाँ अधिकतर ज़ड़ी एवं भारी चट्टानों को देखा जा सकता है। यहाँ कहीं-कहीं पलाश के पौधों एवं पहाड़ों पर उगने वाले प्राकृतिक वनस्पति की शृंखला को देखा जा सकता है। यह पहाड़ी रहवासियों के लिए आश्रय का उज़म स्थान नहीं है। इन पहाड़ियों में बोल्डर का स्खलन होता रहता है। जिससे कभी-कभी ग्रामीण मार्ग अवरुद्ध हो जाता है। इन पहाड़ियों को अन्वेषित करने के लिए कम से कम 5 दिन का समय एवं प्रशिक्षित गाइड की ज़ी आवश्यकता होगी। स्थानीय चरवाहे इन पहाड़ों पर ज़ेड़ों को चराते हुए दिखे जा सकते हैं। इन पहाड़ों की ऊँचाई स्थानीय धरातल से लगभग 50 मीटर तक है। ये पहाड़ियाँ स्थानीय छोटे जानवरों के छुपने के लिए आदर्श स्थान है। यह सभी पहाड़ियाँ ग्रामीण जनों के लिए आवश्यक हैं। वारिस के समय में इन पहाड़ियों में जमा जल राशि धीरे-धीरे स्थानीय जल में मिल कर कुओं के जल स्तर को बनाए रखती है। जिससे स्थानीय ग्रामीणजनों को ग्रीष्म काल में पानी की कमी नहीं होती है। नवागढ़ नन्दपुर जाने के रास्ते में पड़ने वाली यह पहाड़ियाँ आर्कियन शैल समूह की हैं तथा दो लाख साल से भी ज्यादा प्राचीन है। ज़्वार्टज, फैल्सफार, ऐल्युमिनम कज़्पोजिट से बनी इन चट्टानों में मेटेलिक साउंड रॉक भी कभी देखने को मिल जाते हैं। जो जिज्ञासा को बढ़ाने का काम करते हैं। प्राचीन काल से हिन्दूधर्म जैनधर्म के साधना स्थलों के रूप में इन स्थानों को चिह्नित किया गया है। कहीं-कहीं तो इन पहाड़ियों में शवाधान भी किया जाना प्रारज़्भ कर दिया गया है। आदिमानव के अवशेषों की खोज अभी इन पहड़ियों में किया जाना चाहिए। अवश्य ही इन शिलाखंडों मे जीवाश्म अवशेष आदि मिल सकते हैं।[8]

नवागढ़ में प्राप्त शैलाश्रय

आचार्य शैलाश्रय

नवागढ़ क्षेत्र पर गृहनिवास के अवशेष प्राप्त हुए थे। बगाजटोरिया के दक्षिण की ओर पहाड़ी विशाल विस्तार लिए है जिसके अन्तिम दक्षिण पश्चिम छोर पर आचार्य शैलाश्रय है। कई वर्ष पूर्व ग्रामीणजनों ने मिट्टी आदि से बन्द कर दिया था, ज्योंकि इसके मार्ग से पालतु जानवर जंगल की ओर चरने के लिए जाते थे और इस शैलाश्रय में तेंदुआ एवं बाघ अपना आश्रय बनाकर जानवरों का भक्षण करने लगे थे।[9]

ग्राम के वृद्धजनों से इसका इतिहास जानकर क्षेत्र निर्देशक ब्रह्मचारी जयकुमार निशान्त भैया जी ने इसे ग्रामीणजनों के सहयोग से दिनांक 11 जून 2015 को खोलने का कार्य किया। जिसमें पाहल की प्रशस्ति वाला पाषाण खंड, अज़्बिका की खंडित कलाकृति जिसका विलक्षण सौन्दर्य आकर्षक प्राप्त हुए है। आम्रगुच्छ के एक ओर तोता तथा एक ओर वानराकृति है। इसके मध्य में जैन अरिहंत की पद्मासन प्रतिमा अंकित है एवं चंवरधारिणी इन्द्राणि की खंडित प्रतिमा के साथ अन्य शिल्प एवं धातु उपकरण भी प्राप्त हुए। इसमें सेही पक्षी का निवास था जिसके काँटे बहुतायत में प्राप्त हुए थे।

वगाज शैलाश्रय की मुज़्यता यह है यह जिस प्राकृतिक रूप से दो खंडों में विभाजित है। इसका अधोपाषाण उपरि मध्य एवं अधो तीन स्टेप में स्थित है। यह एक स्वाध्याय केन्द्र रहा है, जहाँ ऊपरी भाग में आचार्य, मध्यभाग में उनके शिष्य साधु एवं अधोभाग में स्वाध्यायशील श्रावकगण बैठकर धार्मिक शिक्षा ग्रहण करते होंगे। डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, डॉ. एस. एस. सिन्हा डॉ. यशवंत मलैया कोलोराडो स्टेट युनिवर्सिटी अमेरिका के अनुसार इस में कुछ शैलचित्र एवं अन्य आकृतियों के निर्माण की सज़्भावना है जो दीर्घकालिक ऋतुक्षरण से नष्ट हो गयी हैं।

प्रशस्ति वाली चट्टान के समीप ही लगभग 2 फुट ऊँची सुन्दर कलाकृति स्थित है। इसका शिल्प विन्यास एवं मूर्ति शिल्प अत्यन्त उत्कृष्ट है। यह खुले स्थान में रखे होने कारण ऋतुओं के प्रभाव से जीर्णता को प्राप्त हो रही है। इसके

शिरोभाग पर सुन्दर अलंकरण है। वस्त्राभूषण एवं उत्तरीय के वैशिष्ट्य से यह किसी राजपुरुष की आकृति प्राप्त प्रतीत होती है। इसका विशाल मस्तक मूँछ दाढ़ी कुंडल के साथ वालों का जूड़ा आकर्षक है।

इस कलाकृति के दाहिने कन्धे के ऊपर एक पद्मासन अरिहंत प्रतिमा उत्कीर्ण है जिससे सिद्ध होता है कि यह किसी जैन राजा की कृति है जिसने यहाँ विशाल जिनालय का निर्माण कराया होगा।[10] अन्वेषण दल के डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी, श्रीहरि विष्णु अवस्थी इतिहासकार एवं डॉ. बृजेश रावत लखनऊ, इसे चंदेल शासक मदनवर्मन की कृति सिद्ध करते हैं।

साधना शैलाश्रय

नवागढ़ क्षेत्र के पश्चिम दिशा में लगभग तीन किलोमीटर दूर फाइटोन के पास ही जैन पहाड़ी पर कच्छप शिला के सामने यह प्राकृतिक शैलाश्रय है जिसमें प्रवेश करने का स्थान अत्यन्त संकरा है जिसमें व्यक्ति बैठकर रेंगकर ही प्रवेश कर पाता है।

इस शैलाश्रय का विवरण डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु वरिष्ठ पुरातत्त्वविद दमोह ने अपने आलेख में विशेष रूप से किया है। यह शैलाश्रय 3-4 साधुओं की निरापद साधना के लिए श्रेष्ठतम स्थान है। इसमें किसी प्रकार की प्रकाश एवं वायु की कमी प्रतीत नहीं होती है। यह पृथ्वी तल से लगभग 90-100 फुट ऊँचाई पर है अतः हवा की शीतलता ग्रीष्म में भी गर्मी का आभास नहीं होने देती है।[11]

उपाध्याय शैलाश्रय

जैन पहाड़ी के पश्चिम में कच्छप शिला से आगे छोटी तिकोनी पश्चिम मुखी उपाध्याय शैलाश्रय है। जो प्राकृतिक प्रकोप से खंड-खंड हो रही है। इसी के भूमि तल से उपाध्याय परमेष्ठी बिम्ब की प्राप्ति हुई थी।[12] इस शैलाश्रय का आकार लगभग 10 फुट × 8 फुट होगा। इसमें साधक निरापद होकर साधना कर सकता है।

साधु शैलाश्रय

जैन पहाड़ी के नीचे उत्तर दिशा में–उत्तरमुखी साधु परमेष्ठी शैलाश्रय है जो कई वर्षों से जंगली जानवरों का आवास बना था। ब्र. निशान्त भैया जी ने 11

जून 2015 को इसका अन्वेषण करके इसमें भरी मिट्टी एवं झाड़ियों को जब हटवाया तो सभी आश्चर्य चकित रह गये। इसमें आसानी से बैठकर 4-5 साधक किसी भी काल में साधना कर सकते हैं। इसका मुहाना (प्रवेश) छोटा एवं संकरा है।

जब द्वितीय प्रवास में इसका निरीक्षण किया तो वहाँ किसी विशेष पक्षी का मिट्टी का घोंसला भी देखा।

अध्ययन शैलाश्रय

फाइटोन शिलाओं के पास जैन पहाड़ी की कच्छप शिला के नीचे विशाल शिलाओं के मध्य यह शैलाश्रय है। जिसमें पर्याप्त प्रकाश एवं हवा उपलब्ध है। इसमें बाहर की ओर 3-4 व्यक्तियों के बैठने तथा भीतरी भाग में अध्यापन में संलग्न ग्रन्थों को सुरक्षित रखने का स्थान है।[13]

शयन शैलाश्रय

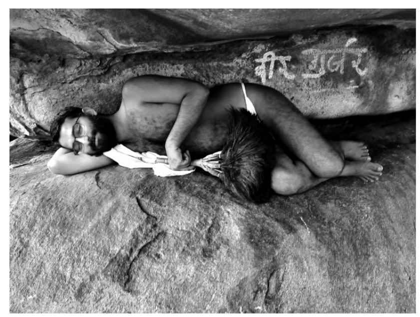

साधना शैलाश्रय से ऊपर एक ऐसी अजीबोगरीब लम्बी चट्टान है जो भीतर से खोखली है तथा तीन सिरों पर बड़ी चट्टान पर इस तरह व्यवस्थित है कि इसमें पीठ के बल रेंगकर प्रवेश करके दो लोग आराम से शयन कर सकते हैं। इसमें किसी प्रकार की घुटन नहीं होती ज्योंकि तीन तरफ से थोड़ी खुली होने से वायु का प्रवाह निरन्तर बना रहता है।[14]

इसका उपयोग साधक हिंसक पशुओं से बचाव करने तथा रात्रि में शयन करने में करते होंगे।

नवागढ़ में शिलाएँ

कच्छप शिला : कूर्म या कच्छप शिला, विशाल आकार वाली कछुए के आकार की शिला है जो सदियों से कई रहस्यों को अपने में समेटे है। इसके आधार एवं (छत) में 8-10 हजार वर्ष प्राचीन Rock Painting की धरोहर है।

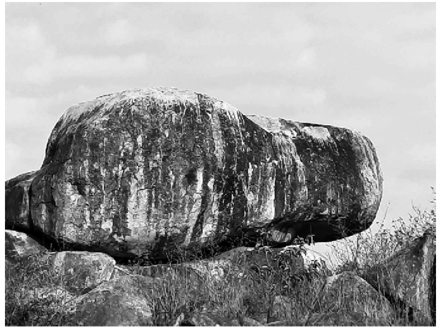

जिसमें सज़्पूर्ण जीवन को उत्कृष्ट बनाने के संकेत एवं सूत्र चित्रित हैं। जिसमें मानव के जन्म से लेकर मोक्ष तक की यात्रा के प्रतीक यथा पंच-महाव्रत, तीर्थंकर चिह्न, कषाय निग्रह, चतुर्दिक विन्यास, साधना स्थल, निषीथिका, केवल ज्ञानसूर्य, पंचमगति आदि का वर्णन है। इसी शिला के आधार को सौभाग्य मिला है हजारों वर्षों तक सन्तों के शयन कराने का, जिसमें सतत शयन से इस शिला के ऊपर का रूखापन एवं खुरदरापन ज़ी इतना मृदु चिकना हो गया है कि उसका स्पर्श करने पर विशेष अनुभूति होती है।[15]

मटकाटोर शिला

नवागढ़ क्षेत्र के पश्चिम दिशा में लगभग डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर ग्रेनाइट चट्टानों की श्रृंखला में दाहिनी ओर 5 फुट चौड़ी 8 फुट ऊँची एवं लज़्बी यह शिला स्थित है।

इस शिला में प्राकृतिक रूप से मध्य में उल्टे बड़े मटके के समान रिज़्त स्थान है, जिसमें पीठ के बल लेटकर रेंगते हुए प्रवेश किया जा सकता है। 10 से 15 साल का बालक पूरी तरह से उस मटके की आकृति में बैठ सकता है। जिसका आभास बाहर से बिल्कुल नहीं होता है। अन्वेषकों के अनुसार नवागढ़ क्षेत्र में दूसरी से तीसरी सदी से साधुओं का आवागमन निरन्तर होता रहा है। इन शिलाओं एवं शैलाश्रयों का उपयोग वह साधना करने में करते होंगे। यह शिला अत्यन्त विलक्षण है।

फाइटोन शिलाएँ –

नवागढ़ क्षेत्र से 3 किमी. पश्चिम में विशिष्ट 5 शिलाएँ हैं। जिनमें 4 शिलाएँ एक के ऊपर एक शिलाओं द्वारा प्राकृतिक रूप से व्यवस्थित हैं। लगभग 35 फुट ऊँची यह चट्टानें अत्यन्त आकर्षक हैं। 5वीं चट्टान लगभग 45^0 से झुकी हुई है, 35 फुट लज़्बी इस झुकी हुई चट्टान के शीर्ष पर पहुँचने का आनन्द

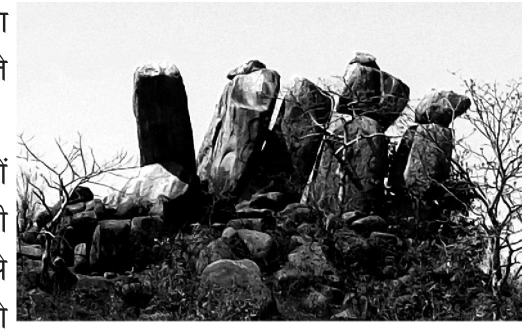

अलौकिक है। दर्शक इसका आनन्द लेकर उल्लासित होते हैं।

इन पाँच लज़्बी शिलाओं Five stone के कारण ही इसका नाम Five stone से फाईटोन के रूप में प्रसिद्ध हो गया है।[16]

इन चट्टानों के पास भी कुछ पाषाण औजार एवं धातु उपकरण प्राप्त हुए हैं। डॉ. एस.के. दुबे संग्रहालय अधिकारी राजकीय संग्रहालय, झाँसी एवं वरिष्ठ संग्रहालय अधिकारी श्री नरेश पाठक ने दिनांक 6 नवज़्बर, 2016 को लघु पाषाण औजार की खोज इन्हीं फाईटोन शिलाओं से की थी।

बैलेंस रॉक (अधरशिला)

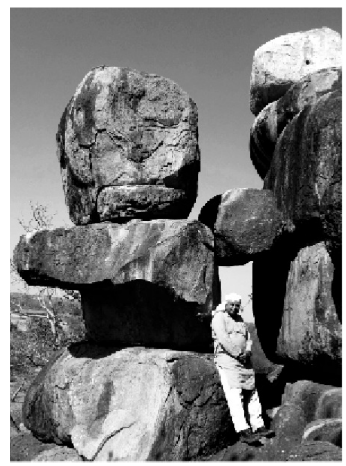

पाँच सफेद देशी पाषाण की श्रृंखला वाला यह समूह देखने में दूर से साधारण पत्थरों की श्रृंखला लगता है वास्तविक रूप से यह आदिमानव के निवास के रूप में मध्यपाषाण कालीन जीवन के उपकरणों के संकलन का स्थान माना गया है। यहाँ से मध्यपाषाण कालीन सज़्यता के उपकरणों को प्राप्त कर उनका प्रदर्शन रॉसी के माध्यम से किया जा चुका है। यहाँ से तीन किमी. दूर एक बहुत बड़ी चट्टान अपने बजन के लिए विज़्यात है। यह गोल चट्टान अधर में अटकी हुई दिखाई देती है।[17] इस चट्टान पर पहुँच कर विशेष प्रकार की अनुभूति होती है। इन चट्टानों की उत्पज़ि के विषय डॉ. स्नेहरानी जैन ने लिखा है, वहाँ की सभी ग्रेफाइट चट्टानें ज्वालामुखी के कारण बनी। लेकिन स्तरीय जाँच से दृष्टव्य होता है कि ग्रेनाइट क्रेश स्टोन की उत्पज़ि प्राकृतिक गतिविधियों के परिणाम स्वरूप हुई होगी।

घंटा की ध्वनि वाली शिला

ऐसी पाषाण शिला जिसे पत्थर से बजाने पर घंटे जैसी ध्वनि का नाद (Musical Sound) होता है। जिसकी ध्वनि पर पूजा, भजन एवं आरती भी सज़्पन्न करने का आनन्द ही अनूठा है।

हैंगिंग रॉक (लज़्बित शिला)

(Five Stone Rocks) एक दूसरे के साथ आश्चर्यजनक रूप से व्यवस्थित हैं। मानो प्रकृति का कोई चमत्कार हो। उनमें से एक 35 फुट लज़्बी शिला 45^0 पर झुकी हुई है। जिस पर चढ़ाई करने पर विशेष आनन्द प्राप्त होता है।[18]

नवागढ़ ऐतिहासिक, पुरातात्त्विक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक धरोहर तो है ही यहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ कई पर्यटन स्थल भी हैं।

नवागढ़ में प्राप्त पुरा सज़्पदा

पाषाण की कुल्हाड़ी

लगभग 500 मीटर गाँव के पश्चिम में स्थित पहाड़ी की ढलान पर चर्ट पर बनीं एक छोटी हेंड एज़्स मिली है। यह अच्छी तरह निर्मित है और इसका वेंट 120 डिग्री पर बना है जिसका कुछ हिस्सा उखड़ गया है, सिरा टूट गया है किनारे टेड़े-मेड़े हो गये हैं इसके आगे-पीछे दोनों तरफ की 5-5 पर्तें उखड़ गयी हैं। किनारों की मरज़्मत दोनों तरफ से की गयी है। इसका रंग हल्का पीला है।[19]

इसके अतिरिक्त मुण्डीटोरिया, बगाज टोरिया, पनया नाला के आसपास छोटी हैन्डेज़्स, 43.8 × 39 × 15 मि.मी. पेटीनेटिड चर्ट 38.3 × 26.0 × 10 मि.मी. की तिकोनी आकृति एवं 31.5 × 23.0 × 9.4 मि.मी. की ज़्लेक ऑन चर्ट का अन्वेषण भी डॉ. गिरीराज कुमार द्वारा दिनांक 27-28 मार्च 2018 को किया गया ।

पेट्रोलिक कपमार्क

सिद्धों की टोरिया की ग्रेनाइट की एक विशाल शिला के ऊपर एक पेट्रोलिक कपमार्क बना है जो लगभग वृज़ाकार है। जिसका माप 60 × 69 ×26.5 मिली मीटर है। इसके क्रिस्टल की रचना 1.2-0.4 मि.मी. तक है । क्षरण के कारण यह जानना सज़्ज़व नहीं हो पाया कि किस तकनीक से इसका निर्माण किया गया था। यह प्रत्यक्ष दबाव (ठोककर) तकनीक के द्वारा बनाया गया था या धातु की छैनी का प्रयोग करके बनाया गया। यह सुनिश्चित नहीं हो पाया है। फिर भी इसकी सतह को देखकर लगता है कि इसमें गतिज ऊर्जा का स्थानान्तरण हुआ था, जिसका वर्तमान में कुछ अवशेष मात्र है। बाकी क्षरण के कारण समाप्त

त्र कप मार्क है।[20] जिसे हम लोगों ने इस क्षेत्र पर पाया है। अवशेषों की आशा करते हैं अतः इस क्षेत्र पर गहन खोज से अनेक अवशेष प्राप्त हो सकें।

क मनके

न शैलाश्रयों में जैन सन्तों के नस्थल यह सिद्ध करते हैं कि जैन सन्तों का आवागमन हजारों ा है। नवागढ़ की पहाड़ियों में ले मिट्टी एवं पाषाण के मनके ंस्कृति के साक्ष्य हैं। जो लगभग नका उपयोग महिलाओं एवं पुरुषों में भी विशेष अवसरों पर किया जाता था ।

चन्देल बावड़ी

पूर्व दिशा में लगभग एक किमी. दूरी पर हनुमान मन्दिर के समीप एक चन्देल बावड़ी स्थित है। ग्रामवासी जिसके जल का उपयोग पीने एवं जीवनोपयोगी कार्यों में करते थे। इसकी विशेषता है यह चंदेलशासन काल में पूर्णतः ईंट एवं पाषाण से निर्मित है इसमें जल की सतह तक पहुँचने के लिए पाषाण की सीढ़ियाँ इस तरह बनी हैं कि व्यक्ति आसानी से उतरते हुए पानी की सतह तक पहुँचकर अपनी प्यास बुझा सकता है। सामूहिक रूप से जल प्राप्त करने में कोई परेशानी नहीं होती है।

इसकी निर्माणकला एवं सौन्दर्य अत्यन्त आकर्षक एवं मनोहारी है।

इस बावड़ी का आकार 35 से 40' फुट चौड़ा है। इसकी गहराई का माप सम्भव नहीं हो सका है क्योंकि पानी के अभाव में इसकी ओर किसी ने ध्यान नहीं दिया, जिससे वह मिट्टी कचड़ा एवं सूखे पत्तों से भर गयी है। इसकी मुंडेर के चारों ओर झाड़ एवं बांस वृक्ष इसको नष्ट कर रहे हैं। यदि समय पर इसका संरक्षण नहीं किया गया तो चन्देल काल की हजार वर्ष प्राचीन यह धरोहर किवदंती का विषय रह जाएगी। क्षेत्र निर्देशक ब्र. जयकुमार निशांत के सदप्रयास से इसकी सफाई में कई पुरातात्त्विक सामग्री प्राप्त हुई हैं, आदिनाथ प्रतिमा, खंडित शीर्ष, अभिलेख, मृद माण्ड, धातु उपकरण जो संग्रहालय में संगृहीत है।

मन्दिर अवशेष

इस बावड़ी के निकट ही एक मन्दिर के अवशेष हैं। इसके अमलसार के अवशेष से विशाल मन्दिर की सम्भावना है। इसके चारों ओर तेंदू जिसके पत्तों से बीड़ी बनाई जाती है, के विशाल 80 फुट ऊँचे वृक्ष आश्चर्य का कारण है। इन वृक्षों की जड़ में विशाल शिलाखंड धँसे हैं जिनसे इसकी प्राचीनता सिद्ध होती है।[21]

धातु उपकरण

नवागढ़ का 5 कि.मी. का क्षेत्र पुरासम्पदा का अक्षय भण्डार है, यहाँ कूप खनन, नींव खनन, कृषि कार्य करते समय पाषण, मृद भाण्ड एवं धातु उपकरणों की प्राप्ति होती

रहती हैं। यह धातु उपकरण अधिकांश दैनिक-जीवन में प्रयुक्त होने वाले ही है यथा चुनौटी (चूना रखने की डिब्बी), चिमदी (तेल भरकर रात्रि में प्रकाश करने के लिए), बैल के गले में बांधने वाले उपकरण, पिचकारी, पोली (अनाज नापने के लिए), चम्मच, कांसिया, अलंकृत पानदान, डिब्बे, लोटे, झारी तथा घोड़े, हिरण, हाथी आदि।

विलक्षण रथ जिसका आकार 8 से.मी. चौड़ा तथा 16 से.मी. लम्बा है। इसमें जुते हुए वृषभ, पहिये, रथ का शिखर, सारथी सभी का सौन्दर्य मनमोहन एवं आकर्षक है।

काष्ट उपकरण –

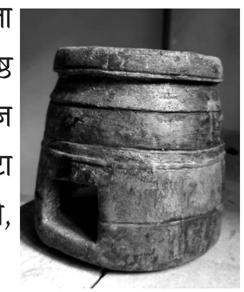

यहाँ पर प्राकृतिक उपकरणों के साथ-साथ मानव निर्मित काष्ठ उपकरण की प्राप्ति भी सहजता से होती है । नवागढ़ क्षेत्र काष्ठ उपकरणों में चौथिया, पैला (अनाज नापने का उपकरण), परांत (आटा) बैलों के गले में लटकने के लिए खटखटी, लकड़ी के बने बर्तन एवं चम्मच आदि प्राप्त होते हैं।

उत्कीर्ण साधु आकृति

साधना शैलाश्रय की बायीं दीवार पर साधु की आकृति को उकेरा गया है, इसकी ऊँचाई 50 से.मी. तथा चौड़ाई 25 से.मी. है । इसके दाहिने हाथ में कोई वस्तु है जो स्पष्ट नहीं दिखती। पाँव भी अस्पष्ट है।

चरण चिह्न

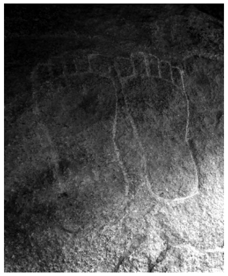

साधना गुफा के संकरे मुँह में प्रवेश करते ही एक चट्टान पर युगल चरण चिह्न आकृति उत्कीर्ण की गयी है। यह आकृति किस महासंत की है ज्ञात नहीं है, पर यह साधना गुफा में जैन संतों ने गुप्तकालीन तीसरी सदी से आवागमन का साक्ष्य है। यह चरण युगल 10 से.मी. चौड़े 19 से.मी. आकार वाले हैं।

नवागढ़ से प्राप्त पाषाण कालीन साक्ष्य

नवागढ़ ग्रेनाइट संरक्षित क्षेत्र है। यहाँ पहाड़ी के ऊपर पाषाण काल के प्राचीन अवशेष मिले हैं। यह पहाड़ी गाँव के दक्षिण पश्चिम भाग में अवस्थित है। जहाँ से कुछ बर्तनों के अवशेष तथा प्राचीन दुर्लभ सामान यथा मिट्टी तथा पत्थर के मनके, धातु उपकरण तथा पाषाणकालीन विभिन्न प्रकार के औजार प्राप्त हुए हैं।

सिद्धों की टोरिया 1.5 कि.मी. की दूरी पर मंदिर के पश्चिम भाग में अवस्थित ग्रेनाईट निर्मित पहाड़ी है। यहाँ पर यह भाग एक विशाल चट्टान द्वारा दो भागों में विभक्त है। जिस पर बना कप मार्क वृज़ाकार है। इस चट्टान का आकार लगभग 8.6 × 6 × 3.5 मीटर लज़्बाई, चौड़ाई, तथा ऊँचाई हैं। इस चट्टान के दानों की संरचना 1.2 से 4 कि.मी. तक है। चट्टान पर जो गड्ढे की आकृतिनुमा कप है उसका माप 60 × 69 × 26.5 मिलीमीटर है। प्राकृतिक अपक्षरण के कारण यह जानना संभव नहीं हो पाया है कि किस प्राकृतिक अथवा मानवनिर्मित तकनीक से इसका निर्माण किया गया था। प्राकृतिक कारकों के प्रत्यक्ष दबाव, ताप व वायुमण्डलीय प्रभाव के आक्षेप द्वारा इस मानवीय तकनीक के द्वारा अथवा धातु की छैनी का प्रयोग कर बनाया गया है । सुनिश्चित तौर पर कप मार्क के अलग-अलग आकार एवं प्रकृतिक को देखकर यह प्राकृतिक रूप से तैयार संरचना का भाग हो सकता है। कपमार्क, कपलेट्स व ज्यूपिल्स की सतह को देखकर लगता है कि इसमें गतिज ऊर्जा रही होगी जो परिवर्तित होकर कालांतर के कालखण्ड के विशेष में वर्तमानतः इस स्वरूप में दृष्टिगोचर होती है। वर्तमान में कुछ अवशेष ही प्राप्त होते हैं।

नवागढ़ में पूरे क्षेत्र का विधिवत् निरीक्षण करने पर मुंडी टौरिया, बगाज टौरिया, पनियानाला के आसपास निरीक्षण करने पर पूरा पाषाणकालीन कई औजार एवं उपकरण प्राप्त हुए हैं यथा-

हैन्डेज़्स की संज़्या - 43 (8 × 39 × 15 मिलीमीटर)

पेटीनेटेड चर्ट - 38.3 × 26.0 × 10 मिलीमीटर की तिकोनी आकार

ज़्लेज़्स ऑन चर्ट का अन्वेषण- 31.5 × 23.0 × 9.4 मि.मी. है ।

नवागढ़ में मुंडी टौरिया से 3 कि.मी. की दूरी पर मैनवार टोरिया तथा 7 कि.मी. की दूरी पर सापौन टोरिया का दौरा करने पर मिट्टी खोदने पर 7 फुट गहराई का स्थान वाली जगह पर निज़्न पाषाणकाल का (2 से 5 लाख वर्ष पूर्व) एवं मध्य पाषाण काल (35 से 2 लाख वर्ष) के कई पाषाणिक उपकरण व औजार प्राप्त हुए हैं जिसकी आकृति का आकार-प्रकार 91 × 73.8 ×85 मि.मी. तथा 70 × 7 × 29.6 मि.मी. है। सापौनटोरिया, ग्राम डूंडा से 4 कि.मी. की दूरी पर अवस्थित है। यहाँ ज़्वार्टज की 200 मीटर लज़्बी एवं 50 मीटर ऊँची पहाड़ी है। जहाँ से क्वार्टज के कई उपकरण प्राप्त हुए हैं जिनकी आकृति 87 × 81.7 × 45 मि.मी. है। 70.6 × 55 × 25 मि.मी. है एवं 130 × 5 × 61 × 39 मि.मी. है । मैनवार टोरिया से भी इसी प्रकार के कई उपकरण प्राप्त हुए हैं।

उपरोक्त सभी पुरापाषाण उपकरणों का अध्ययन प्रो. गिरिराज कुमार द्वारा दिए गए विश्लेषणों पर आधारित है । उनके अन्वेषण के अनुसार नवागढ़ से प्राप्त पाषाण कालीन साक्ष्य का संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत हैं-

एक लघु हैन्डेज़्स जो अगेट पत्थर का है। वह 43.8 × 39 × 15 मि.मी. का है। इसका आधार पैना है तथा दोनों तरफ से चिप्पड़ों को हटाया गया है।

मिश्रित चार्ट पुरानिधि के ऊपर चिप्पड़ है, मिश्रित किया हुआ सतही स्तर जिस पर बल्ब ऑफ पर्कसन अंकित है। इसका वाम भाग पुनः स्पर्शित होने से 38.3 × 26.0 × 100 मि.मी. है। इस पाषाण उपकरण का आकार त्रिभुजाकार है।

चिप्पड़ जो कि अगेट कोर का बना है वह 35 × 5 × 23.0 × 9.4 मि.मी. है।

एक प्राकृति क चिप्पड़ पर गहराई के दो किनारे पुनः स्पर्शित दोनों ओर से ऐसे पुरानिधि प्राप्त होते हैं।

अधिकांश उपकरण रक्तिम भूरे मिट्टी से मिले हैं। अधिकांशत चित्रित पीतवर्ण चर्ट मिलते हैं।

चर्टकोर पर बने हैन्डेज़स 91.0 × 73.8 × 46.85 मि.मी. है। अनगिनत सूक्ष्म चिथड़े इनकी क्षैतिज सतह निशान मुक्त करने हेतु पाँच चिप्पड़े हटाई गई।

चर्ट चिप्पड़ों पर बने हैन्डेज़्स 70.7 × 67 × 29.6 मि.मी. है। इसका कोर्टज़्स रफ तथा स्टाई किंग प्लेटफार्म 120^0 के कोण पर आधृत है। इसके क्षैतिज बाँयी क्षेत्र से बड़ा चिप्पड़ हटाया गया प्रतीत होता है। इसकी दायी ओर चित्रित सतह प्राप्त होती है। इसके किनारे पर दो पतले चिप्पड़ पाए गए हैं। इसका सिर भी दो चिप्पड़ों के हटाने से बना है। प्रत्येक भाग में रिड्ज है।

हैन्डेज़्स - 70.0 × 54.0 × 27.9 मि.मी.

चर्ट केबल - 100.0 × 96.0 × 61.8 मि.मी.

गोल केबल 52.4 × 52.0 × 22.5 मि.मी.

गल्सडनील त्रिभुजाकार पेबल - 60.5 × 56.0 × 20.6 मि.मी. किए गए शोध अध्ययन पर आधारित है।

उनका निष्कर्ष है कि नवागढ़ का इतिहास प्राचीनतम है। यहाँ 9 वीं से 10 वीं शताज़्दी तक के जैन मंदिर तथा अत्यंत प्राचीन पुरातज्त्र सामग्री प्राप्त हुई हैं। ग्राम से 500 मीटर दूर पश्चिम में शैलाश्रय प्राकृतिक रूप से निर्मित थे। प्राप्त शैलचित्रों से मसोलिथिक युग की सज़्यता का पता चलता है। सिद्धों की टौरिया की प्राचीनता कपमार्क द्वारा अति प्राचीन सिद्ध होती है।

नवागढ़ आज भी एक ऐसा क्षेत्र हैं जहाँ की नींव, कुँआ आदि खनन किया जाए तो पुरावशेष, पुरानिधियों का भण्डार हो सकता है। आवश्यकता है इस क्षेत्र के गंभीर चिंतन एवं अन्वेषण की। इस संदर्भों से नवागढ़ एक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, पुरातािज्वक, शैक्षणिक वाला महानगर सिद्ध होता है।

नवागढ़ में प्राप्त साक्ष्यों का समीक्षात्मक अध्ययन

इस क्षेत्र के अन्वेषण का अतिशयपूर्ण इतिहास है, सन् 1959 में पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' जी ने अपने साथियों के सहयोग से इमली के पेड़ को हटाकर

चबूतरे की मिट्टी को हटाया तो 35-40 खंडित जैन मूर्तियाँ प्राप्त हुईं। चबूतरे के नीचे खोदने पर कुछ सांगोपांग मूर्तियाँ भी प्राप्त हुईं। जमीन से 10 फुट नीचे विशाल छत वितान के नीचे भौंयरे में 4 फुट 9 इंच अवगाहना की 18वें तीर्थंकर अरनाथ की कायोत्सर्ग मूर्ति प्राप्त हुई, जिसके माध्यम से उन्होंने वीरान जंगल में नवागढ़ क्षेत्र के नाम से भौंयरे का जीर्णोद्धार करके मन्दिर बनवाया।[22]

सर्वप्रथम वरिष्ठ पुराविद, मूर्तिकला विशेषज्ञ पं. नीरज जैन सतना ने इस क्षेत्र को सज़्पूर्ण भारत वर्ष में अनेकान्त मासिक पत्रिका फरवरी सन् 1963 के माध्यम से प्रचारित किया।[23]

टीले के आसपास खनन करने पर 3-4 मन्दिरों के अवशेष प्राप्त हुए परन्तु प्रशासनिक अवरोध एवं अर्थाभाव में उनका उत्खनन नहीं किया। प्राप्त खंडित मूर्तियों के अभिलेखों से इसकी प्राचीनता 10वीं सदी चन्देल शासक धंगदेव का काल तथा मूर्ति शिल्प के अनुसार प्रतिहार कालीन 7वीं सदी सिद्ध होती है।

भौंयरे के आसपास ग्रामीणों ने अपने घर बनाना शुरू किए, जिसके नींव खनन में कई खंडित मूर्तियाँ प्राप्त हुईं, खेतों में कार्य करते समय कुछ खंडित शिल्प प्राप्त हुए। जिन्हें संग्रहालय में सुरक्षित किया गया है।

माता मन्दिर में प्राचीन समय से ग्राम वासियों द्वारा एकत्रित खंडित शिल्पों का भंडार है, जिसमें कई ऐतिहासिक महज़्वपूर्ण शिल्प हैं जिनका रहस्योद्घाटन जैन मूर्तिकला विशेषज्ञ डॉ. प्रो. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी बनारस द्वारा किया गया।[24]

भारतीय इतिहास में विशेष आयाम स्थापित करने वाले विलक्षण साक्ष्य नवागढ़ से प्राप्त हुए हैं जिनका समय पर देश के मूर्धन्य इतिहासविदों/पुरातज़्ववेज़ाओं एवं इतिहासकारों ने अपने अनुभव से उद्घाटन किया है जो इस प्रकार है–

नवागढ़ में प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ छोटी-छोटी पहाड़ियाँ इसके सौन्दर्य को विशेष आयाम देती हैं जिसमें बगाज टोरिया, मुंडी टोरिया, फायटोन (फाइव स्टोन), जैन पहाड़ी, सापौन टोरिया एवं मैनवार टोरिया मुज़्य हैं।

इन्हीं पहाड़ियों में भारतीय इतिहास के साक्ष्य लाखों वर्षों से सुरक्षित हैं। डॉ. प्रो. गिरिराज कुमार, सेक्रेटरी जनरल, रॉक आर्ट सोसाइटी आफ इंडिया, आगरा

ने वहाँ 28 फरवरी 2017, 25 से 27 मार्च 2018 एवं 3 से 6 जुलाई 2018 में लगातार अन्वेषण करते हुए मुंडी टोरिया, सापोन टोरिया एवं मैनवार टोरिया में अपर पैलियोलिथिक, मिडिल पैलियोलिथिक, एवं लोअर पैलियोलिथिक काल के औजार एवं हथौड़ियाँ प्राप्त हुई हैं, जिनसे यह क्षेत्र 4 से 5 लाख पूर्व से मानवीय सज़्यता का साक्ष्य है।[25]

डॉ. बी.वी. खरबड़े निर्देशक राष्ट्रीय सांस्कृतिक सज़्पदा संरक्षण अनुसन्धान शाला लखनऊ के निर्देशन में श्री पी.के पांडे एवं एम.पी. मौर्य के नेतृत्व में 17 अनुसन्धान कर्ता एवं विशेषज्ञों द्वारा 10 दिसज़्बर से 25 दिसज़्बर 2017 तक प्राचीन धरोहर के संरक्षण का कार्य किया गया। जिसमें 8वीं शताज़्दी से 13वीं शताज़्दी की जैन प्रतिमाओं एवं सांस्कृतिक ऐतिहासिक महज़्व की कलाकृतियाँ मुज़्य हैं। डॉ. खरबड़े के अनुसार नवागढ़ क्षेत्र में धार्मिक सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, पुरासज़्पदा के साथ प्राचीन शैलाश्रय, रॉक पर्यटन की दृष्टि से अत्यन्त महज़्वपूर्ण है।[26]

डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी ऐमिरेट्स प्रोफेसर काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी एवं डॉ. एस.एस. सिन्हा वाराणसी ने 25 मार्च 2018 के अन्वेषणों में नवागढ़ क्षेत्र के 5 किलोमीटर विस्तार से गहन अन्वेषण करते हुए भारतीय इतिहास के गौरव को बढ़ाने वाले महज़्वपूर्ण साक्ष्यों का उद्घाटन किया।[27]

1.भारतीय परज़्परा के सज़्पोषक साक्ष्यों में यहाँ जैन मन्दिरों के समूह के साथ चन्देलकालीन शैव मन्दिर, विष्णु मन्दिर एवं गणेश मन्दिर निर्मित रहे होंगे। इस काल में जैनों का विशेष उत्थान हुआ।[28]

2.नवागढ़ के देवी मन्दिर में एक ही प्रतिमा में ब्रह्मा, विष्णु, महेश तीनों की विलक्षणता पुरा-ताज़्विक दृष्टि से अत्यन्त महज़्वपूर्ण है।

3.जैन पहाड़ी पर स्थित साधना शैलाश्रय में उत्कीर्ण कायोत्सर्ग मुद्रा एवं चरणचिह्न गुप्तकालीन तीसरी एवं चौथी सदी के भारतीय जैन इतिहास के साक्ष्य हैं। इससे सिद्ध होता है नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर में जैन साधुओं का आवागमन तीसरी सदी के पहले से होने लगा था।

4.कच्छप शिला की चिकनी शैलशैय्या से यहाँ हजारों वर्ष से साधुओं की साधना का संकेत मिलता है।

5.आचार्य शैलाश्रय की त्रिस्तरीय शिला विलक्षण है। जिसमें ऊपर आचार्य, मध्य में उपाध्याय एवं नीचे साधु परमेष्ठी के आसन का संकेत मिलता है। जहाँ सन् 1956 एवं 1966 में क्षु. चिदानन्द महाराज ने 2 चातुर्मासों में इसी आचार्य शैलाश्रय में धर्म नीति एवं अहिंसक जीवन शैली का ज्ञान ग्रामवासियों को कराया है।[29]

6.बगाज टोरिया पर स्थित चंदेल शासक मदनवर्मन की के अत्यंत सुन्दर आभूषणों एवं वस्त्रों से सुसज्जित कृति के शीर्ष भाग में पद्मासन अर्हन्त प्रतिमा से सिद्ध होता है नवागढ़ प्रारज़्भिक गुप्तकालीन शासकों द्वारा स्थापित महानगर था। जिसका विकास प्रतिहार काल में होकर चन्देलकाल में चरम उत्कर्ष पर प्रज़्यात रहा होगा। यहाँ के श्रावक अत्यन्त समृद्धशाली एवं धार्मिकता वाले रहे होंगे, ग्रामीण वृद्धजनों से ज्ञात हुआ है यहाँ चौबीस जिनालय के अवशेष प्राप्त हुए थे। जिसका संरक्षण अर्थाभाव के कारण नहीं हो सका।

7.नवागढ़ में भारतीय इतिहास को समृद्ध करने वाली विलक्षण कृतियाँ संगृहीत है। मूर्ति शिल्प के अनुसार यहाँ गुप्तकाल, प्रतिहार काल, चन्देल काल के साथ अर्वाचीन जैन प्रतिमाएँ भी उपलज़्ध हैं। जो यहाँ विगत हजारों वर्षों से भारतीय विरासत की निरन्तरता को दर्शाती हैं।

8.नवागढ़ क्षेत्र के 5 किलोमीटर विस्तार में आज भी पुराताज़्विक धरोहर प्राप्त होती है। जिसमें जैन उपाध्याय परमेष्ठी की सांगोपांग बिज़्ब के साथ 6 खंडित उपाध्याय बिज़्ब अवशेष एवं मानस्तज़्भ में उत्कीर्ण बिज़्ब के साथ अकलंक-निकलंक कुमारों के बिज़्ब से यहाँ प्राचीन गुरुकुल परज़्परा के साक्ष्य प्राप्त होते हैं, जो कलातीर्थ देवगढ़ के समकालीन हैं।[30]

9.संग्रहालय में संगृहीत तोरण अत्यन्त विलक्षण है। जिसमें मगर मुख के साथ कई कई कायोत्सर्ग एवं पद्मासन तीर्थंकर बिज़्ब अलंकृत गज एवं गजारूढ़ श्रावक-श्राविकाएँ इसकी सुन्दरता को वृद्धिगत करते हैं।

इसमें जोड़ने वाला त्रिछत्र जो तीर्थंकर भगवान् के तीनों लोकों में शासन का प्रतीक होता है। अत्यन्त विशिष्ट है। अधोछत्र में कीर्तिमुख का अलंकरण मध्य एवं ऊपरी छत्र में विशिष्ट अलंकरण तथा इसके ऊपर अमलसार एवं कलश,

मन्दिर की दिव्यता को दर्शाता है। यह तोरण लगभग 18 से 20 फुट उत्तुंग कायोत्सर्ग प्रतिमा होने का संकेत है।

डॉ. ए.पी. गौड संग्रहालय निर्देशक लखनऊ के सन् 2013, 2016 एवं 2017 के दौरान यहाँ की पुरातात्त्विक पुरा सम्पदा को राजकीय संग्रहालय झाँसी में पंजीकृत करके जहाँ भारतीय ऐतिहासिक, सांस्कृतिक धरोहर का संरक्षण किया है वहीं पुरा सम्पदा के अन्वेषण में भी सहयोग किया है, जिसके फलस्वरूप पहाड़ी के उपाध्याय शैलाश्रय से उपाध्याय बिम्ब के साथ कई अलंकृत शीर्षों का भी अन्वेषण किया गया। आपके प्रोत्साहन से ब्र. जयकुमार निशांत जी ने ग्राम प्रधान रामनारायण यादव के साथ जंगलों में सतत् भ्रमण करते हुए 6 अक्टूबर 2014 कच्छप शिला में चित्रित रॉक पेंटिंग का अन्वेषण किया जिनमें भारतीय इतिहास संस्कृति एवं जैन साधना पद्धति दृष्टव्य होती है।[31]

डॉ. एस. के. दुबे संग्रहालय अधिकारी, राजकीय संग्रहालय झाँसी एवं श्री नरेश पाठक ग्वालियर के 6 नवम्बर 2016 के अन्वेषण में जैन पहाड़ी की तलहटी में लघु पाषाण औजार एवं उपकरण प्राप्त हुए जो 12 से 15 हजार वर्षों के प्राचीन भारतीय इतिहास के साक्ष्य हैं।

डॉ. भागचन्द भागेन्दु दमोह, डॉ. स्नेहरानी जैन सागर, एवं इंजी. एस.एम. जैन वरिष्ठ पुराविद ने मार्च 2016 में यहाँ की पुरासम्पदा एवं शैलाश्रयों का गहन अन्वेषण करते हुए इस क्षेत्र को प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ से अन्तिम तीर्थंकर महावीर की शासन परम्परा का प्राचीनतम क्षेत्र घोषित किया है।

डॉ. के.पी. त्रिपाठी टीकमगढ़ इतिहासविद् ने नवागढ़ क्षेत्र में संगृहीतपुरा सम्पदा का गहन अन्वेषण करके नवागढ़ के माध्यम से चन्देलकालीन संस्कृति के साथ प्राकृतिक परिवेश का दिग्दर्शन किया। तत्कालीन परिस्थिति में ग्रामवासियों का रहन, सहन, कृषि, आवागमन आदि से भारतीय इतिहास को समृद्ध किया।[32]

डॉ. कस्तूरचन्द्र 'सुमन' जयपुर वरिष्ठ प्रशस्ति वाचक एवं इतिहासविद् ने नवागढ़ के शिलाशासन (अभिलेखों) का वाचन करके प्रतिहार काल से वर्तमान तक सतत् मन्दिर निर्माण एवं जिनबिम्ब प्रतिष्ठा होना सिद्ध किया है।[33]

इस प्रकार नवागढ़ में संवत् 1123 से आज तक 7 पंचकल्याणकों के द्वारा मन्दिरों का निर्माण किया गया है। जिनके अभिलेख मूर्ति के पादपीठ पर अंकित हैं।

आपके अनुसार नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर इसका विशेष प्रभावशाली क्षेत्र रहा होगा, इसीलिए उसका नामोल्लेख सिद्धक्षेत्र अहार जी के मूलनायक शान्तिनाथ भगवान के पादपीठ[34] में तथा अतिशय क्षेत्र पपौरा जी के भौंयरा मन्दिर की मूर्ति के पादपीठ के अभिलेख में किया गया है।

डॉ. स्नेहरानी जैन सर हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर ने नवागढ़ की जैन पहाड़ी पर स्थित कच्छप शिला में चित्रित शैल चित्रों का गहनता से निरीक्षण करके उसमें चित्रित कुछ विशेष संकेतों एवं आकृतियों को मोहनजोदड़ों एवं हड़प्पा सभ्यता के समकालीन सिद्ध किया है।[35]

डॉ. नारायण व्यास डी.लिट् शैलचित्र भोपाल ने इन शैल चित्रों को 6 से 8 हजार वर्ष प्राचीन माना है।

श्री हरिविष्णु अवस्थी वरिष्ठ इतिहासविद् टीकमगढ़ ने नवागढ़ के भग्न मन्दिर, चन्देलबावड़ी, चन्देलकूप को ऊमरी सूर्य मन्दिर, बड़ागाँव के शिवमठ के समकालीन सिद्ध किया है।[36]

नवागढ़ की विशेषता है यहाँ मूर्ति एवं मन्दिर निर्माताओं की प्रतिबिम्बित प्रतिमाएँ भी अलग-अलग प्राप्त हुई हैं। जबकि आहार जी एवं देवगढ़ जैन तीर्थ में मन्दिर निर्माताओं की मूर्तियाँ प्रतिमा के साथ बनाई गयी हैं।[37] खजुराहो में चन्देलशासक धंगदेव के शासनकाल में मन्दिर निर्माता पाहल की मूर्ति से सिद्ध है पाहल ने खजुराहो के साथ नवागढ़ में भी जिनालय बनवाया।[38] महीचन्द के अभिलेख एवं संवत् 1195 की मूर्ति से सिद्ध होता है कि धंगदेव के वंशज मदनवर्मन के शासनकाल में नवागढ़ में भी मन्दिर निर्माण के साथ बावड़ी एवं कूप बनवाए हैं।[39] आपके शासनकाल में जैनों का विशेष उत्थान हुआ।[40]

आज वर्तमान में नवागढ़ क्षेत्र भारतीय जैन इतिहास का तीर्थंकर अरनाथ का एकमात्र अतिशय क्षेत्र है, जहाँ भारतीय इतिहास, संस्कृति, पुरातत्त्व के साथ, कपमार्क, शैलाश्रय, शैलचित्र, गुप्तकालीन रॉककट इमेज, पाषाण एवं मिट्टी के मनके, अभिलेख सहित जैन तीर्थंकर बिम्ब, प्राकृतिक पर्यटनस्थल है। जहाँ नवागढ़ समिति डॉ. एस.के. दुबे एवं ए.के. रावत झाँसी के निर्देशन में 'बुन्देली विरासत' के नाम से बुन्देली परम्परा, लोककला, गीत, शिल्प, आभूषण, संगीत

उपकरण, प्राचीनपुरा सज़्पदा, कृषि, विलुप्त होते अन्न एवं औषधीय वृक्षों के साथ बुन्देलखंड के इतिहास, राजनेता, स्वतन्त्रता सेनानी, साहित्य का शोधकेन्द्र स्थापित करने जा रही है। जिससे शोधार्थी यहाँ के विलक्षण एवं विशेष आयामों का रहस्योद्घाटन करके भारतीय इतिहास को और समृद्धशाली बनाने का गौरव प्राप्त कर सके।[41]

सन्दर्भ—

1. भारतीय इतिहास में प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़ का योगदान, जयकुमार निशांत
2. स्टोन एज कल्चरल कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ गिरिराज कुमार
3. स्टोन एज कल्चरल कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ गिरिराज कुमार
4. स्टोन एज कल्चरल कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ गिरिराज कुमार
5. स्टोन एज कल्चरल कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ गिरिराज कुमार
6. नवागढ़ (नन्दपुर) पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र–प्रो. गिरिराज कुमार, आगरा,
7. सन्तों की पुरातन स्थली-नवागढ़, डॉ. भागचन्द भागेन्दु, राजस्थान भारत जैन सभा स्मारिका 2015
8. प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़–इतिहास एवं पूजा-विधान। संकलन–ब्र. जयकुमार 'निशांत' टीकमगढ़, पृ. 16
9. संतों की साधना स्थली नवागढ़ –डॉ. ज़ागचन्द भागेन्दु
10. श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़ नन्दपुर–डॉ. काशी प्रसाद त्रिपाठी
11. संतों की साधना स्थली नवागढ़, प्रो. भागचन्द जैन 'भागेन्दु'
12. जैन कलातीर्थ देवगढ़, प्रो. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, डॉ. शान्ति स्वरूप सिन्हा
13. नवागढ़ नन्दपुर इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी
14. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक, शैलचित्र, डॉ. स्नेहरानी जैन, प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार, अप्रैल 2015
15. वही
16. स्टोन एज कल्चरल कन्ट्यूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ. गिरिराज कुमार
17. वही
18. वही
19. नवागढ़ (नन्दपुर) पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र–प्रो. गिरिराज कुमार
20. वही
21. प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र–नवागढ़, इतिहास एवं पूजा-विधान, संकलन–ब्र. जयकुमार 'निशांत' वही

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातत्त्व

22. नवागढ़ नन्दपुर इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, पृ. 31
23. नवागढ़ एक महज़्वपूर्ण मध्ययुगीन जैन तीर्थ, पं. नीरज जैन सतना, अनेकांत, वर्ष 15 फरवरी 1963, पृ. 277-78
24. विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़, डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी
25. स्टोन एज कल्चरण कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ. गिरिराज कुमार
26. स्टोन एज कल्चरल कन्टयूनिटी इन नवागढ़ (नन्दपुर) रीजन, डॉ गिरिराज कुमार
27. विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़, डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी
28. चन्देल कालीन बुन्देलखंड का इतिहास, डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृ. 89
29. सन्तों की पुरातन साधना स्थली-नवागढ़, डॉ. भागचन्द भागेन्दु, राजस्थान महासभा स्मारिका 2015, पृ. 40
30. जैनकला तीर्थ नवागढ़, प्रो. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, डॉ. शान्ति स्वरूप सिन्हा, पृ. 118
31. 1. नवागढ़ नन्दपुर इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, पृ. 52

    2. सन्तों की पुरातन साधना स्थली नवागढ़, डॉ. भागचन्द भागेन्दु, राजस्थान महासभा स्मारिका 2015, पृ. 40

    3. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र, डॉ. स्नेहरानी जैन, प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार, अप्रैल 2015
32. श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नन्दपुर, डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, संस्कार सागर जून 2015
33. 1. बुन्देलखंड का नवोदित तीर्थ नवागढ़, डॉ. कस्तूर चन्द्र सुमन, गोलापूर्व, मई, 2013

    2. श्री दिगज़्बरजैन अतिशय क्षेत्र, नावई नवागढ़ नन्दपुर, डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, संस्कार सागर जून 2015
34. अहार क्षेत्र के अभिलेख, डॉ. कस्तूर चन्द सुमन, गोलापूर्व महासभा, मई 2013, पृ. 04
35. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र, डॉ. स्नेहरानी जेन, प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार अप्रैल 2015
36. प्राचीन जैन तीर्थ नन्दपुर शिलालेखों के दर्पण में, हरिविष्णु अवस्थी, संस्कार सागर 2016
37. देवगढ़ की जैन कला एवं सांस्कृतिक अध्ययन, डॉ. भागचन्द भागेन्दु, पृ. 273
38. 1. मध्यप्रदेश एवं छज़ीसगढ़ के पुरातज़्व का सन्दर्भ ग्रन्थ, डॉ. राजकुमार शर्मा, पृ. 74

    2. खजुराहो का जैन पुरातत्त्व, डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, पृ. 11
39. इपीग्राफिका इंडिका भाग प्रथम, पृ. 93 एवं 153
40. चन्देलकालीन महोबा एवं जनपद हमीरपुर महोबा के पुरावशेष, वासुदेव चौरसिया, पृ. 31
41. भारतीय इतिहास में प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़ का योगदान–ब्र. जयकुमार निशांत

उपसंहार

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के अध्याय में नावई ग्राम (प्राचीन नाम नन्दपुर) से प्राप्त प्रतिमाओं के अवशेषों, शिलालेखों के अध्ययन के साथ-साथ लिपि लेख का अध्ययन किया गया है। साथ ही साथ नन्दपुर की भौगोलिक, प्राचीन पृष्ठभूमि का अध्ययन भी इसी प्रबन्ध शोध के माध्यम से किया गया है। भारतीय पुराताज़्विक सर्वेक्षण के सन्दर्भ में कहा जाए तो इस विवेच्य क्षेत्र का आज तक सर्वेक्षण नहीं हुआ है। अभी तक इस महज़्वपूर्ण क्षेत्र के प्रागैतिहासिक शैलचित्र युज़्त शैलाश्रयों का सर्वेक्षण का कार्य अधूरा पड़ा हुआ है। थोड़ा बहुत कार्य ललितपुर जिले के अन्य स्थान में अध्ययन के साथ पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' प्रतिष्ठाचार्य एवं उनके अनुवर्ती पुत्र प्रतिष्ठाचार्य श्री जयकुमार जी 'निशांत' के साथ होता रहा है। वर्ष 2015 में गठित स्थानीय स्तर की कमेटी एवं स्थानीय कर्मठ जैन समाज के द्वारा इस क्षेत्र को विकसित करने हेतु समेकित विकास का निर्धारण किया गया। जिसके परिणामस्वरूप यहाँ पर राष्ट्रीय स्तर पर एवं सामाजिक स्तर पर उपेक्षित पड़े हुए ग्राम नावई प्रागैतिहासिक शैलाश्रय की ओर सभी लोगों का ध्यान आकृष्ट किया गया। साथ ही साथ शिलालेखों एवं मूर्ति लेखों के आधार पर प्राचीनता को प्रचारित-प्रसारित किया गया। विशेषज्ञ विद्वानों द्वारा समय-समय पर भ्रमण, अन्वेषण कार्य प्रारज़्भ किया गया। मेरे द्वारा इस क्षेत्र के निर्देशक श्रीमान् प्रतिष्ठाचार्य जयकुमार जी निशांत के निर्देशन में नवागढ़ की लिपि के अन्वेषण को दिशा प्रदान की गयी है, वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय के निर्देशक श्रीमान् डॉ. प्रकाश राय जी द्वारा समेकित प्रबन्ध शोध पी-एचडी. कार्य हेतु मुझे विश्वविद्यालय स्तर से क्षेत्र का सज़्पूर्ण अध्ययन कार्य कर लिपि रूपान्तरण का कार्य करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जिसमें विवेच्य क्षेत्र से प्राप्त मूर्तिकला के अवशेषों शिलाखंडों एवं उत्कीर्ण लेखों का कार्य का अध्ययन एवं संस्कृत अभिलेख लिपिलेख एवं उनका अनुवाद प्रस्तुत करने का दुर्लभतम कार्य सौंपा गया है। ललितपुर जिले का नावई ग्राम तहसील महरौनी जिला ललितपुर उज़्तरप्रदेश जो कि जिला मुज़्यालय से पूर्व दिशा में 78.80^0 पूर्वी देशान्तर तथा 24.34^0 उज़्तरी अक्षांश में स्थित है। यह ग्राम ललितपुर से लगभग 65 किलोमीटर दूर स्थित है। नवागढ़ पहुँचने के लिए

दो मार्ग हैं। पहला मार्ग ललितपुर से महरौनी तह. मुज़्यालय से सोजना होते हुए ग्राम नावई (नवागढ़) प्राचीन नाम नन्दपुर को जाता है। तथा दूसरा मुज़्य मार्ग जिला टीकमगढ़ मुज़्यालय से टीकमगढ़ सागर मुज़्य मार्ग से ग्राम अजनौर डूंडा होते हुए 25 कि.मी.ग्राम नावई जाता है। इस ग्राम के चारों ओर अनेक पुराताज़्विक महज़्व के स्थल देखने को मिलते हैं। नवागढ़ समीपवर्ती स्थलों में यत्र-तत्र बिखरी हुई पुराताज़्विक सज़्पदा का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि यह ग्राम प्राचीन काल में वैभवपूर्ण नन्दपुर नगर के रूप में प्रतिष्ठित रहा होगा। इस क्षेत्र का सबसे महज़्वपूर्ण कलाकेन्द्र अहार (मदनेश सागर) पपौरा जी, कुंडेश्वर (शिवमन्दिर), ऊमरी (उज़्मेरगढ़), मड़खेरा (सूर्यमन्दिर), मदनपुर, बाणपुर, बड़ागाँव (प्राचीन नाम बड़गाँव) है। यदि हम दोनों स्थानों की कला का तुलनात्मक अध्ययन करें तो ज्ञात होता है कि नन्दपुर में जैनियों के साथ शैव, ब्राह्मण, गाणपत्य और शाज़्त मतों से सज़्बन्धित देव प्रतिमाओं के शिल्पावशेषों का प्रचुर संग्रह है।

ललितपुर जिले के अन्तर्गत आने वाले क्षेत्र का इतिहास अत्यन्त गौरवमयी है। प्राचीन साहित्यिक सन्दर्भों में विवेच्य क्षेत्र का सीरोनखुर्द से प्राप्त प्राचीन अभिलेख और पुरा सज़्पदा से ज्ञात होता है कि यहाँ व्यापारियों ने अनगिनत देव प्रतिमाओं का निर्माण कराया है।

दुधई-चाँदपुर के स्मारकों से हजारों प्रतिमाओं को सुरक्षित निकाला गया है। खजुराहो की स्थापत्य कला एवं मूर्तिकला विश्व पटल पर अपना अद्वितीय छाप छोड़ चुका है। विश्व में खजुराहो की कला, संस्कृति का अपना विशेष कीर्तिमान स्थापित कर चुका है।

इस बात की पुष्टि इस मन्दिर के ऊपर उत्कीर्ण लेख से होती है कि जो कि कलचुरी कालीन लिपि में है। नागभट्ट द्वितीय एवं ॐ से प्रारज़्भ इस लेख में सौर उपासना के सज़्बन्ध में जानकारी दी गयी है। यहाँ सिद्धों की गुफा, बगाज नामक स्थान जो कि ग्राम नावई में है। एक शिला पर एक गुप्तकालीन अभिलेख उत्कीर्ण है। इसके पश्चात् इस जनपद पर गौणों, गुर्जर, प्रतिहार्य, चन्देल आदि का अधिपत्य रहा। नावई ग्राम के अन्वेषण के दौरान पता लगा कि यह ग्राम प्राचीनकाल से नन्दपुर के नाम से प्रसिद्ध है। ये प्रशस्तियाँ संवत् 950 से 1050 ई. तक की

है। इस अवधि ग्राम में जैन, ब्राह्मण धर्म के विभिन्न देवी देवताओं के पक्ष में किये गये व्यक्तिगत दोनों का उल्लेख है। दूसरे भाग में जैन मन्दिर की स्थापना का वर्णन है। इसमें भोजदेव के पुत्र महेन्द्रपालदेव एवं क्षितिपाल के पुत्र देवपाल का नाम आया है। जो निश्चित रूप से कान्यकुब्ज के प्रतिहार्य वंशीय शासक थे। प्राचीन काल में नवागढ़ बहुत ही बड़ा नगर तथा धार्मिक एवं उत्तर भारत का प्रमुख अध्ययन केन्द्र था। इसके अतिरिक्त यहाँ उपलब्ध पिच्छी युक्त उपाध्याय परमेष्ठी की ज्ञानमुद्रा युक्त प्रतिमा तत्कालीन इतिहास पर प्रकाश डालने हेतु प्रर्याप्त प्रमाण देती है। नवागढ़ में हमें शैव, वैष्णव, शक्ति, शाक्त, सौर, गाणपत्य, जैन इत्यादि सम्प्रदाय की प्रतिमाएँ प्राप्त हुई हैं। जो अपने आप में एक बड़ी उपलब्धि है, ये मूर्ति कला के दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। यह बुन्देलखंड की धार्मिक परम्पराओं में जैन एवं ब्राह्मण परम्परा का प्रमुख अध्ययन केन्द्र रहा है। मूल रूप से जैन प्रतिमाओं का रूपांकन भारत की धार्मिक निरपेक्षता की नीति का परिणाम है। प्रतीहार एवं चन्देल शासन में तो विवेच्य क्षेत्र पर सभी धर्मों का व्यापक प्रचार-प्रसार हुआ। परिणामतः जैन, शैव उपासना समाज की महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी।

नवागढ़ से प्राप्त अभिलेखीय साक्ष्यों 24 तीर्थंकर परम्परा, चक्रवर्ती अरनाथ परम्परा, गुरुकुल परम्परा की ओर ध्यान आकर्षित करती है। यहाँ की स्थापत्य कला जैन दर्शन के कर्मसिद्धान्त को दर्शाती है। प्राचीन काल में बुन्देलखंड का लोक जीवन जैनधर्म से भी प्रभावित हुआ। मध्यकाल में उसका अस्तित्व और बढ़ गया है।

इस स्थान को देवालय स्थापित करने हेतु इसलिए चुना गया होगा क्योंकि इसके पहले भी यह देव स्थान है। इसी प्रकार सदियों तक वहाँ निर्माण कार्य चलता रहा। नवागढ़ के स्तम्भ लेख में जिन नामों का उल्लेख मिलता है। वह सभी नाम 11-12 वीं शताब्दी के हैं। णमोकार शिलालेख संस्कृत देवनागरी लिपि में अंकित है। स्तम्भलेख में महिचन्द आदि के नाम चन्देलकालीन है। शिलालेख में भी लषम, वील्हा, आदि नाम का प्रभाव संस्कृत देवनागरी लिपि में है, जिसका प्रवाह तत्कालीन समय में देवगढ़, सिरोनखुर्द, मदनपुर, नवागढ, खजुराहो, धुबेला, महोबा एवं ग्वालियर (गोपाद्री) नामक स्थानों पर देखने को मिलता है। जिससे ज्ञात होता है कि यह सभी श्रेष्ठीवर्ग विद्वानों के साथ एक स्थान

से दूसरे स्थान पर व्यापार के लिए जाया करते थे एवं वर्षाकाल-चातुर्मास काल में रुककर मतानुसार मूर्तियों मन्दिर, मठों में अध्ययन कर धार्मिक क्रियाकलापों में निमग्न रहते हुए जीवन व्यतीत किया करते थे। नवागढ़ शिलालेखों में वर्णित लषम शब्द वही है जो शान्तिनाथ प्रतिमा में चम्पोमढ़ में मदनपुर में दृष्टव्य देखने को मिलता है एवं महोबा जैन मूर्तियों की प्रशस्ति में देखने को मिलता है इस प्रकार प्रतिहार्य शासकों के शासनकाल में दोनों स्थानों को महत्त्व प्राप्त था। यह दोनों स्थान सौर, शिव एवं जैन उपासना के महत्त्वपूर्ण केन्द्र थे। इन अवशेषों के आधार पर कहा जा सकता है कि नवागढ़ में भी मतावलम्बियों के बीच सौहार्द भावना के साथ-साथ धार्मिक सहिष्णुता का अनुपम समन्वय था। नवागढ़ लिपि में धार्मिक प्रवाहमय संस्कृति का प्रयोग है। 'नित्य प्रणमन्ति'। लेख रोज पूजा अर्चना वाले स्थानों पर ही देखने को मिलता है। अतः मेरा मत है कि नवागढ़ का अपना एक अध्ययन केन्द्र रहा होगा। जहाँ नित्य पूजा अर्चना एवं अध्यापन कार्य गुरु-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत दिए जाते रहे होंगे। अलंकरण युक्त खंडित प्रतिमाओं पर किसी प्रकार का लेख उत्कीर्ण नहीं है। जिन प्रतिमाओं पर लिपि लेख उत्कीर्ण हैं सभी विक्रमाब्द संवत्, शक संवत् एवं वीर निर्माण संवत् के कालावधि की है। ऐसा प्रतीत होता है कि ये प्रतिमाएँ 13वीं शताब्दी के बाद से वीराने में पड़ी-पड़ी कालकवलित हो रही थीं। जिन्हें स्व. पं. गुलाबचन्द पुष्प और उनकी सजग जैन समाज ने नया रूप देकर पुनः जीवन्त तीर्थ बनाया है। आज भी यहाँ केवल एक या दो घर जैन परिवारों के हैं बाकी सभी परिवार गुर्जर समाज के हैं। आसपास के क्षेत्रों में गुर्जर समाज कम है। सभी सांस्कृतिक गतिविधियों से परिपूर्ण समाज ग्रामीण जीवन जीवन्त है। सभी सांस्कृतिक गतिविधियों से परिपूर्ण समाज आज भी सभी त्यौहार शान्ति, सुख, समृद्धि के साथ मिलजुल कर मनाते हैं। सभी ग्रामीण जन संरक्षण एवं संवर्धन के कार्य को करने में अपना अमूल्य समय देने को तत्पर हैं। अतः मेरा निष्कर्ष है कि यहाँ उपलब्ध प्रतिमाओं को एक अध्ययन केन्द्र में परिणत कर एक लिपि व संवर्धन केन्द्र की स्थापना की जाना उचित ही होगा। क्योंकि इस भौतिकवादी जमाने में, कम्प्यूटराइजेशन के कारण मूल लिपि लेख नष्ट होते जा रहे हैं। स्तम्भलेखों का क्षरण भी होने के कारण आगामी विद्वानों को उनके मूल स्वरूप को केवल आभाषी माध्यम में ही देकर

सन्तुष्ट होना पड़ेगा। उनके भीतर शिल्पों को जानने, स्पर्श करने संस्कृति के प्रति उनके लगाव व उसी में समाहित विषयवस्तु को जानने का लगाव भी केवल कल्पना की वस्तु बनकर रह जाएगा। लिपि संवर्धन एवं उसका रूपान्तरण या लिप्यान्तरण आज के भौतिकवादी समाज को सरल भाषा में समझने का प्रयास क्षणिक न हो, वह निरन्तर बना रहे। इसके लिए जरूरी है कि लिपि संग्रहालय की ओर हम सभी को बढ़ना चाहिए एवं साक्ष्यों के समीक्षात्मक अध्ययन के बाद संवर्धन के लिए हर स्तर पर प्रयास करना चाहिए। एक-दो वर्ष की अल्पावधि में संस्कृति को समझना एवं उसका लिप्यान्तरण करना और उसका अनुवाद करना कठिनतम कार्यों की श्रेणी में आता है। नवागढ़ में मिले एक हजार वर्ष से अधिक की कालावधि के लेख प्रमाण के संवर्धन का कार्य दुर्लभतम है। यहाँ बीहड़ जंगलों से अटे ग्रामीण क्षेत्रों में कार्य करने की अपनी चुनौतियाँ भी हैं। अतः निष्कर्ष सहित लेख है कि नवागढ़ लिपि संस्कृति नागरी एवं कलचुरीकालीन लिपि है।

नवागढ़ में शैलचित्रों की खोज 6 अज़्टूबर 2014 में ब्र. जयकुमार निशांत द्वारा की गयी है। डॉ. स्नेहरानी जैन ने जैन पहाड़ी की कच्छप गुफा में गहन अन्वेषण एवं अध्ययन किया। डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी एवं डॉ. एस.एस. सिन्हा वाराणसी ने बगाज टोरिया पर स्थित विशाल चट्टान पर उत्कीर्ण अभिलेख का भी विस्तृत विश्लेषण किया है।

बुन्देलखंड एक प्राकृतिक सौन्दर्य एवं सांस्कृतिक प्रदेश है। जिसका प्राचीनतम स्वरूप विंध्य है एवं सतपुड़ा पर्वत मालाओं के साथ-साथ क्षेत्रीय लघु पहाड़ियों के शैलाश्रयों में देखने को मिलता है। इसमें पुरापाषाण कालीन सज़्यता, शैलचित्र, साधनास्थल, अध्ययन स्थलों की प्राचीनता सिद्ध होती है।

विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़

डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी

बुन्देलखण्ड में जैन समाज के अनेक तीर्थ हैं। इनमें इतिहास एवं पुरातज़्व की अमूल्य निधियाँ संरक्षित हैं। नवागढ़ (जिला-ललितपुर) पुराताज़्विक दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध क्षेत्र है, जिसका संक्षिप्त विवरण यहाँ प्रस्तुत है। यहाँ अन्वेषण की प्रचुर संभावनाएँ हैं।

भारतवर्ष अपनी संस्कृति, इतिहास, शिल्पकला, मूर्तिकला आदि विधाओं का संरक्षण करने वाला गौरवशाली देश है। यहाँ सभी धर्मों संस्कृतियों, भाषाओं एवं कलाओं को समादर प्राप्त है। भारतीय कला एवं संस्कृति को आतताइयों एवं प्राकृतिक प्रकोपों ने नष्ट करने का कई बार प्रयास किया, परन्तु यह भारत की माटी में इतनी रची बसी है कि इनको समूल मिटाया जाना संभव नहीं हुआ।

मैं जैन कलाशिल्प पर 40 वर्षों से निरंतर कार्य कर रहा हूँ। मैंने पाया कि दिगज़्बरत्व का अपना विशिष्ट सौन्दर्य है, जो भौतिकता से परे आध्यात्मिक, वीतरागता एवं आन्तरिक शांति के रूप में प्रस्फुटित होता है, आवश्यकता है इस मुखरित मौन को आत्मसात करने की। मानव जीवन का यही चरम लक्ष्य भी है। इसे शिल्पियों ने प्रस्तर खण्डों पर अपनी छैनी से कलात्मक भाव-भंगिमा एवं मूक भाषा में बखूबी उकेरा है, जो अनूठा एवं अनुपम है। मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि कलात्मक दृष्टि से दो वीतराग जिनबिज़्ब अभिव्यक्ति के स्तर पर कभी समान नहीं हो सकते।

शिल्पियों ने अपनी कलात्मक भावना को इतना विस्तार दिया कि वीतराग बिज़्ब भी परिकर के साथ मुखरित हो उठता है, जिसका प्रत्येक अंग हमें आकर्षित करता है, चाहे वह अष्टप्रातिहार्य हो या मंगलद्रव्य, मुखाकृति हो या हस्तपाद विन्यास। यहाँ तक कि श्रीवत्स चिह्न भी वक्ष स्थल की शोभा में वृद्धि करता है।

मैंने बहुत से सिद्ध क्षेत्र अतिशय क्षेत्र तीर्थ क्षेत्र एवं कला क्षेत्रों में अन्वेषण कार्य किया है, परन्तु नवागढ़ प्राचीन नन्दपुर क्षेत्र का अपना वैशिष्ट्य है। यहाँ कला से लेकर संत-साधना सभी के आयाम स्थापित हुए हैं।

ब्र. जयकुमार निशांत ने नवागढ़ क्षेत्र के अन्वेषण, संरक्षण एवं संवर्धन में अथक श्रम किया है। उन्होंने प्रतिष्ठा कर्म जैसे लोकेषणा कार्य को विराम देकर संस्कृति संरक्षण का लक्ष्य बनाया, यह उनका अदम्य साहस है। निशांत जी ने यहाँ कला की विभिन्न विधाओं वाले पुरातत्त्ववेत्ताओं को आमंत्रित करके नवागढ़ में विशेष अन्वेषण करवाये हैं, जिससे इस क्षेत्र की जीवन्तता पुरा-पाषाण काल से गुप्त, प्रतिहार, चन्देल एवं बुन्देलखण्ड तक सिद्ध हुई है।

'निशांत जी' ने नवागढ़ आने का कई बार आग्रह किया पर टलता रहा। जैनकला पर कार्यरत डॉ. शांतिस्वरूप सिन्हा (काशी हिन्दू विश्वविद्यालय) के साथ मार्च 2018 में ही नवागढ़ आना सम्भव हो सका। 25 मार्च से 28 मार्च 2018 तक नवागढ़ एवं आसपास के क्षेत्रों का अन्वेषण करने पर हमें लगा कि यहाँ की कला देवगढ़ एवं खजुराहो की जैन कला का स्मरण कराती है।

यहाँ के शैलाश्रय (कच्छप शिला एवं साधना गुफा) प्राकृतिक सौन्दर्य एवं शांति के मध्य ध्यान-साधना के विशेष स्थान हैं। इनमें उकेरी कायोत्सर्ग- मुद्रा एवं चरण चिह्न गुप्तकालीन हैं। कच्छप गुफा के चित्रों में ज्यामितीय आकारों तथा पशुओं के चिह्न हैं जो ई. पू. 1000 से पूर्व के लगते हैं। इससे सिद्ध होता है कि नवागढ़ क्षेत्र में जैन संतों का आवागमन तीसरी-चौथी सदी में होने लगा था। यहाँ प्राप्त विभिन्न मुद्राओं वाले उपाध्याय बिम्बों एवं मानस्तम्भ में उत्कीर्ण उपाध्याय बिम्बों से प्रतीत होता है कि देवगढ़ की तरह नवागढ़ भी विद्याध्ययन एवं साधना का विशेष स्थान रहा है, जिसकी स्थापना गुप्तकाल के पूर्व में हो गई थी।

नवागढ़ में संगृहीत पुरासम्पदा से यहाँ कई जैन मंदिरों के होने का संकेत मिलता है। आसपास के निरीक्षण से ऐसे संकेत मिलते हैं कि यहाँ जैन मंदिरों के साथ वैष्णव एवं शैव मंदिर भी रहे होंगे जो भारतीय संस्कृति की धार्मिक सहिष्णुता को दर्शाते हैं।

यहाँ संगृहीत संवत् 1123 (1066 ई.) का तीर्थंकर आदिनाथ का सिंहासन महत्त्वपूर्ण है। आचार्य शैलाश्रय से प्राप्त श्रेष्ठी पाहल की प्रशस्ति से ऐसा प्रतीत होता है कि चन्देल शासक धंगदेव संवत् 1011 (ई. 954) के शासन काल में राजसम्मान प्राप्त श्रेष्ठी पाहल (पाहिल) ने मुनि वासवचंद के काल में खजुराहों में जैन मंदिर वर्तमान में पार्श्वनाथ मंदिर निर्माण के साथ नन्दपुर वर्तमान नवागढ़ में भी जैन मंदिर का निर्माण कराया होगा।

पहिल के पौत्र महिचन्द्र और प्रपौत्र देल्हण ने संवत् 1195 (1138 ई.) में तीर्थंकर महावीर मूर्ति की स्थापना कराई। नवागढ़ तीर्थ में मंदिर निर्माता श्रेष्ठियों के पृथक-पृथक बिम्ब भी विलक्षण हैं।

नवागढ़ साधना तीर्थ में प्राचीन काल से वर्तमान काल तक सतत जैन संतों का आवागमन एवं विशाल मंदिरों का निर्माण हुआ, जिससे स्पष्ट होता है, कि यहाँ के श्रावक समृद्धशाली एवं धार्मिक प्रवृत्ति के थे।

नवागढ़ की जैनकला का समावेशी स्वरूप एक लम्बे इतिहास को संजोये हैं, जिसमें वीतरागी तीर्थंकरों की मनोहारी मूर्तियों को पारम्परिक मुद्राओं ध्यान और कायोत्सर्ग में निरूपित किया गया है। तीर्थंकरों की शताधिक मूर्तियों में अधिकांशतः पीठिका पर उनके पारम्परिक लांछन और सिंहासन, चामरधारी सेवक तथा शीर्ष भाग में त्रिछत्र जैसे प्रातिहार्य देखे जा सकते हैं। सामान्यतः पीठिका के छोरों पर यक्ष-यक्षिणी भी निरूपित हैं।

ऋषभनाथ और नेमिनाथ के साथ क्रमशः पारम्परिक यक्ष-यक्षी, गोमुख चक्रेश्वरी और कुबेर अम्बिका की मूर्तियाँ रूपायित हैं।

12वीं शती ई. के तिथि युक्त संवत् 1203 (1146 ई.) के मानस्तम्भों में ऊपरी भाग में तीन ओर अर्हन्त और एक ओर उपाध्यायों की आकृतियाँ उत्कीर्ण हैं, जबकि नीचे चारों और यक्षियों की मूर्तियाँ हैं जिनमें चक्रेश्वरी, अम्बिका, पद्मावती एवं ज्वालामालिनी को पहचाना जा सकता है।

अभिलेखों की दृष्टि से भी नवागढ़ की जैन पुरा सम्पदा महत्त्वपूर्ण है। इनमें संवत् 1123 से संवत् 2059 (1066 से 1997 ई.) तक के कई मूर्तिलेख हैं जो नवागढ़ की पुरातत्त्व यात्रा के विकास पर कई दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। इन लेखों में सामान्यतः मूर्ति की स्थापना से संदर्भित भट्टारक पद्मदेव, राजपुत्र देवपाल तथा श्रेष्ठी कुल के गोलापूर्व अन्वय से सम्बन्धित साहू रामचन्द्र, बालू, महीचन्द, देल्हण और नारी प्रतिष्ठाकर्त्री के नाम महत्त्वपूर्ण हैं।

तीर्थंकर मूर्तियों के अतिरिक्त उपाध्यायों की स्वतंत्र मूर्तियाँ शास्त्र एवं शिक्षा की दृष्टि से नवागढ़ के महत्त्व को प्रदर्शित करती हैं। इनके अतिरिक्त क्षेत्ररक्षक देवता के रूप में क्षेत्रपाल (13वीं शती) के शीर्ष भाग में छोटी तीर्थंकर मूर्ति है। नायिकाओं या

अप्सराओं तथा तीर्थंकर मूर्तियों में सर्वालंकृत चामरधारों की आकृतियाँ कलात्मक दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

वर्तमान मंदिर अरनाथ (18वें तीर्थंकर) को समर्पित है जो नवागढ़ क्षेत्र का मुज़्य जैन मंदिर है। गर्भगृह में प्रतिष्ठित लगभग 4.75 फीट की कायोत्सर्ग मूर्ति सन् 1959 में उसी स्थान से खुदायी में प्राप्त हुयी थी, जो 10वीं शती की प्रतीत होती है। अरनाथ के दोनों पार्श्व में कुन्थुनाथ और शांतिनाथ की सुन्दर कायोत्सर्ग मूर्तियाँ देखी जा सकती हैं, जिन्हें 1985 में स्थापित किया गया था। इस प्रकार शांतिनाथ, अरनाथ और कुन्थुनाथ (पूर्व में चक्रवर्ती, कामदेव और बाद में कैवल्य व दीक्षा के बाद तीर्थंकरों के रूप में) भगवान् की मूर्तियों वर्तमान में वेदी में है।

वर्तमान अरनाथ मंदिर के ऊपरीतल एवं अन्य वेदियों में 20वीं शती की कई तीर्थंकर मूर्तियाँ हैं। मूलनायक भगवान् अरनाथ के जीवन दृश्यों का विस्तृत उत्कीर्णन भौंयरे की भीतरी भिज़ियों पर दृष्टव्य है, जो इसके आकर्षण को द्विगुणित करता है। मंदिर के प्रांगण की दीवार में मानस्तज़्भ के सामने मूल मंदिर के वितान का अवशेष भी लगाया गया है जो 10वीं शती ई. के मंदिर की विशालता का साक्षी है।

मंदिर प्रांगण के आवासीय भवन के ऊपरी तल के मंदिर में भी धातु एवं प्रस्तर की कई तीर्थंकर मूर्तियाँ सुरक्षित हैं । इनमें 13 धातु मूर्तियाँ विशेष उल्लेखनीय हैं जो आकार में एक से ग्यारह इंच की हैं। इनमें संवत् 1548 (1491 ई.) की डेढ़ इंच की पार्श्वनाथ की धातु मूर्ति में सर्प फणों का छत्र सुन्दर है। शक संवत् 1586 (1721 ई.) की पार्श्वनाथ की दूसरी ध्यानस्थ ताम्र धातु की मूर्ति (11 इंच) में उनके धरणेन्द्र यक्ष एवं पद्मावती यक्षी का पारस्परिक आयुधों वाहनों एवं सर्पफणों के छत्र सहित अंकन हुआ है। इसी प्रकार नेमिनाथ की संवत् 1490 और विमलनाथ की धातु मूर्तियाँ भी हैं। 17 वीं से 20 वीं शती ई. के मध्य की ऋषभनाथ शांतिनाथ, कुन्थुनाथ एवं पार्श्वनाथ की प्रस्तर मूर्तियाँ भी कला एवं आस्था की दृष्टि से ध्यातव्य है।

जैनकला के विविध रूपों के साथ ही नवागढ़ क्षेत्र में वैदिक पौराणिक परज़्परा की देव मूर्तियाँ भी उपलज़्ध हैं, जो वैष्णव या शैव मंदिरों के इस क्षेत्र में होने को प्रमाणित करती हैं। इन मूर्तियों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, शक्ति, कार्तिकेय, सूर्य एवं अप्सराओं की मूर्तियाँ क्षेत्र के आस-पास बिखरी हुई देखी जा सकती हैं, जिनका

समुचित रख-रखाव आवश्यक है। वस्तुतः नवागढ़ का जैन कला के क्षेत्र के रूप में सज़्यक् विकास अपेक्षित हैं।

नवागढ़ में अन्वेषण की बहुत संभावनाएँ हैं। यहाँ के शिल्प का गहन दृष्टि से निरीक्षण और विस्तृत अध्ययन करने की आवश्यकता है। इस भूमि के गर्भ में संस्कृति के कितने रहस्य हैं ? कहा नहीं जा सकता, पर यह निश्चित है यह उस काल का महज़्वपूर्ण स्थल रहा होगा, जहाँ जैनधर्म, संस्कृति, कला एवं साधना का विकास श्रेष्ठतम स्तर पर हुआ।

सन्तों की पुरातन साधना स्थली: नवागढ़

- प्रोफेसर डॉ. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'

संस्कृति के प्राणतज़्व तीर्थ संरक्षण को भारतीय संस्कृति का आधार स्तज़्भ मानकर इस वृज़् के ''सर्वतो भावेन सज़्यक् परिपालनार्थं'' अहर्निश दज़्ावधान प्रतिष्ठारत्नाकर महान् मनीषी श्रद्धेय पं. गुलाबचन्द जी जैन 'पुष्प' टीकमगढ़ (म.प्र.) अब हमारे बीच सशरीर नहीं है, किन्तु एक महनीय जीवन्त कृति विद्यमान है -श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ (नन्दपुर) नावई, जिला ललितपुर (उ.प्र.) ।

प्रकृति के झञ्झावातों, प्राकृतिक और राजनैतिक प्रकोपों सांस्कृतिक परिवर्तनों आदि से घोर उपेक्षित अपरिचित इस स्थल की सबसे पहले सुध लेने वालों के अग्रगण्य हैं प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द जी 'पुष्प'। वस्तुतः यह स्थल सन्तों की पुरातन साधना स्थली है।

श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़ जैनधर्म के 18वें तीर्थंकर भगवान् अरनाथ स्वामी के अतिशय सज़्पन्न होने के साथ सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक दृष्टि से भी अत्यन्त महज़्वपूर्ण है। इसका इतिहास शास्त्रों, पुराणों एवं किंवदंतियों से परे है। इस क्षेत्र में उपलज़्ध शिलालेख एवं प्रशस्तियों में इसकी प्राचीनता जहाँ संवत् 1123 (सन् 1066 ई.) है, वहीं शिल्प एवं पुरासज़्पदा की कलाकृतियाँ इसके 3 री सदी से पूर्व की साक्षी हैं।

आदरणीय ब्रह्मचारी जयकुमार 'निशांत', जिनने स्वेच्छा से शासकीय सेवा से सेवानिवृज़ि लेकर आचार्य विद्यासागर जी महाराज से ब्रह्मचर्य व्रत लिया, आपने पिता प्रतिष्ठा-पितामह पं. गुलाबचन्द जी 'पुष्प' की प्रतिष्ठा अनुष्ठान की धरोहर को सहेजकर 200 पंचकल्याणक एवं गजरथ महोत्सव सज़्पन्न कराने का गौरव प्राप्त किया है। आपने 900 वर्ष प्राचीन नवागढ़ क्षेत्र के संवर्धन का संकल्प लेकर इसकी मौलिकता एवं शिल्पकला को संरक्षित रखते हुए विकास कार्य सज़्पन्न कराया है।

आदरणीय ब्र. निशांत जी ने नवागढ़ के सरपंच श्री रामनारायण यादव के साथ अनेक माह दिन-दिनभर क्षेत्रीय बीहड़ एवं पर्वतों पर भ्रमण करके कई ऐतिहासिक साक्ष्य प्राप्त किये हैं। आपने एक शैलाश्रय में अतिप्राचीन प्राग् ऐतिहासिक शैलचित्र खोजे हैं, इनमें से अधिकांश काल कवलित होकर केवल रंग के धज़्बे एवं लकीरें

मात्र शेष रह गये हैं, शेष बचे चित्र प्राकृतिक परिवेश, धार्मिक प्रभावना एवं साधना स्थलों का संकेत कर रहे हैं।

आदरणीय ब्र निशांत जी इतिहास की कड़ियों को जुटाने में स्थानीय वरिष्ठजनों, शिल्पविदों, इतिहासविदों को सतत इस क्षेत्र पर लाने का सज़्यक् पुरुषार्थ कर रहे हैं। इनमें पुराविद्या विशेषज्ञ पं. नीरज जी सतना, प्रसिद्ध प्रतिमाविज्ञानी, डॉ. कस्तूरचंद्र जी 'सुमन', प्रशस्तिवाचक,डॉ. ए.पी. गौड़, पुरातज़्व अधिकारी लखनऊ, डॉ. एस. के. दुबे संग्रहालय अधिकारी झांसी, डॉ. के. पी. त्रिपाठी एवं श्री हरिविष्णु अवस्थी, इतिहासविद् टीकमगढ़, डॉ. स्नेहरानी जैन शिल्पकला एवं शैलचित्र विशेषज्ञ, डॉ. हरिसिंह गौर विश्वविद्यालय सागर, इंजीनियर एस. एम. जैन सोनीपत, वरिष्ठ वास्तुविद्, राजकुमार जी कोठारी, जयपुर, वास्तुविद् ने नवागढ़ क्षेत्र की पुरासज़्पदा को अतिविशिष्ट एवं महज़्वपूर्ण निरूपित कर इसके संरक्षण हेतु ''संग्रहालय'' की आवश्यकता पर जोर दिया है। तदनुसार क्षेत्रीय कमेटी ने तत्परता से 138 कलाशिल्पों का झांसी पुरातज़्व कार्यालय में पंजीकरण करा लिया है।

विज़्यात प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द जी 'पुष्प' नवागढ़ क्षेत्र के अन्वेषक, अध्यक्ष श्री हीरालाल जी डूंडा एवं कोषाध्यक्ष श्री दयाचन्द जी सर्राफमैनवार ने पूज्य स्व. क्षुल्लक चिदानंद जी के वर्ष 1965 एवं 1966 के चातुर्मास की स्मृति से बताया कि क्षुल्लक जी आहार करने के पश्चात् बीहड़ जंगलों में साधना करने जाते थे। कभी-कभी 2-3 दिन व्यतीत हो जाते थे, लोगों के खोजने पर भी वह नहीं मिलते थे। क्षुल्लक जी ने अपना अनुभव बताया कि यह क्षेत्र अत्यन्त रमणीक, शांत एवं आत्मसाधना के लिए विलक्षण ऊर्जायुक्त है। यहाँ की पहाड़ियों में न जाने कितने साधकों ने संल्लेखना धारणकर आत्म कल्याण किया है। यहाँ की ऊर्जा ध्यान के लिये स्वतः ही प्रेरित करती है। यहाँ की गुफाओं में साधना करते हुए समय का पता ही नहीं चलता, विशेष आत्मशांति प्राप्त होती है।

ग्राम के वरिष्ठ श्री हरगोविन्द जी यादव बताते हैं, इस पहाड़ी में कई गुफाएँ हैं, जिनमें से दो गुफाओं को गाँव के लोगों ने हिंसक जानवरों के भय से बंद कर दिया है, यह ध्यान साधना का प्रमुख स्थान था। यहाँ की पहाड़ियों में स्थित गुफाओं में कई जीवों ने सिद्धि प्राप्त की है, जिसने जो चाहा उसे मिला है, यह तो एक सिद्ध स्थान ही

है, यहाँ की चंदेलकालीन बावड़ियाँ, मन्दिर एवं मठ धरती में समा गये हैं। इनके शिलाखण्ड यत्र-तत्र आज भी बिखरे हैं तथा अधिकांश भूमि में दब गये हैं या दबा दिए गए हैं। यदि उनकी खोज की जाये तो निश्चित रूप से इस क्षेत्र के इतिहास एवं संस्कृति की विशेषता बताने वाली पुरा सम्पदा उद्घाटित होगी। इनमें हिंसक पशुओं का आवास होने के कारण ग्रामवासियों ने बंद कर दिया है, इन्हें पुनः खोलने का कार्य होना है।

क्षेत्र से डेढ़ कि.मी. दूर पहाड़ी पर स्थित मटकी गुफा जो अत्यन्त विलक्षण है, विशाल शिला के मध्य एक मटकी के आकार का खाली स्थान हैं, जिसमें शिला के एक किनारे पर टूटे स्थान से सिर अन्दर डालकर प्रवेश करने पर कमर के ऊपर का हिस्सा अंदर चला जाता है। साधक आसन लगाकर इसमें घंटों साधना कर सकता है।

क्षेत्र से लगभग 3 कि.मी. दूर बीहड़ जंगल में विशाल शिलाखण्डों के मध्य दो चट्टानों के मध्य प्राकृतिक स्थल है, जहाँ 8-10 साधक आराम से विश्राम कर सकते हैं।

पहाड़ी के दूसरे छोर पर एक विशाल चट्टान में त्रिभुजाकार गुफा, जिसमें 3-4 साधक वर्षा, धूप एवं हवा से सामान्य अनुकूल मौसम में निर्विघ्न साधना कर सकते हैं।

यह विशेष शैलाश्रय है जो सबसे ऊपर दो-तीन शिलाओं के आश्रय से निर्मित है। इसमें ऊपर शिला जो छत के आकार की है, में प्रागैतिहासिक शैलचित्र अंकित किए गये हैं, जिनमें प्राकृतिक उत्कीर्ण शिल्प चित्रों के साथ रंगीन शैल चित्रांकन सांकेतिक भाषा में जैनदर्शन के सिद्धान्तों को दर्शाति हैं।

चंदेल बावड़ी : ईंटों द्वारा निर्मित 35-40 फुट गोलाकार में फैली प्राचीन बावड़ी है, जिसमें नीचे तक जाने के लिए पाषाण खण्डों की सुविधाजनक सीढ़ियाँ निर्मित हैं। वर्तमान में यह मिट्टी से भर गयी है जो जीर्णता के कारण ध्वस्त होने की कगार पर है। वर्तमान में नवागढ़ समिति द्वारा ब्र. निशांत भैया जी के निर्देशन में इसका जीर्णोद्धार हो चुका है।

रहस्मय मन्दिर के अवशेष : यह मंदिर विशेष शिलाखण्ड एवं आमलक के

शिलाखण्ड सहित विशाल लगभग 60 फीट ऊँचे तेंदू के वृक्षों के मध्य अपने गर्भ में न जाने कितने रहस्यों को समेटे है, खोज का विषय हैं। ग्रामीणजनों में इसकी विशेष श्रद्धा एवं बहुमान है।

पुरा विद्या विशेषज्ञ डॉ. स्नेहरानी, डॉ. भागेन्दु जैन, डॉ. ए.पी. गौड एवं डॉ. के. पी. त्रिपाठी के अनुसार यहाँ की खुदाई में प्राप्त विशाल खंडित जिनबिम्ब एवं जैनशासक की प्रतिमा इस क्षेत्र के हजारों साल प्राचीन समृद्ध नगर होने की संभावना व्यक्त करते हैं। यह जैनों का विशेष सम्पन्न क्षेत्र एवं साधना स्थल रहा होगा, जो काल के क्रूर थपेड़ों से कब भूमि में समा गया, अतीत के गर्भ में है। पहाड़ पर स्थित अलंकृत शिल्प के शीर्ष पर स्थित अर्हन्त प्रतिमा के कारण प्रतिमा विज्ञान इन्हें जैनशासक के रूप में वर्णित करता है, परन्तु ग्रामीणजनों की अगाध श्रद्धा इन्हें गाँव का संरक्षण करने वाले एवं दुःखों का निवारण करने वाले दूल्हादेव एवं बगाज माता के रूप में पूजती है।

डॉ. स्नेहरानी जी ने अपने अनुभव से शैलचित्रों की रचनाधर्मिता को हड़प्पा मोहन जोदड़ों से प्राचीन बताया है। इन शैलाश्रयों में शैलचित्रों के अलावा शिलालेखों की शृंखला, पाषाण औजार एवं अन्य शिल्प भी मिलना चाहिए, क्योंकि शैलचित्रों की आकृति इस क्षेत्र को निर्वाण क्षेत्र होने का संकेत कर रही है। यह शैलचित्र भीमबैठका के शैलचित्रों से भिन्न है। भीमबैठका के शैलचित्रों में उदरपूर्ति के लिए आखेट (शिकार) को प्रदर्शित किया गया है, जबकि नवागढ़ के शैलचित्रों में प्राकृतिक समृद्धि एवं धार्मिकता को प्रदर्शित किया गया है। इन चित्रों को अलग-अलग काल में अलग-अलग रंगों एवं शिला को उकेरित करके बनाया गया है। इससे प्रतीत होता है कि यहाँ कई पीढ़ियों ने साधना करके इस क्षेत्र को जीवंतता प्रदान की है।

आपके अनुसार नवागढ़ के शैलचित्र वृषभ, अहिंसक जीवन शैली, प्राकृतिक समृद्धि, कृषि, धार्मिक जीवन पद्धति का प्रतीक हैं। वृषभ के सामने चौकोर रचना की लकीरें धर्म के प्रभाव को चारों दिशाओं एवं विदिशाओं में प्रसारित होने का प्रतीक है। तरंगे, सरोवर एवं विशाल जलाशयों का, गोल रचना विशाल कूपों एवं बावड़ियों का, अन्य रचना में पर्वत शृंखला की चोटी इस क्षेत्र की सुरम्य रमणीक साधना

स्थली को इंगित करती हैं। अन्य शैलचित्र में गृहाकृति साधना वसतिका जहाँ संल्लेखना धारणकर समाधिमरण की प्रक्रिया सम्पन्न की जाती है, को चित्रित किया है, उसी के ऊपर केवल ज्ञान सूर्य रूप चकरी प्रकाशमान है।

हल्केरंग के शैलचित्र यहाँ साधकों के महाव्रतों अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह को धारण करने वाले महामनीषियों की तप साधना के विशेष आयाम अर्थात् सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र, सम्यक् तप रूप आराधनाओं को दर्शा रहे हैं।

एक अन्य अतिविशिष्ट रचना संतों की सल्लेखना चर्या की ओर संकेत कर रही है, जिसमें साधक रत्नत्रय अर्थात् सम्यग्दर्शन, ज्ञान एवं चारित्र को धारणकर तपः शक्ति से कषायों को कृष करके आत्मसाधना का संकेत है।

डॉ. स्नेहरानी जी ने अपने दीर्घ अनुभव एवं तीक्ष्ण दृष्टि में यहाँ के शैलाश्रय में सफेद आधार पर गेरु वर्ण से निर्मित चित्रों के साथ शिला पर कुरेदकर उकेरे गये, बूज़्ब स्केच, लोकपूरणी सैंधव चकरी, केवली समुद्घात को केवलदर्शन रूप नेत्र सम्पूर्ण ज्ञान अर्थात् केवलज्ञान को सप्त पंखुड़ी पुष्प से जैनदर्शन के प्रमुख आधार सप्त परम स्थान यथा सज्जाति, सद् गृहस्थ, पारिव्राज्य, सुरेन्द पद, चक्रवर्ती, पंचपरमेष्ठी एवं निर्वाण को दर्शाता है।

गाढ़े रंग की आकृति सैंधव काल के चित्रों से मिलान करने पर संसारी जीव को संल्लेखना साधना द्वारा संसार से निकालकर पंचम सिद्धगति में आत्मा के ऊर्ध्वगमन का प्रतीक है।

इस लघुकाय शैलाश्रय के शैलचित्रों की चित्र संयोजना साधना के विशेष रूपों को स्पष्ट कर रही है, क्योंकि बांई ओर से दांयी ओर ' क्रमशः साधना के वृद्धिगंत आयामों को दर्शाया गया है, यहाँ साधक में संल्लेखना धारण करके आत्म शक्ति का विकास करते हुए, पंच महाव्रतों को धारण करके चारों आराधनाओं से कषाय कृश् करके अहिंसक धर्म की चतुर्दिक् प्रभावना करके सप्तपरम स्थान के श्रेष्ठपद मोक्ष अर्थात् निर्वाण को प्राप्त करता है।

आदरणीय ब्र. जयकुमार 'निशांत' द्वारा खोजे गये शैलाश्रय प्रागैतिहासिक शैलचित्र-जैनधर्म की प्राचीनता, जैन जीवन पद्धति, साधना एवं मृत्यु महोत्सव की

पुरातन परम्परा के साथ नवागढ़ की समृद्धिशाली जैन संस्कृति के संस्थापक जैन शासक की प्रतिमा इसे विशेष साधना स्थली निर्वाण भूमि के रहस्यों को उद्घाटित करने वाले हैं।

वस्तुतः आदरणीय ब्र. 'निशान्त' जी का सतत जागरूक पुरुषार्थ नवागढ़ क्षेत्र को भारतीय संस्कृति, कलाशिल्प एवं पर्यटन का विशेष रूप प्रदान करेगा, जिससे सम्पूर्ण विश्व इस क्षेत्र पर आकर रहस्यमय सूत्रों को उद्घाटित कर आत्मशांति प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकेगा।

इस परिक्षेत्र के शैलचित्रों एवं शैलाश्रयों की प्राचीनता और कलावशेषों का सम्यक् अध्ययन इस क्षेत्र के सांस्कृतिक इतिहास को किस शताब्दी तक ले जाता है ? प्रतीक्षित है। शासन एवं प्रशासन का ध्यान इन शैलाश्रयों तथा शैल चित्रों के संरक्षण और कला प्रेमियों मर्मज्ञों-मनीषियों का ध्यान इनके अध्ययन-अनुशीलन की ओर प्रार्थित है। कहीं ऐसा न हो कि यहाँ के शैल-चित्र भी अतीत की स्मृतियों को समेटे काल के क्रूर थपेड़ों में विलीन हो जायें या आधुनिक संसाधनों के द्वारा भवन, सेतु, मार्ग आदि के निर्माण हेतु बोल्डर-गिट्टी बनकर हमेशा के लिए विनष्ट हो जाएँ।

प्रकृति की गोद में समाये, इतिहास, संस्कृति, कला और पुराविद्याओं के महत्त्वपूर्ण इस विस्मृत अध्याय को प्राण-पण से पुनरुज्जीवित करने वाले उन महामनीषी (स्व.) प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचन्द्रजी 'पुष्प' को कोटि-कोटि नमन और उनके दायाद को न केवल सुरक्षित प्रत्युत कोटि-गुणित अधिक संवर्द्धित कर विश्व स्तर पर सुप्रतिष्ठित करने वाले नवागढ़ क्षेत्र के सभी कार्यकर्ताओं को सम्यक् पुरुषार्थ एवं आदरणीय बाल ब्रह्मचारी प्रतिष्ठाचार्य जय 'निशान्त' जी का सतत जागृत सार्थक समर्पण शतशः अभिनन्दनीय है। उनकी लक्ष्य भेदी साधना श्रमण संस्कृति के गौरवपूर्ण अतीत के साथ मध्यकालीन साधना के अनुद्घाटित अध्यायों को सम्पुष्ट करके 'चेदि जनपद' के सम्पूर्ण परिक्षेत्र की समृद्धि को रूपायित कर सकेगी, ऐसी आशा है।

- निदेशक, संस्कृत, प्राकृत तथा जैन विद्या अनुसन्धान केन्द्र, दमोह (म.प्र.)

नवागढ़ (नंदपुर) पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र

प्रो. गिरिराज कुमार, आगरा

नवागढ़ जिसको नंदपुर के नाम से भी जाना जाता है, एक प्राचीन सज़्यता का स्थल है। यह उज़रप्रदेश की तहसील जिला ललितपुर में मध्यप्रदेश एवं उज़रप्रदेश के सीमा पर 78^0.80 देशान्तर एवं 24^0.34 अक्षांश में स्थित है। यह मध्यप्रदेश के टीकमगढ़ से 30 कि. मी. झांसी (उ.प्र.) से 130 कि. मी. तथा ललितपुर उ. प्र. से 65 कि. मी. पर अवस्थित है। बुंदेलखण्ड जो खजुराहो तथा ओरछा के मंदिरों के लिये विश्वप्रसिद्ध है, का एक हिस्सा है, जिसकी स्थापना गुप्तकालीन शासकों ने की थी।

श्री जयकुमार 'निशान्त' जो नवागढ़ के जैन मंदिर के प्रमुख कार्यकर्ता हैं, इन्होंने नवागढ़ की फाइटोन शिला के पास जैन पहाड़ी में कुछ शैलाश्रय एवं पाषाण चित्र खोजे हैं। उन्होंने कुछ मनके तथा अन्य पुरातज़्व सामग्री जो प्राचीन रहवासी प्रयोग करते थे खोजी है। उनकी बहुत तीव्र रुचि इस क्षेत्र का सांस्कृतिक, पुराताज़्विक इतिहास जानने और उसको प्रमाणित करने की है, यही कारण है कि वे चाहते हैं कि पाषाण कला एवं अन्य स्थलों का पाषाण कला विशेषज्ञों के द्वारा अवलोकन एवं अध्ययन कराया जाये। इस हेतु उन्होंने मुझे इस क्षेत्र में आमंत्रित किया। उनके आमंत्रण पर मैं तथा डॉ. अभिमन्यु जो संस्कृत व्याकरण के सहायक प्रोफेसर हैं, 28 जनवरी 2019 को क्षेत्र पर पहुँचे और आसपास के स्थान एवं क्षेत्र का अवलोकन अन्वेषण किया।

यहाँ पर पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' के द्वारा खोजा गया दसवीं शताज़्दी का एक जैन मंदिर है। जिसका जीर्णोद्धार समिति के द्वारा स्थानीय लोगों की सहायता से ब्रह्मचारी जयकुमार 'निशांत' जो पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प' के पुत्र हैं, के कुशल निर्देशन में किया गया। वर्तमान में यह सुन्दर मंदिर जीवन्त कृति है और लोगों के द्वारा पूजित-अर्चित है।

नवागढ़ ग्रेनाइट संरचित क्षेत्र है। यहाँ पहाड़ी के ऊपर प्राचीन रहवासियों के साधन के कुछ अवशेष प्राप्त होते हैं, पहाड़ी गाँव के दक्षिण पश्चिम में स्थित है। यहाँ से कुछ बर्तनों के अवशेष तथा प्राचीन दुर्लभ सामान यथा मिट्टी तथा पाषाण के मनके, धातु उपकरण आदि प्राप्त हुये हैं।

मंदिर के पश्चिम में 1.5 किमी. की दूरी पर एक ग्रेनाईट की पहाड़ी है जिसको सिद्धों की टोरिया कहा जाता है। यहाँ पर ग्रेनाइट की एक विशाल चट्टान है जो ऊपर से नीचे तक दो भागों में दरार के द्वारा विभाजित है। यह चट्टान लगभग 8.6×6×3.5 मीटर लज़्बी, चौड़ी, ऊँची है। उस पर एक कप मार्क बना है जो लगभग वृज़ाकार है। इस चट्टान के क्वार्ट्स क्रिस्टल की संरचना 1.2-0.4 मि.मी. तक है। चट्टान पर एक पैट्रोलिक कप मार्क के रूप में बना है, जिसका माप 60×69×86 मिली मीटर है। क्षरण के कारण यह जानना संभव नहीं हो पाया कि किस तकनीक से इसका निर्माण किया गया था। यह प्रत्यक्ष दबाब (ठोककर) तकनीक के द्वारा या धातु की छैनी का प्रयोग कर बनाया गया। यह सुनिश्चित नहीं हो पाया है। फिर भी इसकी सतह को देखकर लगता है कि इसमें गतिज ऊर्जा का स्थानान्तरण हुआ था, जिसका वर्तमान में कुछ अवशेष मात्र है। बाकी क्षरण के कारण समाप्त हो गया हैं, यह एक मात्र कप मार्क है। जिसे हम लोगों ने इस क्षेत्र में खोजा है। लेकिन हम ऐसे और अवशेषों को आशा करते हैं अतः इस क्षेत्र पर गहन खोज होनी चाहिये। जिससे ऐसे अनेक अवशेष प्राप्त हो सकें।

पाषाण चित्र – एक अन्य पहाड़ी है जिसे फाइटोन हिल्स कहा जाता है। यहाँ पाँच चट्टानें (फाइव स्टोन) अवस्थित है। संभवतः इसी कारण इसे फाइटोन कहा जाता है। यह स्थल नवागढ़ गाँव से पश्चिम में लगभग 3 किमी. पर स्थित है। यहाँ पर एक पाषाण गुफा (राक शैल्टर) में कुछ पाषाण चित्र एक बड़ी ग्रेनाइट चट्टान पर मिले हैं। गुफा 3.3 मी. लज़्बी, 3 मीटर गहरी एवं 1.55 मीटर ऊँची है। इसमें स्पष्ट रूप से दिखने वाले कुछ जानवरों के चित्र एवं ज्यामितिक आकृतियाँ बनी हैं, जो पूर्व पाषाण (माइक्रोलिथिक/मैसोलिथिक) काल के जंगली पशु 6 से 10 हजार वर्ष प्राचीन हैं । इनका संरक्षण आवश्यक है। एक व्यक्ति ने अपना नाम वीर गुर्जर गहरे और मोटे अक्षरों से सफेद खड़िया से लिखा है।

संरचना संज़्या – 1

इसमें एक जंगली पशु जो बाइसन (जंगली भैसा/जंगली बैल) जैसा दिखता

है। दाहिने तरफ तीन ज्यामितिक आकृतियाँ बनी हैं जो इसके सामने हैं तथा एक के ऊपर एक हैं। बाइसन 16.5 ×17 सेमी. नाप का है तथा इसका शरीर खड़ी बहु रेखाओं द्वारा सज्जित है इसके सींग पूर्ण विकसित एवं मुड़े हुए हैं। इसके सामने एक ज्यामितिक रचना है जो कम तिरछी रेखाओं द्वारा भरी हुई है। इसके बाद दो आयताकार खंड हैं। इस रचना का नाप 50×44 सेमी. है जो एक शैल्टर की दाहिनी दीवाल पर बना हुआ है। वे चित्र लाल रंग से महीन ब्रश के द्वारा बनाये गये हैं। इसके ऊपर गेरुआ रंग से मोटे ब्रश द्वारा जो एक रेखा के अवशेष हैं। इसके बगल में गहरे लाल रंग से बने तीन चिह्न हैं, शायद बाद में बनाये गये हैं। एक वर्गाकार चित्र बना है। चट्टान की सतह उखड़ने के कारण इस चित्र का कुछ दाहिना हिस्सा क्षतिग्रस्त हो गया है।

यह चित्र लवण की सफेद परत से ढँक रहा है। इसके अलावा लाल रंग से बना एक जानवर का रेखाचित्र है, क्षरण के कारण इसका रंग हल्का पड़ गया है। यह महीन ब्रश से बना है। इन रचनाओं से यह स्पष्ट झलकता है कि ये चित्र तीन चरणों में बनाये गये हैं। जिनमें से दो जानवरों की पूर्वकालिक पाषाण युग की तथा तीसरी बाद के काल की है।

संरचना संज़्या 2

शेल्टर की दीवाल के बायें तरफ7 टेड़ी-मेड़ी रेखायें हैं जो कि मध्यम चौडाई के ब्रश द्वारा लाल रंग से एक के ऊपर एक बनाई गई है। यह रचना 20×17 से. मी. की है । इसके अतिरिक्त दो ज्यामितिक आकृतियाँ महीन ब्रश से लाल रंग से बनाई गई हैं। बायें तरफ की आकृति जो 11 ×10 सेमी. है लगभग वृज़ाकार है और एक केन्द्र वाले दो वृज़ों के बीच के स्थान का सीधी रेखाओं द्वारा सुसज्जित किया गया है। बायी ओर की 16 ×12 सेमी. की आकृति को आड़ी रेखाओं द्वारा दो भागों में बाँटा गया है, नीचे का हिस्सा अपेक्षाकृत बड़ा है और वह 6 अर्ध चन्द्राकार वाली मुड़ी रेखाओं द्वारा सज्जित किया गया है। ऊपरी हिस्सा 9 रेखाओं द्वारा असमान भाग में विभाजित है। यह आकृतियाँ मोटे सफेद रंग की परत से आवरित है। इसके सिवा रॉक शेल्टर की छत पर गहरे लाल रंग की पूर्व आकृतियों की अवशेष हैं।

जैन साधु की पाषाणाकृति

पाषाण की एक संकरी गुफा में दीवाल पर जैन साधु की आकृति उकेरी हुई है। इस गुफा में हम घुटनों के बल चलकर अंदर पहुँचे। संभवतः यह स्थान जैन साधुओं के द्वारा ध्यान और प्रार्थना के लिये उपयोग में आता होगा यहाँ उनके निर्देशन में किसी ने यह चित्र उकेर दिया होगा। यह 50 सेमी. ऊँचा और 25 सेमी. चौड़ा है, इसके दाहिने हाथ में कोई वस्तु है जो स्पष्ट नहीं दिखती थी।

पाषाण की कुल्हाड़ी

लगभग 500 मीटर गाँव के पश्चिम में स्थित पहाड़ी की ढलान पर चर्ट पर बनीं एक छोटी हेण्डएज़्स मिली है। यह अच्छी तरह निर्मित है और इसका बेट 120 डिग्री पर बना है जिसका कुछ हिस्सा उखड़ गया है, सिरा टूट गया है किनारे टेड़े-मेड़े हो गये हैं ज़्योंकि आगे-पीछे दोनों तरफ की 5-5 पर्ते उखड़ गई हैं। किनारों की रिटचिंग दोनों तरफ से की गई है। इसका रंग हल्का पीला है।

द्वितीय अन्वेषण

दिनांक 27-28 मार्च 2018 को नवागढ़ आकर मैंने पूरे क्षेत्र का विधिवत् निरीक्षण किया। यहाँ मुंडी टौरिया, बगाज टौरिया, पनया नाला के आसपास निरीक्षण करने पर छोटी हैन्डेज़्स 53.8 ×39 ×15 मि.मी. पेटीनेटिड चर्ट 38.3 ×26.0 ×10 मि.मी. की तिकोनी आकृति एवं 31.5 ×23.0 ×6.4 मि.मी. की फलैक आन चर्ट का अन्वेषण किया।

तृतीय अन्वेषण

5 से 7 जुलाई 2018 को नवागढ़ में मुंडी टौरिया, नवागढ़ से 3 किमी. मैनवार टौरिया तथा नवागढ़ से 7 किमी. सपौन टौरिया का निरीक्षण किया। जिसमें मुंडी टौरिया के दक्षिणी भाग में ग्राम वासियों द्वारा उसकी मिट्टी (गुरम) खोदने से लगभग 7 फुट गहराई का स्थान मिला, जिसमें लोवर पेलियोलिथिक (2 से 5 लाख वर्ष) एवं मिडिल पेलियोलिथिक (35 हजार से 2 लाख वर्ष) के कई पाषाण उपकरण प्राप्त हुए हैं। जिनकी आकृति 61 ×73.8 ×46.85 मिमी., 70 ×67 ×26.6 मिमी. है।

सापौन टौरिया, जो माननीया उमाभारती जी के निवास ग्राम डूंडा से 4 कि.मी. एवं अजनौर से 4 कि.मी. दूर रोड पर स्थित है। यहाँ क्वार्टज की 200 मीटर लम्बी 50 मीटर ऊँची पहाड़ी है जिसमें क्वार्टज के कई उपकरण प्राप्त हुए जिनकी आकृति 87 ×81.7 ×45 मिमी. 70.6 ×55 ×25 मि.मी. एवं 130.5 ×61 ×39 मि.मी. है। इसी प्रकार मैनवार हिल्स से भी कई उपकरण प्राप्त हुए हैं।

निष्कर्ष-

इस प्रकार नवागढ़ क्षेत्र की प्रागैतिहासिक विरासत के साक्ष्य लोअर पेलियोलिथिक (2 से 5 लाख वर्ष) से अपर पेलियोलिथिक तक के पाषाण प्राप्त हुए हैं, नवागढ़ की एक और विशेषता है कि यहाँ पाषाण काल के साक्ष्यों के साथ कपमार्क, रॉक पेंटिंग्स, रॉक कट इमेज भी मिले हैं।

हजारों वर्ष प्राचीन शैलाश्रयों में जैन संतों के साधना स्थल एवं शयनस्थल यह सिद्ध करते हैं कि नवागढ़ की पहाड़ियों में जैन संतों का आवागमन हजारों वर्षों से निरंतर हो रहा है। यहाँ से प्राप्त मिट्टी एवं पाषाण के मनके यहाँ विकसित मानव संस्कृति के साक्ष्य हैं। कला शिल्पानुसार यहाँ गुप्तकाल, प्रतिहार काल, चन्देल काल से वर्तमान काल तक के प्रमाण स्पष्ट रूपेण संगृहीत हैं। यहाँ की पुरातात्त्विक, सांस्कृतिक तथा ऐतिहासिक विरासत विशिष्ट एवं विलक्षण हैं। इनका संरक्षण अतिशीघ्र होना चाहिए, अन्यथा इनका मात्र इतिहास में ही नाम रहेगा।

गुरुकुल परम्परा का संवाहक- नवागढ़ (नंदपुर)

- डॉ. श्रेयांस कुमार जैन

भारतीय संस्कृति गुरु-शिष्य परम्परा की पोषक है अर्थात् पुरातनकाल से ही गुरुकुलों में गुरु अपने शिष्यों को उनकी योग्यतानुसार संस्कारारोपण करके उनके व्यक्तित्व का परिमार्जन करते थे। इतिहास इसका साक्षी है।[1] राजकीय भोगविलास से परे प्राकृतिक सुरम्य उपवन में स्थित आश्रमों में राजपुत्र से लेकर सामान्य विद्यार्थी तक विद्याध्ययन करते थे।[2] गुरुकुल के शिष्यों में ऊँच-नीच का भेदभाव नहीं होता था। सामान्यतः दैनिक कार्य स्वयं ही सम्पादित करने के साथ-साथ जंगल से लकड़ी लाना, रसोई तैयार करना, सफाई करना, बागवानी, गुरुओं के समस्त कार्य में सहयोग करना सभी की दिनचर्या का अंग होता था।

अनवद्या हि विद्या स्याल्लोकद्वयफलावहा।[3]

निर्दोष, अच्छी तरह से परिश्रम पूर्वक अभ्यस्त विद्या ही ऐहिक और पारलौकिक कार्यों को सफल करती है अर्थात् जिस शिक्षा से शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास होता है वही यथार्थ से अनवद्य शिक्षा है। (क्षत्रचूड़ामणि 3/45 आ. वादीभ सिंह सूरि)

नंदपुर वर्तमान नवागढ़[4] जिला ललितपुर (उ.प्र.) में संगृहीत कलात्मक शिल्पों का पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा सूक्ष्म अध्ययन से ऐसे तथ्य सामने आये हैं, जो इसे विशाल गुरुकुल या शिक्षा केन्द्र के रूप में स्थापित करते हैं।

बगाज की टौरिया पर स्थित विशेष द्विभागीय गुफा का 11 जून 2016 में उद्घाटन करते समय चंवरधारिणी इंद्राणी, अंबिका एवं साबु पाहल अंकित शिलाखण्ड प्राप्त हुए।[5] दोनों भागों का नैसर्गिक आकार विलक्षण है। द्विभागीय गुफा का फर्श 25×20 फुट है, जो गुफा के भीतर से बाहर तक एक ही पाषाण खण्ड से निर्मित है, परन्तु विशेषता यह है कि भीतरी भाग बाहरी भाग से स्वभाविक रूप से ऊँचा है अर्थात् बहिर्भाग की अपेक्षा दोनों गुफा का भीतरी भाग क्रमशः ऊँचा-नीचा है। जहाँ वरिष्ठ आचार्य एवं उपाध्याय गुफा के भीतर बैठकर बाहर बैठे शिष्यों को विद्याध्ययन कराते हों।

क्षेत्र से 3 कि.मी. दूर पश्चिम में स्थित फाइटोन शिलाओं के निकट जैन पहाड़ी में स्थित गुफा से 28.4.2014 को प्राप्त संवत् 1188 (सन् 1131) की उपाध्याय परमेष्ठी की प्रशस्त एवं मनोज्ञ[6] प्रतिमा जिसकी मुद्रा सुखासन है, बायें हाथ में लम्बायमान शास्त्र, दाहिना हाथ ध्यान मुद्रा में है एवं जिसकी भुजा में पिच्छी दबी हुई है। मुखाकृति सौम्य, विशाल नयन एवं लम्बकर्ण के साथ अत्यन्त मनोज्ञ है। गहरी नाभि सहित उदर एवं पुष्ट वक्षस्थल इनकी सुदृढ़ संहनन के साथ दीर्घ साधना को दर्शाते हैं।

यह उपाध्याय बिम्ब देवगढ़ क्षेत्र के सुप्रसिद्ध उपाध्याय बिम्ब संवत् 1333 (सन् 1276) से 145 वर्ष प्राचीन है। देवगढ़ क्षेत्र में आचार्य एवं उपाध्याय परमेष्ठी द्वारा विद्याध्ययन (पाठशाला) के कई शिल्प संगृहीत हैं।[7]

सिर विहीन कुमार युगल कृति का शिल्प, आभूषण सज्जा, देहाकृति एवं सौष्ठव अत्यन्त चित्ताकर्षक है। एक शिलाखण्ड में दोनों कुमारों में अग्रज एवं अनुज दृष्टव्य हैं। दोनों के गलहार, स्तनहार, बाजूबंध, कटिबंध आदि अन्य अलंकरण अत्यन्त सूक्ष्मता से गढ़े गये हैं। हीयमान कटि प्रदेश, सुदीर्घ पुष्ट वक्षस्थल उत्कृष्ट शिल्प की अभिव्यक्ति हैं।[8] अग्रज कुमार के बायें हाथ में लम्बायमान शास्त्र पत्र एवं दाहिने हाथ में विशेष लेखनी इनके विद्याध्ययन के संकल्प को दर्शाती है।[9]

जैन इतिहास में विद्याध्ययन के प्रति संकल्पित एवं जिनवाणी के प्रति समर्पित उत्कृष्ट एवं विलक्षण मेधा-शक्ति वाले कुमार अकलंक एवं निकलंक प्रसिद्ध रहे हैं। नंदपुर वर्तमान नवागढ़ में स्थापित गुरुकुल एवं जिनवाणी के प्रति निकलंक के बलिदान को दर्शाने हेतु इस शिल्प की विशेष रूप से स्थापना की गई प्रतीत होती है।

कुमार अकलंक-निकलंक ने कांचीपुरी के बौद्ध आश्रम में गुप्तरूप से विद्याध्ययन किया। कुमार अकलंक एकपाठी एवं अनुज निकलंक द्विपाठी थे। इन कुमारों के जैन ज्ञात होते ही उन्हें कारागृह में डाल दिया गया। जहाँ से वे युक्तिपूर्वक भाग निकले, घुड़सवार सैनिकों द्वारा पकड़े जाने के भय से अग्रज अकलंक ने तालाब में छिपकर अपनी रक्षा की। अनुज निकलंक तालाब के पास धोबी पुत्र के साथ सैनिकों द्वारा मरण को प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् अकलंक ने विद्याध्ययन करके बौद्धों को शास्त्रार्थ में कई जगह पराजित करके जैनधर्म की प्रभावना की। इस प्रकार जिनवाणी के लिए निकलंक का बलिदान जगत्प्रसिद्ध है।[10]

सोजना (जिला ललितपुर) की बावड़ी से प्राप्त 4 मानस्तम्भ शिल्पकला की अनुपम कृति हैं।[11] 4 फुट उत्तुंग मानस्तम्भ संवत् 1203 में प्रतिष्ठित कराये गये हैं। मानस्तंभ के शीर्ष पर तीन तरफ अरिहंत बिम्ब एवं एक तरफ उपाध्याय परमेष्ठी उत्कीर्ण हैं जो वहाँ की शैक्षणिक गतिविधियों को दर्शाते हैं।

इन विशेष शिल्प साक्ष्यों से सिद्ध होता है कि नंदपुर वर्तमान नवागढ़ में प्राचीनकाल में विशाल गुरुकुल रहा होगा, जहाँ सैकड़ों श्रमण वहाँ की गुफाओं में आत्मसाधना करते हुए विद्यार्थियों को धर्माराधना एवं लौकिक शिक्षा प्रदान करके उनमें संस्कारारोपण करते रहे हैं।

क्षुल्लक चिदानंद जी महाराज ने नवागढ़ में सन् 1965 एवं 1966 में ब्र. आत्मानंद जी नादैल, ब्र. किशोरीलाल जी कुम्हैडी (बाजा भैया) एवं ब्र भगवानदास जी गुढ़ा के साथ दो चातुर्मास किए।[12] इस अवधि में क्षुल्लक जी ने डूंडा, मैनवार, सौजना, गुढ़ा के श्रावकों को एवं नवागढ़ के जिज्ञासु अजैनों को णमोकार मंत्र, छहढाला, तत्त्वार्थसूत्र का स्वाध्याय इन पहाड़ियों में बैठकर कराया। क्षुल्लक जी से स्वाध्याय करने वालों में स्वरूपचन्द्र पठया, सेठ हल्काईलाल, भागचंद्र मैनवार, मनकू सिंघई ककरवाहा, सुखलाल सौजना, राजाराम लम्बरदार, भगवानदास नापित, रामदीन प्रजापति नवागढ़ आदि मुख्य हैं। आपकी व्याकरण पुष्ट थी, जिससे अध्ययन शैली अत्यन्त सरल एवं रुचिकर होने से सामान्यजन भी जिनवाणी के गूढ़ रहस्यों को हृदयंगम कर लेते थे।

नवागढ़ (नंदपुर) की पहाड़ियों, टीलों एवं गुफाओं में कितने रहस्य छिपे हैं- कह नहीं सकते ? परन्तु इतना अवश्य है कि यहाँ विशेष अन्वेषण अनिवार्य है, जिससे जैन सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं धार्मिक धरोहर हमारे समक्ष प्रकट हो सके।

संदर्भ:

1. संस्कृत जैन प्रबन्ध में प्रतिपादित शिक्षा पद्धति, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
2. संस्कृत जैन प्रबन्ध काव्यों में प्रतिपादित शिक्षा पद्धति, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री
3. क्षेत्र चूड़ामणि 3/45, आ. वादीभ सिंह सूरि
4. 1 प्राचीन जैनतीर्थ नन्दपुर शिलालेखों के दर्पण में, हरिविष्णु अवस्थी

   2 प्राचीन शिलालेख अहारजी, पं. गोविन्ददास जैन कोठिया न्यायतीर्थ

3 अहार क्षेत्र के शिलालेख, डॉ. कस्तूरचंद जैन 'सुमन'

4 श्री दि. जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़ नंदपुर- डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी

5. नवागढ़ (नंदपुर) इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी

6. 1 प्राचीन जैनतीर्थ नन्दपुर शिलालेखों के दर्पण में, हरिविष्णु अवस्थी

2 श्री दिग. जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नंदपुर-डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी

7. 1 जैन कलातीर्थ देवगढ़-प्रो. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, डॉ. शान्तिस्वरूप सिन्हा

2. देवगढ़ की जैन कला एक सांस्कृतिक अध्ययन, प्रो. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'

8. नवागढ़ (नंदपुर) इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी

9. संतों की पुरातन साधना स्थली, नवागढ़, प्रो. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'

10. तीर्थंकर महावीर एवं उनकी आचार्य परम्परा भाग 2, डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

11. 1 श्री दिग. जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नंदपुर- डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी

2 श्री अखिल भा. दिग. जैन गोलापूर्व डायरेक्टरी, पं. मोहनलाल काव्यतीर्थ

3 नवागढ़- एक महत्वपूर्ण मध्यकालीन जैन तीर्थ, नीरज जैन सतना

12. 1 नवागढ़ (नंदपुर) का इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी

2 संतों की पुरातन साधना स्थली, प्रो. भागचन्द्र जैन 'भागेन्दु'

नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र

- डॉ. स्नेहरानी जैन

सागर टीकमगढ़ मार्ग पर अवस्थित बड़ागाँव के समीप नावई ग्राम के दक्षिणोत्तर में लावाजन्य बीहड़ जंगल में बोल्डरों के मध्य ऊँचाई पर कुछ गुफाएँ, शैलाश्रय, बावड़ियाँ टीले खोजने की जानकारी ब्र. जयकुमार 'निशांत' भैया ने दी। एक छोटे शैलाश्रय में कुछ शैलचित्र होने की बात कही, कुछ चित्र भी दिखलाए जिनका अवलोकन करना मुझे अति आवश्यक लगा कारण था छोटा सा शैलाश्रय और उसमें अंकित लाल रंग से बने कुछ संकेत जो काल से वहाँ पर हैं, जो पानी से धुलते नहीं ना ही रगड़ने पर मिटते हैं। उल्टा गीला होने पर दिखने में और भी स्पष्ट हो जाते हैं। उनका सर्वेक्षण करना मुझे अति आवश्यक लगा क्योंकि उनके लक्षण मुझे भीमबैठिका शैलाश्रयों का स्मरण करा गए ।

बिना कोई देरी किए भोजनोपरांत हम सागर सें एक कार लेकर दिन रहते नवागढ़ दिगंबर जैन मंदिर परिसर में पहुँच गए और चार पाँच मोटर बाईकों पर लगभग दस ग्यारह व्यक्ति सरपंच श्री रामनारायण यादव को साथ लेकर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ गए। किसी काल में लाखों वर्ष पूर्व यहाँ छोटे-छोटे ज्वालामुखी बुदबुदाकर लावा के छींटे फेकते रहे हैं जिनसे सतह पर यहाँ वहाँ बोल्डरों का जमाव दीखता है।

ग्राम नावई की जनसंख्या लगभग पन्द्रह सौ के आसपास होगी। सुनते हैं कि पिछ्ली सदी के मध्य पंडित गुलाबचंद जी'पुष्प' को एक टीले पर खड़े इमली के एक विशाल के नीचे जिन बिंबों केकुछ खंडित अवशेष पड़े दिखे जहाँ एक भक्त नारियल हाथ में रखें मनौती माँग रहा था । पूछने पर उन्हें जानकारी मिली कि उस स्थान की धूल भी मनोकामना पूर्ति हेतु सातिशयी है। 'पुष्प' जी ने किसी तरह उस इमली के पेड़ को हटवा कर वहाँ खुदाई करवाई तो आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। खंडित जिन बिंबों के अंबार के हटाए जाने धरती से दस फीट नीचे फर्शियों को जोड़कर बनाया एक बड़ा प्रस्तर फलक दिखा जिस पर बीच में कमल और चारों कोनों पर कीर्तिमुख बने हैं। उन प्रस्तर के हटाए जाने पर अरहनाथ भगवान की अति सुंदर खड्गासित कायोत्सर्गी सातिशयी प्रतिमा मिली जो उसी स्थान पर जमीन में दस फीट नीच भौंयरे

में ही प्राचीन दीवारों के ऊपर सुंदर मंदिर का निर्माण कर विराज दी गई है। प्राचीन विशाल जिन मंदिर के खंडित अवशेषों और खडिंत जिनबिंबों को देखकर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि अब से लगभग ९०० वर्ष पूर्व तक नावई एक बड़ी वसाहट वाला क्षेत्र था, जहाँ राजा जिनधर्मी तो था ही बाशिंदों में भी अनेक संपन्न श्रावक थे, श्रमजीवी किसान थे, गौपालक थे और निष्ठावान क्षत्रिय थे। कहा नहीं जा सकता कि भीषण ध्वंस किसके द्वारा ढाया गया जिसमें मंदिरों को लक्ष्य बनाया गया। फिर भी मात्र अरहनाथ और कुछेक जिनबिंबों को बचाने में पुण्यशाली भक्त सफल हुए। उनकी कोठरी की छत पर भारी शिलाऐं खंडित जिनबिंबों के अंबार का ढेर छोड़कर या तो जैन पलायन कर गए या फिर मर गए। इस प्रकार उस वैभव का अस्तित्व ही सो गया। वहाँ एक भी घर जैनों का नहीं रहा। ग्राम नावई से लगभग 3 किलोमीटर पर बड़े-बड़े बोल्डरों से बना एक शैलाश्रय है जिसमें आदिम शैलांकन है। उन्हीं का वर्णन यहाँ प्रस्तुत है। अ और ब शैलाश्रय की छत बनाती चट्टान हैं जो पूर्वी सिरे पर चेहरे के बंद होठों की सी छवि बनाती है।

अ और एक ही विशाल बोल्डर के हिस्से हैं जिनमें ब दीवार रहकर अ उस पर छत बनाते हुए ढाँकता है। स एक अलग बोल्डर है जिसकी चिकनाहट और चमक दर्शाते हैं कि उस पर लंबे काल से कोई बैठता लेटता आता रहा है। स एक शायिका है जिस पर एक व्यक्ति ही सो सकता है। शैलाश्रय बड़ा नहीं किंतु उसमें बने अवशेष अति विशेष हैं। कुछ अंकन खुदा हुआ सा तो है किंतु धूमिल होने से वहाँ आश्रय लेने वालों ने सफेद और लाल नैसर्गिक का उपयोग करके जो भी अंकन छोड़ा है वह उसे अति प्राचीन काल का होना संकेत करता है। शैलाश्रय के सामने की शिला पर पसरे बोल्डरों पर बैठने, लेटने हेतु काफी स्थान है जिस पर खुले आसमान के नीचे एक छोटा जनसमूह समा सकता होगा।

चित्र में शिलादर्शित होठ की आकृति के आसपास शैलांकन है जो उपरोक्त वर्णित ध्वंस के बहुत पूर्व किसी काल में यहाँ भीमबैठिका के आवासियों की शैली के रंगों के उपयोग की जानकारी रखने वाले आदिमानव की बसाहट दर्शाते हैं। भिन्नता मात्र इतनी है कि यह शैलाश्रय ज्वालामुखी की छुटपुट लावा फिंकान से निर्मित प्रतीत होता है भीमबैठिका की तरह समुद्र से उभरा नहीं है। यहाँ के चित्रांकन में इसीलिए

कुएँ, नदी, पशुपालन और जीवन की अहिंसक शैली और साधना स्थली दिखती है। उदर पूर्ति के लिए आखेट का सहारा नहीं लिया दीखता। हाँ किसी काल में यहाँ मानव की बसाहट दर्शाते हैं। सामान्य तौर पर यहाँ सारे अहिंसक चित्र ही दिखाई देते हैं। स्थिति के अनुसार इन्हें पाँच भागों में बाँटा जा सकता है।

1. प्रथम अंकन – पालतू पशु, गाय, भैंस खेती आवास आदि चित्र ठोड़ी के बाऐं नीचे बने लाल रंग के भिज़ि चित्र सिंधु घाटी के प्रतीकों वाला है, जिन्हें बनाने से पहले सफेद रंग का हल्का सा लेपन किया गया और फिर कुछ लेखन अंगुलियों से और कुछ बर्रू से लिखा गया लाल रंग में दिखाई देता है। इनमें एक पशु शांत खड़ा दिखता है अर्थात् आखेट नहीं वह एक पालतू पशु है। रंगों का उपयोग इसे भीमबैठिका युग के समकक्ष ले जाता है। इनमें कई सिंधु घाटी लिपि के अंकन पाषाण पर उकेरित है। पाषाण की सतह कठोर है और उस पर अंकन आदिम युगीन, सिंधु घाटी सज्यता युगीन और कुछ संभवतः ब्राह्मी में बाद का भी किया हुआ दिखता है ।

2. दूसरा अंकन – छत्रशिला के दाहिने किनारे काल्पनिक एक होंठ के जैसी आकृति के दाहिने कोने के ही नीचे की स्थिति पर दिखता है जो किसी समीपस्थ नदी अथवा नाले के बहाव का होना दर्शाता है साथ ही यही एक कुआँ अथवा बावड़ी है और ढलाने दर्शाता एक विशेष पर्वत भी है। यह लेखन कई बार किया हुआ थोड़ा-थोड़ा हटकर किया हुआ दीखता है। जे. एम. केनोअर वाला वूज़्ब स्केच भी यहाँ दिखलाई देता है इसमें होंठ का सा आकार बनाती शिला के ही क्षेत्र में वूज़्ब स्केच, नदी, बावड़ी, पर्वत आदि किसी विषेश प्रयोजन से अंकित किए होने चाहिए। बावड़ी और टीले के बीच में भी कुछ अंकित है जो अभी समझ में नहीं आ रहा है। इन शैलचित्रों को किसी एक काल का है, नहीं कहा जा सकता है। इसे भी सफेद लेपन के ऊपर लाल रंग से माँड़ा गया है। गौपालकों ने इसे खूब खरौंचा है अतएव कुछ छूट सा गया है किंतु फिर भी ऐच्छित चीजें दर्शाने में चित्रकार सफल है संभव है कि सैंधव अंकनों को बनाने से पूर्व के आवासीय अंकन हों किंतु आखेट किसी काल में नहीं दीखता। नेत्र का आभास देते हुए भिन्न-भिन्न अंकन भी हैं जो कदाचित आवासी को जागते रहने के लिए सावधान करते हैं।नेत्र भी कई बार में बने दिखलाई देते हैं जो कदाचित आसपास की बसाहट को दर्शाते हैं।

3. तीसरा खुदे हुए चित्रांकन – इसी से कुछ हटकर वहीं आगे छाई छत पर इस प्रकार का है कि उसमें सफेद रंग का भी उपयोग नहीं हुआ है। मात्र खुदे हुए अंकित कुछ घेरे है जो बावड़ी का सा अंदाज देते हैं अथवा कदाचित लावा फूटने के बाद का प्रथम अंकन दर्शाते हों, निश्चित कुछ कहा नहीं जा सकता। उनका अंकन प्राचीन होना संभव है जब ज्वालामुखी को कदाचित दैवी प्रकोप समझा जाता रहा हो।

4. चौथा अंकन आँखें – इन्हीं से कुछ हटकर चौथा अंकन यहाँ प्रदर्शित है जिसमें अनेक आंखें बनी हैं। कदाचित इसे 'टोरिया के चितेरे इसीलिए पुकारा जाता रहा है। इसमें एक अंकन सिंधु घाटी के अंकन से केवली के लोकपूरण से बहुत मिलती हुई चकरी है जो एकबार पाषाण पर नीरंग दिखती है और दो जगह रंगीन चकरी के रूप में भी ऐसा प्रतीत होता है कि पाषाणीय अंकन पूर्व का है और रंगों के उपयोग वाला बाद का। आदिमानव का कोई परिवार भीमबैठिका से भटककर कदाचित अलग छूटकर कुछ काल के लिए यहाँ बस गया हो ऐसी संभावना को रंगों और शैली को देखकर बनती है।

5. पाँचवा अंकन– चकरी का अंकन है जो नेत्र के अंकन से मेल खाता सा लगता है किंतु उससे हटकर भिन्न है। सैंधव संकेतों में इसे केवली का लोकपूरन कहा गया है। कदाचित उसे ही चितेरा भी कहा गया है। चित अर्थात् आत्मा को देखने वाला आत्मा । अर्थात् यहाँ कभी किसी केवली के साथ कई आत्मसाधकों ने आश्रय पाया होगा। सैंधव संकेत का दर्शन भी यहाँ देखने को मिला है। उसी काल में यहाँ खेती और आवास बनाना भी प्रारंभ किया होगा ऐसा संकेत भी इन शैलचित्रों से मिलता है। किंतु इसके अंदर मानव ने पशुपालन का विकास भी दर्शाया है। एक वृ़ज्ञ स्केच भी दिखता है जो कि सैंधव संकेत है जो उसके उच्चतम आध्यात्म की उद्घोषणा करते हैं। बसाहट के चित्रांकन कारण ये शैलचित्र विकासमय मानव का भी यहाँ बसना दर्शाते हैं। जिस हेतु छप्पर अंकनमय दिखला है। दो जगह सप्त पंखुड़ी पुष्प भी दिखता है। किंतु इन शैलांकनों में कोई मानव अंकित नहीं है। कोई कायोत्सर्गी भी नहीं दिखता। सिंधुघाटी के मछली और स्वस्तिक भी नहीं दिखते।

यहाँ से लगभग तीन किलोमीटर की दूरी पर महावीर युग के बाद कब जिनधर्मी आकर यहाँ बस गए इसका संकेत नहीं मिलता फिर भी ग्यारहवीं शती की प्रशारित

वाले खंडित जिनबिंबों का अंबार देखकर इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यहाँ एक विशाल जिनधर्मी बसाहट रही जिसने कई विशाल जिन मंदिरों का निर्माण कराया होगा और बिंब पधराए होंगे। जिस भी आततायी, धर्म और कला विरोधी ने यहाँ उत्पात मचाया उसने ना केवल जिन मंदिरों को बल्कि यहाँ समीप स्थित दो सूर्यमंदिरों को भी बेरहमी से नष्ट किया कि जिस ओर देखो उस और यहाँ टीले ही टीले दिखाई देते हैं। ऐसा लगता है कि कालांतर में खंडहरों पर टीले बन गए हैं। मात्र एक टीले की खुदाई ने ही खंडित जिनबिबों का अंबार दिखला दिया है।

मात्र 8-9 जिन बिंब ही अखंडित मिले हैं। इनमें से अतिविशेष अतिशयकारी खड़गासित अरहनाथ और पद्मासित अन्य चार पाँच बिंब, सभी अति मनोज्ञ हैं जो अब नवनिर्मित जिन मंदिर में स्थापित हैं। आसपास के क्षेत्रों में खंडित सूर्यमंदिर हिले हुए अब भी खड़े हैं। लगता है कि इन सब का विध्वंस हुआ था किंतु उसे सुधारनें की चेष्टा की गई जिसमें खंभे खंडित जिनमंदिरों के उपयोग कर लिए गए। किंतु बाद में एक पर आसमान से बिजली गिर गई। इसमें एक शिलालेख अपठ उड़िया ब्राह्मी में मिला है । ग्यारसपुर के खंडित जिन मंदिर की तरह यह अब भी अपनी कला दिखलाता अधूरा खड़ा है। नव निर्मित जिन मंदिर के समीप ही एक टीला है जो कदाचित वहाँ की प्राचीन बस्ती को दबाए हो। उसी के पीछे कुछ बड़े-बड़े बोल्डर हैं जिन पर एक पुरुष बिंब रखा है। उसे वहाँ के ग्रामीण आज भी पूजते हैं। खिचीं, तनी मूछों वाला रोबीला, शासक जो जिन भक्त था। लगता है कि माल्यधर बना वह जिन द्वार पर द्वारपाल बना खड़ा है । वो मजबूर जिनभक्त, विधर्मी आक्रमकों से जूझकर भी संभवतः हार गया और मंदिरों के साथ-साथ अपने राज्य को विनाश से बचा न सका । सूर्यमंदिर का यह शिलालेख कदाचित् कुछ और भी बतला सके।

प्राचीन जैन तीर्थ नंदपुर शिलालेखों के दर्पण में

- हरिविष्णु अवस्थी, टीकमगढ़

बुन्देलखण्ड के अतिप्राचीन ओरछा राज्य के विभिन्न नगरों एवं ग्रामों में उपलब्ध अभिलेखों की महत्त्वपूर्ण जानकारी मेरे पास वर्षों से सुरक्षित थी। इनमें से कुछ शिलालेखों का प्रकाशन समय-समय पर स्थानीय दैनिक समाचार पत्र ओरछा टाइम्स के माध्यम से होता रहा।

कुछ वर्ष पूर्व अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय के इतिहास विभागाध्यक्ष प्रो. डॉ. बी. एल. भादानी ओरछा नगर की वास्तु संबंधी प्राचीन ऐतिहासिक जानकारी की तलाश में मेरी कुटिया पर पधारे। उसी समय ओरछा नगर के शिलालेखों के साथ ही साथ प्राचीन ओरछा राज्य (वर्तमान टीकमगढ़ जिला, मध्यप्रदेश) के शिलालेखों का संकलन भी उन्हें दिखाया। डॉ. भादानी जी ने उनका प्रकाशन करने हेतु मुझे प्रोत्साहित किया तथा उनके प्रकाशन में यथा-योग्य सहयोग प्रदान करने का आश्वासन भी दिया।

हमारे संकलन में जैन तीर्थ अहार के मात्र दो शिलालेख ही थे। जबकि मैंने स्वयं वहाँ अनेक मूर्तियों की पाद पीठिका पर अंकित शिलालेख देखे थे। अहार क्षेत्र के शिलालेखों संबंधी एक पुस्तक मुझे अहार क्षेत्र के मंत्री पं. जय कुमार शास्त्री पठा वालों की कृपा से प्राप्त हुई।

इस पुस्तक में अहार क्षेत्र में उपलब्ध सभी छोटे-बड़े शिलालेखों का विवरण दिया गया है। भगवान् शांतिनाथ की भव्य एवं विशाल प्रतिमा की पाद-पीठिका पर मार्गशीर्ष सुदि 3 शुक्रवार संवत् 1237 का एक लेख अंकित है। इस शिलालेख में देवपाल के पुत्र रत्नपाल द्वारा मूर्ति की प्रतिष्ठा के उल्लेख के साथ ही वाणपुरे एवं नंदपुरे नामक स्थानों में भी पूर्व में मूर्ति प्रतिष्ठा का उल्लेख है। इनमें वाणपुरे नगर तो वर्तमान समय में टीकमगढ़ नगर से मात्र 10 कि.मी. दूर स्थित है, किन्तु नंदपुरे स्थान की पड़ताल अब तक नहीं हो सकी थी। यहाँ के एक शिला में महिषणपुरे का भी उल्लेख है। इसकी भी पड़ताल अब तक नहीं हो सकी। भगवान् शांतिनाथ के पाद पीठ पर 9 पंक्तियों में अंकित शिलालेख की चौथी पंक्ति -

दिष्ट्या नंदपुरे परः परनरानंद प्रद श्रीमता येन श्रीमदनेस सा (कमल पुष्प) गरपुरे तज्जन्मनो निर्ज़्मिमे सोयं श्रेष्ठ वरिष्ठ गल्हण इति श्री रल्हणज़्यादभूत्

कई महीनों के परिश्रम के फलस्वरूप सन् 2014 में मेरी शिलालेख संबंधी पुस्तक बुन्देलखण्ड के शिलालेख प्रथम भाग ''औरछा राज्य'' प्रकाशित हुई। अनेक विज्ञजनों ने बुंदेलखण्ड की पूर्व देशी रियासतों से संबंधित ऐसी ही पुस्तक की रचना का परामर्श एवं आशीर्वाद दिया। प्रोत्साहित होकर मैंने वर्तमान जिला छतरपुर (मध्यप्रदेश) के शिलालेखों पर कार्य करने का निर्णय लिया। ज्ञातव्य है कि वर्तमान जिला छतरपुर में बुंदेलखण्ड के पूर्व देशी राज्य विजावर, लुगासी, आलीपुरा, छतरपुर, आदि अनेक राज्य शामिल हैं।

शिलालेख संबंधी जानकारी जुटाने का अभियान मैंने छतरपुर जिले में नौगाँव के निकट स्थित राजकीय धुबेला ज़्यूजियम से आरंभ किया। इसमें प्रदर्शित मूर्तियों में अंकित शिलालेखों को नोट किया। इनमें चार-पाँच शिलालेख जैनधर्म की पाद पीठिका पर अंकित हैं। प्राप्त सूचना के अनुसार इन मूर्तियों को जिस ग्राम मऊ (सहानिया) में धुबेला संग्रहालय स्थापित है, उसी संग्रहालय में लाया गया था।

धुबेला संग्रहालय के शिलालेखों का विवरण लेने के पश्चात् मैने विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल खजुराहो का रुख किया। खजुराहो के अधिकांश शिलालेख प्रकाशित हैं। मेरा विचार था कि शिलालेखों के फोटोग्राफ भी यदि उनके विवरण के साथ संलग्न रहेंगे तो पाठकों को उनसे अधिक संतुष्टि प्राप्त होगी। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु ही खजुराहो जाना हुआ।

खजुराहो के वैष्णव एवं शैव्य मंदिरों के समूह के शिलालेख के फोटोग्राफ लेकर पुरातत्त्व संग्रहालयों का अवलोकन करने पश्चात् जैन मंदिर समूह की ओर रुख किया, जैन मंदिर समूह की अनेक मूर्तियों की पाद पीठिका पर लेख अंकित हैं। दुर्भाग्यवश कैमरा की बैटरी डिस्चार्ज हो जाने कारण उनके चित्र तो न ले सका, किंतु उन सभी शिलालेखों के विवरण नोट कर लिए। इसी परिसर में साहू शांतिप्रसाद जैन कला संग्रहालय स्थापित है, जो अपनी भव्यता में अद्वितीय है।

अपने गृहनगर वापिस लौटने पर शिलालेखों को व्यवस्थित कर छतरपुर जिले के अन्य स्थानों पर उपलब्ध शिलालेखों के सम्बन्ध में अपने परम मित्र, बुन्देलखण्ड

इतिहास के अधिकारी विद्वान् डॉ. काशी प्रसाद जी त्रिपाठी से चर्चा करने हेतु उनके यहाँ गया। त्रिपाठी जी की बैठक में टेबिल पर संस्कार सागर मासिक पत्रिका का माह जून 2015 ई. का अंक रखा था। जब तक वे बैठक में आते मैं पत्रिका के पृष्ठ पलटने लगा।

पत्रिका में डॉ. त्रिपाठी का एक लेख श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ नंदपुर देखकर उसे आद्योपांत पढ़ गया। वहाँ के शिलालेखों से उसकी प्राचीनता की अनुभूति हुई। इसके पश्चात् इस स्थान की प्राचीनता आदि के संबंध में त्रिपाठी जी से गंभीर चर्चा हुई।

अहार क्षेत्र के एक शिलालेख में नंदपुर तथा एक शिलालेख में महिषाणपुर नामों के उल्लेख होने का सहज ही मुझे स्मरण हो आया। डॉ. त्रिपाठी के अकाट्य तर्क ने मुझे प्रभावित किया। उन्हें सुनकर नवागढ़ नंदपुर नामक स्थान को स्वयं अपनी दृष्टि से देखने की इच्छा बलवती हो गई। डॉ. त्रिपाठी जी से जब मैंने अपनी उस स्थान को देखने की इच्छा व्यक्त की तो उन्होंने मुझे ब्र.जयकुमार जी जैन 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्य से सज़्पर्क करने हेतु उनका दूरभाष नज़्बर नोट कराया। निशान्त जी से सज़्पर्क किया। श्री निशान्त जी ने उस स्थान की भौगोलिक स्थिति से अवगत कराया। मैंने टीकमगढ़ से दो पहिया वाहन से नवागढ़ जाने का निश्चय किया। श्री निशांत जी ने वहाँ के व्यवस्थापक को सहयोग करने हेतु पत्र लिख दिया।

अपने एक युवा मित्र के साथ मोटर साइकिल से नवागढ़ पहुँचा उस छोटे से ग्राम में प्राचीन विशाल जैन तीर्थ के दर्शन कर में स्तज़्ध रह गया। व्यवस्थापक के सहयोग से एक-एक खण्डित मूर्ति एवं स्तंभों को देखा। शिलालेखों का विवरण निज़्न अनुसार है।

यहाँ कुल 21 शिलालेख देखने को मिले जिनमें 8-10 शिलालेख ही पठनीय है यथा-

1- भगवान् महावीर की खण्डित प्रतिमा पर सं. 1195 का लेख अंकित है। इसमें महिचंद पत्नी तिसुदि पुत्र देल्हण पुत्र वधू वील्हा के नामों का उल्लेख है।

स (संवत्) 1195 गोला पूर्वान्वये साहु (शाह) महिचंदभार्या तिसुदि तत्सुत सावु (शाह) देल्हणवधु वील्हा मामी सल्हा ऐते प्रणमंति ।।

2- एक अलंकृत स्तंभ पर संवत् अंकित नहीं है। इस पर साहु (शाह) महिचंद पुत्र साहु देल्हण का नाम उल्लेख है।

साहु (शाह) महिचन्द पुत्र साहु देल्हण केन (तेन) कारीत्।

शाह महिचन्द्र के पुत्र देल्हण द्वारा यह निर्माण कार्य कराया गया।

3- एक मानस्तंभ पर स0 1203 अंकित है। इसमें साहु (शाह) रासल सुत लुल नामों का उल्लेख है।

1 संवतु (संवत्) 1203 अषाढ बदि 10 गोला

2. पूर्व्व अन्वे साहु (साहू) रासल सुत लुल

4- द्वितीय मानस्तंभ पर भी सं.1203 अंकित है। इसमें रामचंद्र सुत बालु का उल्लेख है।

1- संवत् 1203असढ़ (असाढ़) वदि 10 गोलापूर्व अ-

2- न्वे साहु (साह) रामचंद्र सुत बालु।

प्रशस्ति के आलोक में संवत् 1203 में गोलापूर्व अन्वय के साह रामचंद्र के पुत्र बालु ने इसे बनवाया और प्रतिष्ठित कराया था।

5- तृतीय मानस्तंभ पर भी सं.1203 अंकित है। इसमें रासल पुत्र शांति का उल्लेख है।

1. संमतु (संवत) 1203 अषाढ वदि 10 बुदो (बुधौ) गो

2. लापूर्व अन्वे साबु (साह) रासल सुत सांति (शांति) ।

इस प्रशस्ति के आलोक में इस मानस्तज़्भ की प्रतिष्ठा संवत् 1203 में गोलापूर्व शाह रासल के पुत्र शान्ति ने कराई ज्ञात होती है।

6- एक चौथा स्तज़्भ भी है। इस पर सं0 1203 ---- अंकित है। इसके नाम अपठनीय है।

1. स. (संवत्)1203 (अषाढ वदि) दि.10 गो. (गोलापूर्व)

इस प्रशस्ति से ज्ञात होता है इस मानस्तज़्भ का निर्माता भी गोलापूर्वान्वयी रहा है। इस प्रकार चारों मानस्तज़्भ गोलापूर्व जैन समाज की भक्ति और श्रद्धा के प्रतीक हैं।

7- पूर्णतः खण्डित एक मूर्ति की पादपीठिका पर संवत् अंकित नहीं है। संभव है वह मूर्ति के खण्डित भाग में रहा हो। इसमें साहू (शाह) वील्हा तस्यसुत लषम् का उल्लेख है।

1. सावु (साहु) वील्हा तस्य सुत लषम्।

2. अंबिका प्रलामति (प्रणमति) ।

शाह वील्हा के पुत्र लषम् अंबिका के चरण स्थापित कर उसे वह प्रणाम करता है।

8- भगवान् शांतिनाथ की खण्डित मूर्ति की पाद पीठिका पर स. 1202 अंकित है। इसके नीचे बाई ओर 2 पंक्तियों में पहली पंक्ति में गोला पूर्वान्वय तथा उसके नीचे सलदेसल अंकित है। उसी के सामने दाहिनी ओर दो पंक्तियों में पहली पंक्ति में साहू (शाह) केविनस सुतस्य रासल अंकित है।

दायी ओर	बाई ओर
संवतु 1202 गोला	सावु (साहू) केविनस सु
(पूव्व) अन्वे भ्रातासलदेसल	तस्य रासल

इन शिलालेखों के कुछ नाम ऐसे लगे जैसे इसके पहले मेरे द्वारा देखे गए अहार धुबेला एवं खजुराहो के शिलालेखों में भी इनसे मिलते-जुलते नाम हों ।

मंदिर के निकट स्थित एक छोटी सी पहाड़ी पर एक सर्वांग सुन्दर राजसी वेशभूषा में एक मूर्ति देखने को मिली। इस मूर्ति में उत्कीर्ण राजसी व्यक्ति द्वारा दाढी मूंछ रखी गई है। मूर्ति में ऊपर की ओर एक छोटे आकार की जैन प्रतिमा बनी हुई थी। बहुत देर तक ध्यानपूर्वक देखता रहा। दिमाग को इधर-उधर घुमाया तो याद आया की इसी तरह की दाढी-मूंछ वाली प्रतिमा मुझे अहार और खजुराहो में भी देखने को मिली थी।

इतनी सुन्दर प्रतिमा को मंदिर में स्थान ज़्यों नहीं मिला? इस प्रश्न उठ खड़ा हुआ सोचता रहा । एक हल (सही हो या गलत) यह समझ में आया कि यह मूर्ति की वेशभूषा से तो लगा मानो यही यहाँ प्राचीन जैन तीर्थ स्थल के निर्माता श्रेष्ठी हो ।

इसके पश्चात् चित्रित शैलाश्रय और उसमें बने रंगीन रेखांकनों को देखकर

अवाक् रह गया। किसी चित्रित शैलाश्रय को देखने का यह मेरा प्रथम अवसर था। इतिहास का छात्र होने के नाते शैलाश्रयों की प्राचीनता के संबंध में थोड़ा-बहुत पढ़ा था। इस शैलाश्रय को देख कर इस स्थान की प्राचीनता के संबंध में अन्य किसी साक्ष्य की आवश्यकता शेष ही नहीं रह जाती।

बातों-बातों में पथ प्रदर्शक से भैंसवारी नाम के गाँव का नाम सुनने को मिला। माथा ठनका कहीं अहार के शिलालेख में अंकित महिषणपुर ही तो नाम बदलकर भैसवारी (भैसावारी-भैसावानी) तो नहीं हो गया? सोचा जब वसुहाटिका और मदनेशसागरपुर के स्थान पर अहार नाम हो सकता है तो महिषणपुर का भैसवारी और नंदपुर का नवागढ़ ज़्यों नहीं हो सकता। इसी तरह की विचारों में डूबता उतराता टीकमगढ़ की ओर वापिस लौट पड़ा।

दूसरे दिन नोट बुक उठाकर धुबेला एवं खजुराहो के शिलालेखों को प्रथम पृथक पृष्ठों पर नोट किया। अहार क्षेत्र के शिलालेख पुस्तक खोलकर सामने रखी। नवागढ़ नंदपुर के शिलालेखों में 1-महिचंद उसकी पत्नी 2-तिसुदि उसके पुत्र 3-देहल्ण तथा पुत्र 4-बील्हा) (महिचंद एवं पुत्र देल्हण के नामकी पुनरावृज़ि एक शिला लेख में और हुई है) 5-रासल 6-पुत्र लुल 7- रामचंद 8-सुत बालु 9-सांति रासल 10 वील्हा 11 पुत्र लषम् 12 केविनस 13 सलदेसल 14 पुत्र रासल कुल 14 नामों का उल्लेख है।

खजुराहो के संवत् 1215 के संभवनाथ भगवान् के शिलालेख में महिचंद नाम उल्लेख देखकर नवागढ़ के महिचंद का स्मरण हो आया। इस शिलालेख में महिचंद के अतिरिक्त उसके अन्य भाईयों-महागण, सिरीचंद, जिनचंद एवं उदयचंद के नामों का भी उल्लेख है। इस प्रकार संवत् 1195 में भगवान् महावीर की नवागढ़ (नंदपुर) मूर्ति को प्रतिष्ठा कराने वाले महिचंद पकड़ में आये।

4 ओ।। संवत् 1215 माघसुदि 5 श्रीमन्मदनर्ज़्मदेव प्रवर्द्धमानविजयराज्ये ।। ग्रहपतिवंसे (षे) श्रेष्ठिदेदू तत्पुत्रपाहिल्लः । पाहिल्लांगरुसाधुसाल्हे (ते) नेद (य) प्रतिमाकारितेति ।। ।। तत्पुत्राः महागण । महीचन्द्र । सि (रि) चन्द । जिनचन्द उदयचन्द प्रभशित सज़्भवनाथ प्रणमति नित्यं ।। मंग (ल) महाश्री ( ) ।। रूपकार रामदेव महाश्री ( ) ।।

महिचंद के पूर्व वर्णित एक भाई जिनचंद द्वारा संवत् 1209 में धुबेला में भगवान् शांतिनाथ की तथा संवत् 1215 में खजुराहो में भी मूर्ति प्रतिष्ठा कराने का उल्लेख शिलालेखों में देखने को मिला। महिचंद के ही एक भाई उदयचंद ने संवत् 1203 में धुबेला में भगवान् शांतिनाथ की प्रतिष्ठा कराई और एक मूर्ति की प्रतिष्ठा संवत् 1215 में खजुराहो में तथा संवत् 1237 में अहार में शांतिनाथ की प्रतिष्ठा कराई। ज्ञातव्य है उदयचंद महिचंद के भाइयों में सबसे छोटा था। महिचंद एवं उसके भाई जिनचंद तथा उदयचंद द्वारा नवागढ, धुबेला, खजुराहो एवं अहार आदि विभिन्न स्थानों में मूर्तियों की प्रतिष्ठा कराया जाना उस परिवार की धन सज़्पन्नता तथा उस परिवार के वैभव का प्रतीक है।

यह लेख शान्तिनाथ की काले पाषाण की खड्गासन प्रतिमा (160×56 सेमी संग्रहालय क्रमांक 24) के पादपीठ पर उत्कीर्ण है।

1 सिद्ध गोलापूर्व्वान्वये साधु स्वयंभूधर्ज़्मवत्सल तत्सुतौ स्वामिनामा च देवस्वामिगुणान्वित ।। 1 देवस्वामि

2 सुतौ श्रेष्ठौ सु (शु) भचंद्रोदयचंद्रक (कौ) । कारित च जगन्नाथं शान्तिनाथं जिनोज़्मः।। 2 धर्ज़्मासे (शे) पि 14। 3 तथा दुज़्बरान्वये साधुजिनचंद्रततपुत्रहरिश्च (न्द्र) तत्सुतलक्ष्मीधर श्री सा (शा)-न्तिनाथ प्रणमति सरा. (दा) ।

4. लक्ष्मीधरस्य धर्ज़्म संधिज श्रीमन्मदनवर्ज़्मदेव-राज्ये संवत् 1203 फा0 सुदि 6 सोमे। नवागढ़ के एक शिलालेख में वील्हा पुत्र लषम् का नामोल्लेख है। ज्ञातव्य है कि लषम के नाम का उल्लेख धुबेला में संवत् 1199 में प्रतिष्ठित भगवान् नेमिनाथ की पाद पीठिका पर भी है।

यह लेख बाईसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की काले पाषाण की प्रतिमा (संग्रहालय क्रमांक 7) के पाद पीठ पर उत्कीर्ण है। प्रतिमा मस्तक विहीन है तथा चार टुकड़ों में खण्डित है। लेख की भाषा संस्कृत और लिपि नागरी है।

1. गोल्लापूर्व्वकुले जातः साधुर्व्वा (ले) (गुणा.) न्वितः तस्य देवकरो पुत्र पद्मावतीप्रियाप्रियः।। (1) तयोर्जातो सुतौ सि (शि)-

2. स्तौ (टौ) सी (शी) लव्रतविभूशितौ। धर्ज़्मा-चाररतौं नित्यं ज़्यातौ म(ल्ह)णजल्ह(णौ)।। (2) मल्हणस्य व (धूरासीत्स) त्यसी (श) ला पतिव्रता।

श्रेष्ठवीवीतनूजा च प्रबुद्धा वि (वि) नयान्विता ।। (3) लषम (क्ष्म) णाद्यास्तया जाताः पुत्राः गुण (गणान्विताः)

.........द्या जिनचरणाराधनोद्यता । (4) कारितश्च जगन्नाथ (नेमि) नाथो भवातकः । त्रै (लोज़्यश) रणं देवो जगन्मगलकारकः ।। (5) सज़्वतु (त्) 1199 वैशाख सुदि 2 रवौ रो (हिण्याम्)

खजुराहो के संवत् 1215 के एक शिलालेख में महिचंद भाईयों के पूर्वजों के नामों का उल्लेख इस प्रकार है- देदू के पुत्र पाहिल, पाहिल के पुत्र साल्हे और साल्हे के पाँच पुत्र महागण, महीचंद, सिरीचंद, जिनचंद एवं उदयचंद के नामों का उल्लेख है। इस विवरण से स्पष्ट होता है महीचंद के पूर्वज, धर्मपरायण, धन वैभव से एवं तत्कालीन शासकों के विश्वास पात्र रहे। उपर्युक्त नवागढ़, धुबेला खजुराहो एवं अहार के शिलालेखों में आये नाम एक दूसरे से पूर्णतः समबद्ध है। स्पष्ट है कि महीचंद ने अपने भाइयों की भाँति ही खजुराहो एवं प्राचीन नंदपुर (वर्तमान नवागढ़) में प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा कराई थी। धुबेला, खजुराहो, अहार एवं वर्तमान नवागढ़ पूर्व नाम में नंदपुर के लगभग केन्द्र में अहार क्षेत्र है जहाँ से धुबेला, नवागढ (प्राचीन नंदपुर) की दूरी लगभग बराबर है। खजुराहो इन दोनों स्थानों की तुलना में अहार से थोड़ा दूर पड़ता है।

उपर्युक्त वर्णित स्थानों एवं वहाँ उपलज़्ध शिलालेखों में प्राप्त विवरणों का अध्ययन करने पर निष्कर्षतः मैं यह दावे के साथ कह सकता हूँ कि वर्तमान नवागढ़ है पूर्व का नंदपुर ही आवश्यक नहीं कि पाठक मेरी मान्यता को स्वीकारें ही।

श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़, नंदपुर

– डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, टीकमगढ़

वर्तमान का नावई ग्राम क्षेत्र, प्राचीन काल का नंदपुर, नवागढ़ चंदेल राजा मदन वर्मा के समय चंदेरी और राजस्थान तथा अन्य गैर क्षेत्रीय दलों से आने-जाने वाले दिगज़्बर जैन व्यापारियों, व्यावसायियों के मार्ग का एक पड़ाव स्थल नगर था। जो संलग्न पहाड़ियों, टोरियों पर बसा हुआ था। परन्तु अब पहाड़ियों पर बस्ती तो दूर की बात है, उसके भग्नावशेष सभी कुछ भूमिगत जमींदोज हो चुके हैं। पहाड़ियों की पश्चिमोज़र तलहटी से संलग्न व्यपारियों के टाँडों के आने-जाने का मार्ग था, जिसके मोड़ के पश्चिमी भाग के बड़े मैदान में, टांडों, का पड़ाव डलता था। कुछ दूरी पर चंदेल कालीन प्राचीन बड़ी-बड़ी ईटों की एक बावड़ी है। जिसके जल का प्रयोग व्यापारी, पड़ाव वाले एवं अन्य सामान्य यात्री करते रहे होंगे। बावड़ी के पास ही देवालय के अवशेष मात्र हैं। शायद यहाँ यात्री स्नान के पश्चात् देवदर्शन और ध्यान पूजा पाठ किया करते होंगे।

चंदेल शासन काल से पूर्व, बुन्देलखण्ड परिक्षेत्र महोवा से देवगढ़ तक बेतवा, धसान, केन, नदियों के मध्य वाला एक चारागाही, वनाच्छादित, अविकसित पहाड़ी, टौरिया, ऊँचा-नीचा, जलविहीन रॉकड़, लगभग निर्जन सा भूभाग था जिसे विन्ध्याटवी कहा जाता था। जहाँ केवल कुछ मवेशी चराने वाले पशुपालक जातीय लोग एवं वनवासी ऊँचे टोरिया स्थलों पर अस्थाई तौर पर रह कर पशु चराया करते थे जो नालों एवं नदियों के पास, जहाँ पानी रहता था, वहीं रहते थे और पानी सूखा तो दूसरे डबरों पर नालों के पास जहाँ पानी मिलता वहाँ पहुँच जाते थे। इस प्रकार लोगों का घुमकड़ी जीवन बीतता रहता था।

बुन्देलखंड के दक्षिण-पूर्वी क्षेत्र की नदियाँ पहाड़ी पठारी उथली रही है, जिनमें से क्षेत्र का वर्षाती धरातलीय जल तेजी से प्रवाहित होकर क्षेत्र से बाहर चला जाता था। क्षेत्र का पानी क्षेत्र में संग्रह कर लेने की कोई व्यवस्था ही नहीं थी। इस विशाल अविकसित भूभाग के विकास हेतु चंदेल नरेशों ने क्षेत्र का पानी क्षेत्र में रोकने के लिये तालाबों के निर्माण की अनूठी योजना प्रारंभ की थी। राजा धंगदेव (950-1002ई.) ने अपने खजुराहो मंदिर शिलालेख वि. स. 1011 (सन् 954 ई.) में निर्देषित किया था

Attention was paid to irrigation work for the fecility of cultivation. The Khajuraho inscription of v.s. 1011 for refers is the construction of embankrment to divert the course of rivers (v.26) evidently for the benefit of the peasentry concemed, expression like Nala (canal) puskarni (tanks) and Bhiti (embankment) are met within different chandelia records. These were usually located near the cultiable plotes of lands, apparently to supply water to the fields.

The early rulars of Khajuraho by Dr. S. K. Mitra p. 163 published 1950 calcutta.

इसके साथ ही मिट्टी, पत्थर के तालाब पूरे दक्षिणी पूर्वी बुन्देलखण्ड के पहाड़ी टौरियाऊ नदियों नालों पर निर्मित किये गये। क्षेत्र का पानी क्षेत्र में थमा तो लोगों का घुमन्तू जीवन थम गया। मदनवर्मा चंदेल राजा के शासन काल (1129-1163) ई. के समय मदनपुर ग्राम बसाया गया तथा वहीं विशाल मदनसागर तालाब एवं सुन्दर बैठक बनवायी। मदनसागर महोबा, मदनसागर जतारा, ग्वालसागर बल्देवगढ़ (बाँध) एवं मदनसागर अहार के बड़े-बड़े तालाब बनें। वर्तमान अहार का तालाब मदनसागर बना कर वहाँ बस्ती बसाई गई थी, उसका नाम मदनसागरपुरम रखा था। तालाब बनें, तो बहने वाला पानी तालाबों में इकट्ठा हुआ। तालाबों के बाँधों पर बस्ती बसी, बाँधों के पीछे बहारुओं में धान, बराई (गन्ना) बोया जाने लगा, जिसे पत्थर के कोल्हुओं से पेर कर गुड़ बनाया जाने लगा। तालाबों के बाजुओं से पाँखी से संलग्न टरेटे बने जिससे कृषि के क्षेत्र में क्रांति आई। चावल, गुड़, घी, तिलहन, चिरौंजी, शहद, महुआ, गुली के खरीददार क्रेता श्रेष्ठ साहूकार, सेठ, व्यापारी अपने अपने टाँड़ों (लहू, बैलों, पाड़ों के समूह) पर दिशावी वस्तुयें लाद कर अपने नौकरों, कारकूनों के साथ यहाँ आने लगे। यहाँ अपना सामान बेचने लगे, यहाँ का सामान क्रय कर अपने-अपने क्षेत्रों को ले जाने लगे। व्यापारी सेठों ने यहाँ अपने कारोबारी रखे और दुकाने खोली। जिस कारण पाड़ाशाह सेठ, सेठ रत्नपाल, देवपाल एवं अन्य बंजारा (व्यापार बंजी करने वाले) सेठों ने अपने पड़ाव स्थलों पर दिगज़्बर चैत्यालय (मंदिर) बनवाये तथा अन्य दिगज़्बर कारकूनों को मंदिर निर्माण हेतु मदद प्रदान करते थे। तभी से यहाँ दिगज़्बर जैन स्थापित हुए, चाहे वह गोलापूर्व हो अथवा परवार। हाँ, प्रारज़्भ में बड़े-बड़े श्रेष्ठियों ने अपने-अपने पड़ाव स्थलों पर भौंयरा मंदिरों एवं चैत्यालयों का निर्माण करवाया था ताकि कोई प्रतिमाओं को खंडित न कर सके।

मदनवर्मा चंदेल राजा के समय नारायणपुर एक बड़ा नगर था। जिसे अग्रहार को अहार कहा जाता था। जहाँ के लड़ा नाले पर लड़िया लोग रहा करते थे जो दिगम्बर जैन तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बनाया करते थे। यहाँ की पहाड़ी में. मूर्तियाँ गढ़ने वाला पत्थर निकलता था। श्री शांतिनाथ की 21 फुट ऊँची प्रतिमा पापट ने सन् 1130 में बनवाई थी। यहीं रल्हण देल्हण भी रहते थे। जिन्होंने कई प्रतिमाओं का निर्माण कराया था। जिनमें से कई प्रतिमाएँ नंदपुर (वर्तमान नावई) में सन् 1946 में प्रतिष्ठित करायी थी। इनमें से अतिक्रमण काल में भगवान् अरनाथ की प्रतिमा श्रद्धालुओं ने संकीर्ण भौंयरे में सुरक्षित कर दी। देश को आताताइयों ने अत्यंत क्रूरता से खंडित कर दिया, जो वर्तमान में संग्रहालय में ऐतिहासिक धरोहर के रूप में सुरक्षित हैं। नवागढ़ (नावई) चैत्यालय श्रेष्ठि (सेठ) रत्नपाल ने बनवाया था, जो चंदेरी से आने-जाने वाले व्यापारिक मार्ग पर सोजना से उत्तर पूर्व चार मील की दूरी पर एक घूमदार पहाड़ी मोड़ से संलग्न पश्चिमी पार्श्व पर स्थित रहा है। रत्नपाल के भाई देवपाल ने बानपुर में सहस्रकूट चैत्यालय बनवाया था।

नवागढ़ का उद्भव– आताताइयों ने नंदपुर नगर को पूर्णतः ध्वस्त कर दिया, जिनालयों को जमींदोज करके जगह-जगह शिलाखण्डों के ढेर बना दिये । प्रतिष्ठाचार्य पं. गुलाबचंद्र 'पुष्प' ककरवाहा ग्रामवासी के पुण्ययोग से भगवान् अरनाथ का भौंयरा सभी के समक्ष उद्घाटित हुआ। उस टीले से 100 से अधिक विशाल प्रतिमाओं के साथ सिर, धड़, आसन-शीर्षभाग प्राप्त हुए जिनसे प्रतीत होता है इतनी विशाल प्रतिमाओं का जिनालय भी अत्यंत भव्य एवं विशाल रहा होगा। वहाँ के श्रेष्ठी एवं अन्य वासी भी समृद्धशाली रहे होंगे। जैन शासक की मूर्ति से ज्ञात होता है नंदपुर (नवागढ़) समृद्धशाली, ऐतिहासिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने वाली जैनशासक की राजधानी रही होगी। जैन साधक (उपाध्याय) की मूर्ति तथा मानस्तम्भ पर भी जैन साधकों (उपाध्याय, आचार्य) की मूर्तियों का मिलना यह सिद्ध करता है कि यहाँ की पहाड़ियों में जैन श्रमण साधना करके संयमाचरण की परिपालना करते थे, यह पहाड़ियाँ जैन साधकों की साधना स्थली रही होगी यह खोज का विषय है। आसपास की पहाड़ियों में न जाने कितने रहस्य छिपे हैं, यहाँ के टीलों में संस्कृति ऐतिहासिक समृद्धता के विशेष शिल्प प्राप्त होंगे। शासन को इनका खनन कराकर भारतीय पुरा सम्पदा को सुरक्षित कराना चाहिए।

नंदपुर (नावई) में देखें– नंदपुर (नावई) अरनाथजी का चैत्यालय (भौंयरा) मंदिर, मदनवर्मा चंदेल (वि.स. 1186-1220) तदनुसार 1129-1163 ई. के समय 1145-46 ई. में स्थापित हुआ था। अनेक खंडित प्रतिमाओं पर संवत् 1202-1203 अंकित है। प्रतिमाओं पर चिह्न भी उत्कीर्ण हैं।

नवागढ़ मंदिर के अंदर एक विशाल संग्रहालय है जिसमें श्री आदिनाथजी, श्री शांतिनाथजी, पार्श्वनाथजी की विशाल खंडित प्रतिमायें दर्शनीय हैं। इस संग्रहालय में 1145-1146 ई. के प्राचीन चैत्यालय के अवशेष भी दर्शनीय हैं । ऐतिहासिक तौर पर नंदपुर चैत्यालय अहार के चैत्यालय से प्राचीन है। जैसे नंदपुर की प्रतिमाएँ1145-46 ई. की हैं जो देल्हण, गल्हण ने बनवाई थी। यहाँ संग्रहालय में रखी अनेक प्रतिमाओं और मूर्तिखंडों पर गोलापूरब शब्द अंकित हैं, तात्पर्य कि नंदपुर (नवागढ़) में गोलापूरब जैन अनुयायी अधिसंख्य थे जो यहाँ के श्रेष्ठी व्यापारी थे। राष्ट्रकूट क्षेत्र से यहाँ चंदेल राज्य में व्यापारिक निवेश हेतु आमंत्रित किये गये हों अथवा श्रेष्ठियों के सह कारिंदे कारोबारी रहे हों जो कालान्तर यहीं बस गये हो।

नवागढ़ ग्राम के अन्दर बस्ती में एक देवी मंदिर के पास चबूतरे पर प्राचीन खंडित प्रतिमाओं का संग्रह हैं। यहीं ग्राम में एक प्राचीन चंदेलकालीन बावड़ी है। नावई में खेतों में जुताई करते समय खंडित मूर्तियाँ प्राप्त होती हैं। मकानों की नींव खोदते समय भी खंडित मूर्तियाँ मिल जाती हैं। तात्पर्य कि पुरातत्त्व दृष्टिकोण से यहाँ खुदाई खोज की जाय तो यहाँ का पुरावैभव जाना समझा जा सकता है। वैसे यहाँ संग्रहालय में रखी 113 प्रतिमाओं का रजिस्ट्रेशन हो चुका है। शेष का रजिस्ट्रेशन होना बाकी है।

नावई (नंदपुर) की प्राचीनता इससे भी सिद्ध होती है कि पास में उम्मरगढ़ (ऊमरी) में प्राचीन सूर्य मंदिर है। यहाँ समीप के प्राचीन ग्राम हैं जैसे सोजना, मैनवार, नैकोरा। मदनपुर चंदेलशासन काल का मुख्य, प्रशासनिक मुख्यालय था जो नंदपुर (नावई) के दक्षिण में हैं। मदनपुर के उत्तर में एक नैकोरा ग्राम है जो एक ऊँची टोरिया पर है । यहाँ एक प्राचीन गढ़ी है। यह नैकोरा ग्राम मैनवार के पास दक्षिण पार्श्व में हैं।

इस प्रकार नवागढ़ (नावई) चंदेलशासन का विशेष ग्राम रहा है। वर्तमान में यहाँ की कार्यकारिणी समिति इस क्षेत्र के विकास में तन-मन-धन से समर्पित होकर कार्यरत है। ब्र. जयकुमार निशांत पूर्ण समर्पण के साथ अपने पिताजी की धरोहर के संरक्षण में तत्पर है। सभी धन्यवाद के पात्र हैं।

नवागढ़ (नंदपुर) की पुरा सम्पदा और मांगलिक प्रतीक

- ब्र. जयकुमार जैन 'निशांत' (टीकमगढ़)

भारत विभिन्न संस्कृतियों से मंडित ऐसा देश है, जहाँ करोड़ों वर्ष प्राचीन साक्ष्य उपलब्ध हैं। इसके विभिन्न प्रदेशों में ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं पौराणिक धरोहर संरक्षित हैं। उन्हीं में से भारत हृदय बुन्देलखण्ड की ऐतिहासिकता भी अतिप्राचीन है। इसके नामकरण के संबंध में अनेक मान्यताएँ एवं कथानक हैं। इसके चित्रकूट (रामायण), दशार्ण (महाभाष्य, मार्कण्डेय पुराण, मेघदूत), चेदि (महाभारत), गोल्लदेश (कुवलयमाला कहा), चि-चि-टो (चीनी यात्री ह्वेनसांग), युद्धदेश (विष्णु धर्मोज़र पुराण), जीजाक भक्ति (इनसाइज़्लोपीडिया ब्रिटानिका), जुझौति (स्कंधपुराण), गौंडवाना, कर्णावती, डाहल, वज्रदेश, मध्यदेश, चन्द्रावती, विन्ध्येलखण्ड, पिप्पलादि, पद्मावती, गोलापुर, बुन्देलखण्ड (छत्र प्रकाश एवं वीरसिंह देव चरित्र) आदि नाम प्राचीनकाल से आज तक रखे गये हैं। बुंदेलखण्ड के झांसी संभाग के जिला ललितपुर में देवगढ़, बालावेहट, चाँदपुर, दुधही, सेरोन, मदनपुर, कारीटोरन, गिरार, नवागढ़ (नंदपुर), सड़कौरा, अंजनी, बानपुर, सीरोन, जहाजपुर, दैलवाड़ा आदि अनेक तीर्थ एवं प्रागैतिहासिक नगर विद्यमान हैं। जिनमें नवागढ़ क्षेत्र की पुरासम्पदा एक विशिष्टकाल की संस्कृति को अभिव्यक्त करती है।

नवागढ़ (नंदपुर) में प्राप्त प्रतिमाएँ एवं शिल्प गुप्तकाल, प्रतिहारकाल तथा प्रारंभिक चंदेलकाल के हैं, जिनमें इनकी प्राचीनता जहाँ पाँचवी सदी सिद्ध होती है, वहीं पुरापाषाण कालीन औजार (2 से 5 लाख वर्ष पूर्व), कपमार्क (10 हजार वर्ष), शैलचित्र (5 से 8 हजार वर्ष), तीर्थंकर रॉककट इमेज (2 हजार वर्ष) से इसकी प्राचीनता स्वमेव सिद्ध हो रही है। नवागढ़ (नंदपुर) ग्राम नावई रमणीक, शांत, हरियाली युक्त पर्वत श्रृंखलाओं के मध्य 24^0 से 35^0 अक्षांश एवं 78^0 से 80^0 देशांश पर कलरा नाला, पनया नाला, हर्रई नाला के मध्य स्थित है। यहाँ अतिशयकारी तीर्थंकर चक्रवर्ती एवं कामदेव त्रिपदधारी अरनाथ स्वामी का जैन तीर्थ, आचार्य गुफा, उपाध्याय गुफा, साधु गुफा, दूल्हादेव, देवासर, बगाजटोरिया (पहाड़ी) फाईटोन, जैन टोरिया, सिद्धों की टोरिया, बगाजमाता, हनुमान मंदिर, बावड़ी टीले प्रसिद्ध हैं।

मांगलिक प्रतीकों का विश्लेषणः-

1. आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी ने दंसणपाहुड में तीर्थंकर के शरीर पर एक हजार आठ शुभलक्षणों का उल्लेख किया है।

विरहदि जाव जिणिंदो सहसट्ठ सुलक्खणेहिं संजुत्तो।

चउतीस अइसयजुदो सा पडिया थावरा भणिया ।।

एक हजार आठ शुभ लक्षणों से युक्त तथा चौंतीस अतिशयों से सहित तीर्थंकर भगवान् तब तक यहाँ विहार करते हैं, तब तक उनको स्थावर प्रतिमा कहा गया है। तीर्थंकर के शरीर में पाये जाने वाले एक हजार आठ शुभलक्षण कौन-कौन से हैं प्रकट करते हैं। श्रीवत्स, हाथ और पैरों में शंख, कमल, स्वस्तिक, अंकुश, तोरण, चंवर, सफेद छत्र, सिंहासन, ध्वज, दो मच्छ, दो कलश, कछुवा, चक्र, मेरु, इन्द्र पर्वत, नंदीपुर, गोपुर, चन्द्र, सूर्य, उज़म घोड़ा, व्यजन, बांसुरी, बीणा, मृदंग, दो पुष्पमाला, रेश्मीवस्त्र, बाजार, कुण्डल आदि सोलह आभूषण, फलों से युक्त उपवन, अच्छी तरह से पका हुआ धान का खेत, रत्नदीप, वज्र, पृथ्वी, लक्ष्मी, सरस्वती, कामधेनु, बैल, चूड़ामणि, महानिधि, कल्पबेल, सुवर्ण, जम्बूवृक्ष, गरुण, नक्षत्र, तारका, राजभवन, गृह, सिद्धार्थवृक्ष, अष्टप्रातिहार्य, अष्टमंगल द्रव्य इन्हें आदि से लेकर एक सौ आठ शुभ लक्षण होते हैं और तिल मस्सा आदि नौ सौ व्यंजन होते हैं। यह सब मिलकर 1008 शुभ लक्षण कहलाते हैं।

2. अष्टप्रतिहार्य- अशोक वृक्ष, सुरपुष्प वृष्टि, दिव्यध्वनि, दिव्यचमर, सिंहासन, भामंडल, दुंदुभि एवं छत्रत्रय ।

3. अष्टमंगल द्रव्य- सुवर्णमय झारी, तालपत्र (व्यजन), सुवर्णकलश, पताका, सुप्रतिष्ठ (ठौना), सफेद छत्र, दर्पण और चमर।

4. आचार्य जयसेन स्वामी ने प्रतिष्ठापाठ में माता के सोलह मांगलिक स्वप्नों का वर्णन किया है। बैल, ऐरावत, सिंह, स्वर्णकलश, अभिसिक्त लक्ष्मी, युगल पुष्पमाल, चन्द्रमा, सूर्य, युगलकलश, कमलयुक्त सरोवर, समुद्र, सिंहासन, स्वर्ग विमान, धरणेन्द्र भवन, रत्नराशि, निर्धूम अग्नि।

5. धवला पुस्तक प्रथम की टीका में आचार्य वीरसेन स्वामी ने मांगलिक द्रव्यों का वर्णन किया है।

सिद्धत्थ- पुण्ण कुंभो वंदनमाला य मंगल छज्जं।

सेदो वण्णो आदसणे य कण्णा य जच्चसोम ।।

सिद्धार्था (श्वेत सरसों), जल से भरा कलश, वंदनमाला, छत्र, श्वेतवर्ण, दपर्ण आदि अचित्त मंगल हैं। बालकन्या तथा उत्तम जाति का घोड़ा सचित्त मंगल है तथा अलंकार सहित कन्या मिश्र मंगल हैं। इसके साथ जिनबिम्ब, जिनयति, जिनेन्द्रदेव, जिनयति प्रतिमा, शास्त्र, पंचकल्याणक क्षेत्र, अष्टान्हिका पर्व को भी मंगल कहा जाता है।

6. प्रतिष्ठा पाठ में छत्र, रत्नदर्पण, ध्वजा, वस्त्र एवं मांगलिक आभूषणों का वर्णन मिलता है।

7. अभी तक प्राप्त अवशेषों में मांगलिक प्रतीकों में मुख्यतः खारबेल के शिलालेख में स्वस्तिक, मोहन जोदड़ों की सील में वृषभ, पुष्प चंदेरी के प्राचीन अभिलेख (ईसापूर्व द्वितीय सदी) नंदीपद (नद्यावर्त) स्वस्तिक, विहग, मीन, मिथुन, पद्म, शंख, त्रिरत्न, वज्र, ध्वज, तालपत्र (व्यजन), दर्पण, भद्रासन, जाव पडिरूवा आदि।

तीर्थंकरों के चिह्न, श्रीवत्स, छत्र, चमर, भामण्डल, चक्र, वृक्ष, गंगा देवी, यमुना देवी, मकरतोरण आदि प्राचीनकालीन शिल्पों में प्रायः सभी मूर्तियों में प्राप्त होते हैं। मथुरा में प्राक् कुषाण एवं कुषाण काल के आयागपट्टों में भी मांगलिक प्रतीक प्राप्त हुये हैं। नवागढ़ के प्राचीनतम् शैलचित्रों में वृषभ, हिरण, चक्र, सरोवर, पहाड़, वसतिका, सूर्य, केवलज्ञान (लोकपूरण चक्रिका) चक्षु पंचमगति प्रतीक, सप्तपंखुडी पुष्प आदि का अंकन यहाँ की पुरातात्त्विक एवं ऐतिहासिकता को दर्शाते हैं। इन मांगलिक प्रतीकों की जैनधर्म के मांगलिक प्रतीकों से अत्यधिक साम्यता है।

जैन पहाड़ी पर स्थित गुफा में पाषाण शिला पर उत्कीर्ण चरणयुगल तथा उत्कीर्ण कायोत्सर्ग मुद्रा (रॉककट इमेज) इन शैलाश्रयों को जैन श्रमणों की साधना एवं जैन तीर्थ के निर्माण की हजारों वर्ष प्राचीन प्रारंभिक भूमिका का संकेत करते हैं। इनसे

सिद्ध होता है यहाँ जैन संस्कृति का क्रमिक विकास एवं संरक्षण होता रहा है। यह प्रसिद्ध साधना स्थल रहा है।

संगृहीत पुरासंपदा में तथा तीर्थंकरों के बिम्बों में भी मांगलिक प्रतीक उपलब्ध हैं।

आदिनाथ-वृषभ संवत् (1123), अजितनाथ-हस्ती, संभवनाथ-घोड़ा, सुमतिनाथ-विहग, पद्मप्रभ-कमल, चन्द्रप्रभ- चन्द्रमा, शीतलनाथ-वृक्ष, धर्मनाथ-वज्रदण्ड, शांतिनाथ-हिरण (1202) अरनाथ-मीन, मल्लिनाथ-कलश, नेमिनाथ-शंख, पार्श्वनाथ-सर्प (1568), महावीर-सिंह (1195). साधु परमेष्ठी-पिच्छी आदि। जैन पहाड़ी की एक गुफा से उपाध्याय परमेष्ठी की संवत् 1188 (1131ई.) की मांगलिक प्रतिमा तथा पहाड़ी के आसपास कमल कलिका युक्त कलात्मक सुन्दर हाथ एवं अन्य शिल्पों के साथ विशाल प्रतिमाओं की प्राप्ति यहाँ विशाल जैन मंदिरों का संकेत करते हैं। डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी वाराणसी के अनुसार चारों मानस्तंभों से सिद्ध होता है कि यहाँ चार मंदिर और रहे होंगे।

पाषाण पट्ट पर णमोकार मंत्र का अंकन विशेष मांगलिक प्रतीक है।

विभिन्न शिल्पों में मांगलिक प्रतीक - मानस्तंभ संवत् 1203 पर जंजीर युक्त घंटिका एवं उपाध्याय बिम्ब, गंगायमुना देवी, कलश युगल, अकलंक- निकलंक बिम्ब में शास्त्र एवं लेखनी, अलंकृत शिखर, त्रिछत्र एवं गजयुगल, परमेष्ठी बिम्ब में कमण्डलु पिच्छी, मंदिर छत वितान (आयागपट्ट) में कीर्तिमुख, अंबिका देवी में आम्रवृक्ष, फल एवं अरिहंत बिम्ब, इन्द्राणी के हाथ में चंवर, उड़ते हुए यक्ष का पुष्पहार, चंदेलशासक मदनवर्मन के हाथ में पुष्पमाला एवं अरिहंत बिम्ब में अष्ट प्रातिहार्य विशेष मांगलिक प्रतीक हैं।

इस प्रकार नवागढ़ (नंदपुर) में संगृहीत पुरावशेषों में प्राप्त मांगलिक प्रतीकों से सिद्ध होता है कि यहाँ विशेषरूप से जैन संस्कृति का क्रमिक विकास हुआ है। यह श्रमण संस्कृति एवं विद्याध्ययन, गुरुकुल का विशाल तीर्थ रहा है, जहाँ साधकों ने आकर साधना के साथ-साथ सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं धार्मिक धरोहर का संवर्धन किया है। जैन तीर्थक्षेत्र से तीन कि.मी. पश्चिम में फाईटोन (फाइव स्टोन) शिलाओं के निकट जैन पहाड़ी पर स्थित शैलाश्रय एवं गुफाओं से प्राप्त पुरासम्पदा, दक्षिण में एक कि.मी. दूर बगाजटोरिया में स्थित चंदेलशासक मदनवर्मन के फलक पर

मांगलिक अरिहंत बिम्ब, आचार्य गुफा से प्राप्त अम्बिका देवी के शीर्ष पर अरिहंत बिम्ब, चमरधारिणी इन्द्राणी, पूर्व दिशा में एक किमी. दूर चंदेल बावडी के पास मंदिर अवशेषों में अमलसार तथा उत्तर दिशा में आधा किमी. दूर टीले से प्राप्त आक्रांतहस्ती युक्त सिंह एवं अमलसार इस क्षेत्र की विशालता का विस्तार कई किमी. में होने के संकेत करते हैं। मिट्टी एवं पाषाण के मनके यहाँ विशाल नगर एवं उसमें मानव सभ्यता का संकेत करते हैं, जिनका अन्वेषण करने से न जाने कितने रहस्यों एवं तथ्यों का उद्घाटित होना शेष है।

अरनाथ मूलनायक जिन प्रतिमा में श्रीवत्स, चंवर, मीन, पार्श्वनाथ बिम्ब में माल्याधर एवं मृदंग, शांतिनाथ बिम्ब में युगलहिरण, आदि तीर्थंकर बिम्ब में मांगलिक प्रतीक हैं। इनके अतिरिक्त स्वतंत्र प्रतीक भी नवागढ़ संग्रहालय में संगृहीत हैं- शिखर कलश, अमलसार, चक्र, त्रिछत्र कलश, गजयुगल, माल्याधर, मंदिर, शिखर आदि। पचास से अधिक खण्डित तीर्थंकर बिम्बों में चमर, छत्र भामंडल, अशोक वृक्ष, मृदंग, श्रीवत्स, माल्याधर, गजयुगल, मंगलकलश, मांगलिक प्रतीक रूप में उपलब्ध हैं। जिनशासन में मांगलिक प्रतीक सुखसमृद्धि धर्माचरण का संकेत करते हैं।

प्रागैतिहासिक पुरातात्त्विक विरासत का क्षेत्र नवागढ़

- शोध छात्राः श्रीमती अर्पिता रंजन, आरा

भारतीय संस्कृति में सभी कलाओं एवं विधाओं का समावेश है। प्राचीन भारत की प्राकृतिक विशेषता है कि यहाँ ग्रीष्म, वर्षा, शीत के साथ हेमंत, शिशिर एवं वसंत छह ऋतुओं से पर्यावरण हराभरा एवं समृद्धशाली रहता है। इसीलिये भारत के प्रत्येक प्रदेश की लोक कला, लोक संस्कृति, लोक परम्पराएँ, लोक संगीत, लोक साहित्य, लोक शिल्प से लोक जीवन विभिन्न आयामों से उत्प्रेरित सृजनशीलता से अपनी पहचान बनाकर भारतीय संस्कृति की विराटता, वैशिष्टय से सम्पूर्ण विश्व को चमत्कृत करती है।

विशेषतया बुन्देलखण्ड में सर्वधर्म समभाव, साहित्य, कला, शिल्प स्थापत्य का उद्भव एवं विकास का चर्मोत्कर्ष, समृद्धि, खुशहाली से जनजीवन सदैव उन्नतशील रहा है। यहाँ के शासकों ने कृषि को मुख्यता प्रदान कर हजारों कूप, बावड़ी तथा सैकड़ों विशाल सरोवरों से भूमि की उर्वरा शक्ति द्वारा समृद्धि विकास के साथ आत्मशांति-संतोष हेतु अध्यात्म एवं भक्ति के आयाम भी स्थापित किये हैं। जिनसे जीवन में स्थिरता एवं पारस्परिक मैत्रीभाव विकसित होता रहा है।

इसी समृद्धि एवं धन वैभव के आकर्षण ने राज्य विस्तार, सैन्यबल एवं शक्ति का दुरुपयोग, वैमनस्य- ईर्ष्या ने युद्ध की विभीषिका को भी उद्दीप्त किया है। धन-वैभव की चाहत, काम वासना तथा राज्यलिप्सा ने सैकड़ों समृद्धशाली विशाल नगरों को भी ध्वस्त कराया है। जिसके उदाहरण महोबा, लासपुर, सलक्षणपुर, मदनपुर, दुधही, चांदपुर, सैरोंन, नवागढ़, अजयगढ़ एवं खजुराहो हैं।

जहाँ अन्य क्षेत्रों में मूर्ति एवं स्थापत्य के साक्ष्य मिले हैं वहीं नवागढ़ में इनके साथ पुरावैशिष्ट्य विलक्षण है।10 कि.मी. विस्तार वाले नवागढ़ में किये गये अन्वेशणों ने इसकी सम्पन्नता, आध्यात्मिक साधना केन्द्र, गुरुकुल परम्परा, महानगरीय संस्कृति के साथ सर्वधर्म समभाव, कला-शिल्प की समृद्धि के रहस्य उद्घाटित किये हैं।

यहाँ लोवर पैलियोलिथिक (2 से 15 लाख वर्ष) मिडिल पैलियोलिथिक (35 हजार से 2 लाख (वर्ष), अपर पैलियोलिथिक (12 हजार से 35 हजार वर्ष) प्राचीन पाषाण कालीन सभ्यता, हजारों वर्ष प्राचीन प्राकृतिक साधना शैलाश्रय,

पैट्रोलिक कपमार्क, 10 हजार वर्ष, प्राचीन मैसोलेथिक रॉक आर्ट, रॉक पेंटिंग जिसमें जैन दर्शन के महज़्वपूर्ण गूढ़ रहस्य छिपे हैं। गले में पहनने वाले मिट्टी पाषाण के मनके से लेकर गुप्तकालीन एवं प्रतिहार कालीन मूर्ति शिल्प, चंदेल कालीन बावडी, स्थापत्य जिन मंदिरों के समूह जिनमें संवत् 1123, 1188, 1195, 1202, 1203, 1490, 1548, 1586, 1885 से आज तक की मूर्तियाँ अन्वेषित की गयी हैं।

यह पुराताज़्विक सज़्पदा जैनधर्म की प्राचीनता उद्भव एवं विकास के सशक्त साक्ष्य नवागढ़ को प्रागैतिहासिक धरोहर का विशाल क्षेत्र घोषित करते हैं।

ऐसे प्रागैतिहासिक पुरा सज़्पन्न क्षेत्र के टीलों में न जाने कितने रहस्य संरक्षित हैं, जो भारतीय संस्कृति की अमूल्य विरासत को अपने अंदर समेटे हुये है। डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, डॉ. गिरिराज कुमार जैसे पुरातज़्वविद जैन दर्शन के इन नवागढ़ के साक्ष्यों का अन्वेषण करके गौरवान्वित हैं। उनका कहना है हमने कई क्षेत्रों में कार्य किया परन्तु नवागढ़ जैसी पुरा सज़्पदा अत्यंत विलक्षण एवं विशिष्ट है।

मुझे ऐसी साइट पर कार्य करने का सौभाग्य ब्र, जयकुमार जी निशांत, श्री संजय मंजुल सर एवं मेरे निर्देशक डॉ. प्रकाशराय के सद्प्रयास एवं आशीर्वाद का फल है। शासन प्रशासन से अनुरोध है ऐसे क्षेत्रों में अन्वेषण कर भारतीय संस्कृति के विशेष आयाम स्थापित करें।

सहायक अधीक्षण, पुरातज़्वविद संस्कृत अभिलेख, पं. दीनदयाल उपाध्याय पुरातज़्व संस्थान, ग्रेटर नोयड़ा।

नवागढ़ मूर्तियों का कला वैशिष्ट्य

शोध छात्राः श्रीमती अर्पिता रंजन, आरा

जैनधर्म प्राकृतिक धर्म है, इसका आदि अंत नहीं है, इसका सिद्धांत है ''वत्थु सहावो धज़्मो'' वस्तु का स्वभाव ही धर्म है, जैसे अग्नि में उष्णता, गन्ने की मिठास, नीम का कड़वापन उनका स्वभाव है, यही उसका धर्म है जो हमेशा रहेगा। उसी तरह जीव आत्मा का स्वभाव ज्ञान एवं चेतना है।

जैन सिद्धान्तानुसार प्रत्येक आत्मा स्वतंत्र है, पेड़-पौधे से लेकर चीटी, छिपकली, बन्दर, मनुष्य सभी जीव सत्कर्म करके आत्मोन्नति करते हुए संसार के जन्म-मरण एवं दुखों से छुटकारा पा सकते हैं।

विलक्षण धर्म- जैनधर्म में भक्ति के लिये मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा करके उनकी स्थापना की जाती है, मूर्ति के माध्यम से उस मूर्ति में जिनके गुणों का गुणारोपण किया गया है उनकी पूजा की जाती है अर्थात् मूर्ति के साथ मूर्तिमान की पूजा की जाती है। जैसे जिस मूर्ति में ऋषभदेव के गुणों की स्थापना की जाती है उससे ऋषभदेव की आराधना की जायेगी तथा जिसमें महावीर के गुणों की स्थापना की गई है, उससे महावीर की आराधना की जायेगी।

जैनधर्म में भगवान् (केवली) अनंत हो सकते हैं परन्तु तीर्थंकर चौबीस ही होते हैं। काल क्रमानुसार प्रत्येक अवसर्पिणी एवं उत्सर्पिणी में 24-24 ही तीर्थंकर होते हैं। वर्तमान काल में तीर्थंकरों का सद्भाव न होने के कारण उनकी प्रतिकृति (मूर्ति) में उनके गुणों का आरोपण करके पूजा की जाती है।

कला वैशिष्ट्य- तीर्थंकरों के जन्मस्थान, शरीर, दीक्षा स्थान, आयु एवं निर्वाण में भिन्नता होते हुए भी उनके गुणों में भिन्नता नहीं होती- सभी में 1008 शुभलक्षण एवं उन पर आधारित नाम एक समान होते हैं। उसका वैशिष्ट्य प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़ में संगृहीत मूर्तियों में मिलता है। मुझे कई जैन तीर्थों पर अन्वेषण का सौभाग्य मिला, पर जो वैशिष्ट्य नवागढ़ में मिला अन्य कहीं नहीं मिला।

जब क्षेत्र निर्देशक ब्र. जयकुमार 'निशांत' जी पहली बार लाल किला स्थित कार्यालय में आये और आपने डॉ संजय मंजुल डायरेज़्टर एवं इंजी. पी. सी. जैन को नवागढ़ के फोल्डर एवं पुरा सज़्पदा के चित्र दिखाए, तो मेरी जिज्ञासा बढ़ी। श्री निशांत

जी के जाने के बाद मैंने श्री पी. सी. जैन से इस क्षेत्र की जानकारी प्राप्त की तो मुझे लगा यहाँ का भ्रमण अवश्य करना चाहिए।

मैं अपनी बहिन के साथ नवागढ़ पहुँची। वहाँ कई मूर्तियों के साथ पुरापाषाण कालीन 2 लाख से 5 लाख वर्ष प्राचीन औजार, हजारों वर्ष प्राचीन संत साधना शैलाश्रय, पैट्रोलिक कपमार्क, शैलचित्र, शैलोत्कीर्ण मुद्रा, धातु, काष्ट उपकरण प्राचीन राजाओं एवं रानियों के मुकुट सहित शीर्ष अत्यंत विलक्षण हैं।

मैंने नवागढ़ में प्राप्त अभिलेखों के आधार पर शोध प्रबंध का कार्य श्रद्धेय डॉ. प्रकाशराय के निर्देशन में ब्र. निशांत जी एवं सरिता जी दिल्ली के सहयोग से आरंभ किया है।

मूर्ति वैशिष्ट्य – पार्श्वनाथ भगवान् की पद्मासन विशाल प्रतिमा जिसके अंगोपांग तोड़कर लोग कुएँ पर पाट के रूप में उपयोग करते थे, जिसे पं. नीरज जी सतना नवागढ़ संग्रहालय में लेकर आये थे।

अन्य मूर्ति जो कुएँ पर पड़ी थी ग्रामीण उस पर लोहे के औजारों की धार बनाते थे तथा महिलाएँ उस पर जल भरने के घड़े रखती थीं। वर्षों पश्चात् उस पाषाण को जब देखा गया तो उसमें सातवीं सदी की प्रतिहार कालीन ऋषभदेव की मूर्ति उत्कीर्ण थी।

भगवान् पार्श्वनाथ की मूर्ति में जहाँ सर्प कुण्डली का आसन है ऊपर की ओर दो चंवरधारी हैं तथा नीचे की ओर धरणेन्द्र पद्मावती भी चंवर धारण किये हैं। इस प्रकार एक प्रतिमा में 4 चंवरधारी अन्य मूर्ति में देखने को नहीं मिले।

डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी एमिरेट्स प्रोफेसर काशी हिन्दू विश्व विद्यालय वाराणसी के अनुसार इस पार्श्वनाथ बिज़्ब में नीचे कुवेर यक्ष एवं अज़्बिका यक्षी अंकित है जो नेमिनाथ के यक्ष-यक्षी हैं। तीर्थंकर गुणों में समानता को मूर्ति में कैसे दर्शाया जाये तो शिलाकार ने इसमें धरणेन्द्र पद्मावती के साथ कुवेर एवं अज़्बिका का अंकन करके अद्वैतवाद को दर्शाने का प्रयास किया है।

जैन मूर्ति शिल्प वैशिष्ट्य – जैनप्रतिमा विज्ञान के अनुसार प्रतिमा के सभी अंगोपागों माप निश्चित है, उनमें हीनाधिकता नहीं होती है अन्यथा प्रतिमा दोषपूर्ण मानी जाती है। जैन मूर्ति शिल्प की विशेषता है कि उसका कोई भी अंग यथा शीर्ष, वक्षस्थल, स्कंध, हस्त, अँगुली, उदर एवं कटि भाग, जंघा, घुटना, चरण, परिकर या

पादपीठ मिले तो उससे जैन मूर्ति का अस्तित्व सिद्ध होता है तथा उससे मूर्ति के आकार का ज्ञान भी किया जा सकता है।

नवागढ़ प्रवास में मैंने पाया कि शिल्पकार ने अपनी कल्पना शक्ति से दिगज़्बरत्व में भी कला वैशिष्ट्य एवं कौशल का प्रदर्शन किया है। मूर्ति परिकर सज्जा, गजराज, मृदंगधारी, त्रिछत्र, माल्याधर, चंबरधारी, यक्ष, यक्षी, समर्पित श्रावक, पादपीठ आसन, लांक्षन, श्रीवत्स, केशविन्यास, लज़्बकर्ण, नाभि सौन्दर्य मिलकर वीतरागता को उभारते हैं। उसका सौन्दर्य, मनोज्ञता, एवं दिगज़्बरत्व चुज़्बकीय आकर्षणमय होता है। नवागढ़ में ऐसे कई मूर्ति शिल्प संगृहीत हैं।

मूलनायक का वैशिष्ट्य – मूलनायक अरनाथ स्वामी का गाज़्भीर्य, नेत्राकृति, नासिका, ओष्ठ, लज़्बकर्ण, वक्षस्थल, श्रीवत्स के साथ मानवाकार उदरावलि, पेडू, सुडोल जंघा, अत्यंत विलक्षण है जिसका शिल्प सभी को आकर्षित करता है।

हथेली और अँगुलियों का वैशिष्ट्य है कि मध्यमा अँगुली हथेली की ओर है शेष तीन अँगुलियाँ अँगुठ से भिन्न हैं। इस मुद्रा का वैशिष्ट्य अन्वेषण का विषय है। डॉ. वृषभ प्रसाद लखनऊ, डॉ. यशवंत मलैया कोलोराडो स्टेट युनिवर्सिटी अमेरिका ने भी इसको इंगित किया है।

अन्य प्रतिमाओं का वैशिष्ट्य– मानस्तंभ में प्रायः चारों और तीर्थंकर बिज़्ब होते हैं परन्तु यहाँ प्राप्त चारों मानस्तंभों में तीन ओर तीर्थंकर एवं एक ओर उपाध्याय बिज़्ब अंकित हैं।

एक खण्डित उपाध्याय बिज़्ब में पादपीठ में चिह्न के रूप में मयूर पिच्छी का अंकन है जो अन्य कहीं दृष्टव्य नहीं है। खण्डित उपाध्याय बिज़्ब में लज़्ब शास्त्र को अँगुलियों की विशेष मुद्रा में उत्कीर्ण किया गया है।

कुमार अकलंक एवं निकलंक एक ही पाषाण फलक में उत्कीर्ण हैं, अग्रज के हाथ में लज़्ब शास्त्र एवं कलम है। नवागढ़ में संगृहीत 9 उपाध्याय बिज़्ब यहाँ गुरुकुल परज़्परा के साक्ष्य हैं।

यहाँ प्राप्त धातु एवं काष्ठ उपकरण, विविधता लिये हैं मैं चाहती हूँ देश के विज़्यात प्रतिमा विज्ञानी, पुरातज़्वविद् एवं इतिहासदि् प्रागैतिहासिक नवागढ़ क्षेत्र में आकर पुरारहस्यों का अन्वेषण करके भारतीय संस्कृति के विशिष्ट आयामों को उद्घाटित करें। जो हमारी नवोदित पीढ़ी को विरासत के रूप में प्राप्त हों।

चन्देल शासन काल में जैनधर्म का विकास

शोधछात्र-श्रीमती अर्पिता रंजन, भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग ग्रेटर नोयडा (उ.प्र.)

जैनदर्शन के मूल सिद्धांत अहिंसा, सत्य, अस्तेय एवं अपरिग्रह हैं। इनका प्रभाव जन-जीवन के साथ समाज, व्यवसाय, संस्कृति एवं राजनीति पर भी स्पष्ट परिलक्षित हुआ है। भारतीय संस्कृति समन्वय एवं सद्भावना की संस्कृति है, जिसमें सभी धर्मों एवं जातियों को समानाधिकार प्राप्त है। प्राचीन काल से ही जैन सिद्धांतों का प्रभाव सभी प्रदेशों में देखा गया है। जिनमें बुन्देलखण्ड का इतिहास अतिप्राचीन है, समय-समय पर शासकों, निवासियों, प्राकृतिक परिस्थितियों, राजनैतिक सीमाओं तथा राजवंशों के आधार पर इसका नामकरण होता रहा है[1]। इसकी सीमा मुख्यतः यमुना एवं वेतवा के मध्य मानी गयी है।[2]

पौराणिक सन्दर्भानुसार रामायण एवं महाभारत काल से बुन्देलखण्ड में जैनधर्म का प्रभाव देखा गया है। वर्तमान में भी जैन दर्शन का प्रभाव दृष्टव्य है।

जैनियों के तर्कशास्त्र, व्याकरण रचना, ज्योतिष एवं औषधि शास्त्र आदि विधाओं से प्रभावित होकर कितने ही प्रभावशाली ब्राह्मणों ने भी जैनमत ग्रहण कर लिया था। जैनधर्म को जो उर्वर क्षेत्र तथा शासकीय आश्रय दक्षिण में प्राप्त हुआ, वह उस हद तक उत्तर भारत में प्राप्त नहीं हो सका। फिर भी जैन पण्डितों ने उत्तर भारत के राजपूत राजाओं के यहाँ भी प्रभाव प्रतिष्ठित करने का अधिकाधिक प्रयत्न किया।[3]

मौर्यवंश के प्रसिद्ध शासक चन्द्रगुप्त मौर्य (317 से 298 ईसा पूर्व) ने जैनधर्म स्वीकार कर जैनाचार्य अन्तिम श्रुतकेवली भद्रबाहु से श्रवणबेलगोला में दिगम्बरी (मुनि) दीक्षा ग्रहण की थी।[4]

चन्द्रगुप्त के पुत्र बिम्बसार (298 से 272 ईसा पूर्व) ने भी जैनधर्म को स्वीकार किया था। इसी परम्परा में सम्प्रति (272 से 190 ईसा पूर्व) ने जैनधर्म का भारत में ही नहीं अफ्रीका, मिस्र, अरब, यूनान आदि देशों में प्रचार-प्रसार किया था।

गुप्तवंश के प्रथम शासक चन्द्रगुप्त (प्रथम) 315 से 328 ई. महाराजाधिराज उपाधि का धारी था। आपका विवाह लिच्छिवी वंश की राजकन्या कुमारदेवी के साथ हुआ था।आपने आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ स्वामी का मन्दिर बनवाया था। विदिशा की खुदाई में चन्द्रप्रभ की ऐसी कलापूर्ण मूर्ति मिली है, जिस पर गुप्तवंशी ब्राह्मीभाषा में

चन्द्रप्रभ नामांकित है।[5] समुद्रगुप्त सन् 328 से 378 ई. ने अपने राज्य में कई जैन मन्दिर बनवाये एवं मन्दिर की पूजा तथा संरक्षण के लिये विपुल द्रव्य प्रदान किया। चन्द्रगुप्त (द्वितीय) सन् 379 से 414 ई. जैन आचार्य सिद्धसेन के शिष्य थे। आपकी अहिंसक जीवन शैली ने सभी शासकों को प्रभावित किया आपके सेनापति अमरदेव भी जैन थे।

स्कंधगुप्त का राज्य भी समुद्रगुप्त के समान था तथा बुन्देलखण्ड भी उसी राज्य में था।[6] चीनी यात्री फाह्यान ने आपके शासन में अहिंसक जीवन शैली का उल्लेख करते हुये लिखा, आपके राज्य में मांस, मदिरा तो क्या लहसुन, प्याज एवं कन्दमूल का भी प्रयोग नहीं होता था। कुमारगुप्त सन् 414 से 455 ई. के शासनकाल में जैनधर्म का विशेष प्रचार था।

प्रतिहार शासक मिहिर भोज (836 ई.) के शासन का उल्लेख देवगढ़ के अभिलेख में मिला हैं।[7] देवगढ़ जैन मूर्तिकला का विशिष्ट क्षेत्र हैं, जहाँ आज भी सैकड़ों जैन मूर्तियाँ संरक्षित हैं। भोज का साम्राज्य पूरे बुन्देलखण्ड में फैला था। इसके पश्चात् उसका पुत्र महेन्द्रपाल उत्तराधिकारी बना। वत्सराज के शासन में महावीर मन्दिर का निर्माण हुआ तथा नागभट्ट ने जैनधर्म को स्वीकार किया था।[8]

जैनधर्म व्यापारियों एवं व्यावसायिओं के मध्य लोकप्रिय था। इन वैश्यों को जैन समाज में पूर्ण प्रतिष्ठा प्राप्त थी। दण्डनायक विमल, वास्तुपाल, तेजपाल, पाहिल एवं जगदु के शासन में शैवधर्मावलम्बी होने के बाद भी भोज सन् 1010 से 1062 ई. ने जैनधर्म एवं साहित्य को संरक्षण दिया था। भोज ने आचार्य प्रभाचन्द्र के चरणों की वंदना की थी।[9]

बुन्देलखण्ड में प्रतिहार शासकों की शक्ति क्षीण होते ही चंदेल सामंत स्वतंत्र हो गये।[10]

चंदेलवंश का आदिपुरुष प्रथम शासक नन्नुक चन्द्रप्रभ भगवान का इतना भक्त था कि वह चन्द्रवर्मन के नाम से प्रसिद्ध हुआ, उसकी संतान चंदेल वंशी कहलाई।[11] अनुश्रुतियों के अनुसार चंद्रवर्मा ने 16 वर्ष की आयु में विशेष महोत्सव आयोजित करके महोत्सव नगर की स्थापना की जो आज महोवा के नाम से जाना जाता है। यह सदियों तक चंदेलों की राजधानी रहा। वहाँ की खुदाई में मिली जैन प्रतिमाओं से

चंदेल शासकों की जैनधर्म के प्रति श्रद्धा का संकेत मिलता है।

चंदेल शासकों की परज़्परा में बाज़्पति (850 ई) जेजा एवं बेजा 870 ई., राहिल 890 ई., हर्ष 910 ई. यशोवर्मन 925 ई., धंग 954 ई. ने शासन किया। शासक धंग ने प्रथम वर्ष 954 ई. में खजुराहो के प्रसिद्ध पार्श्वनाथ मंदिर का निर्माण कराया। राजा धंग जैनमुनि वासवचंद का बड़ा भक्त था। आपकी धार्मिक सहिष्णुता, समदर्शिता तथा प्रजा वत्सलता के कारण ही विभिन्न स्थानों विशेषतः सीरोन, खजुराहो, देवगढ़, दुधही, महोबा, कालंजर, चांदपुर एवं नवागढ़ में अन्य धर्मों के सुविशाल और भव्य मंदिरों की भाँति जैनों के भी अतिभव्य कलात्मक एवं उत्कृष्ट मंदिरों का निर्माण कराया जा सका।[12]

महाराजा धंग के राज्यमान कुलामात्यवृन्द उपाधि से विभूषित श्रेष्ठी पाहिल एवं जीजू ने भगवान शांतिनाथ एवं पार्श्वनाथ जिनालय का निर्माण जैनाचार्य वासवचन्द्र के आचार्यत्व में कराया तथा उसके संरक्षण हेतु 7 वाटिकाओं का दान किया।[13]

खजुराहो के अभिलेखों में धंगदेव एवं मदनवर्मन के नामोल्लेख के साथ जैनधर्म और कला को वृद्धिगत करने वाले श्रेष्ठियों, जैन मुनियों, आचार्यों तथा शिल्पियों के नामों का विशेष उल्लेख है। यह लेख 10वीं शदी से 12वी शदी ई. के मध्य खजुराहो में जैनधर्म और संघ के प्रभावशाली होने की पुष्टि करते हैं।[14]

इन लेखों में धंग के महाराज गुरु वासवचन्द्र, देवचन्द, कुमुदचंद, चारुकीर्ति, कुमारनंदि, योगचन्द्र, योगनन्दि, यक्षदेव, विशालकीर्ति आदि निर्ग्रन्थ दिगज़्बर आचार्यों एवं साधुओं द्वारा धर्म प्रभावना का उल्लेख है।[15]

उपरोक्त श्रमणों का श्री बिहार बुन्देलखण्ड के खजुराहो से महोवा नवागढ़, दुधही से देवगढ़ तक होने के संकेत मिलते हैं। नवागढ़ प्राचीन नंदपुर में ब्र. जयकुमार जी द्वारा अन्वेषित प्राकृतिक शैलाश्रयों में संत शयनस्थल, शैलाश्रय में उत्कीर्ण गुप्तकालीन कायोत्सर्ग मुद्रा एवं चरण वहाँ तीसरी सदी के पहले से जैन संतों के आवागमन के साक्ष्य हैं।

मूर्ति निर्माता श्रेष्ठियों में पाहिल के पुत्र साल्हे एवं पौत्र महागण, महिचंद, श्रीचंद जिनचंद और उदयचंद के नाम बुन्देलखण्ड में मूर्ति एवं मंदिर निर्माण में विशेष रूप से अंकित हैं।[16] इस परिवार ने लगभग 200 वर्षों (सन् 954 से 1158 ई.) तक

जैनमूर्ति एवं जैन मंदिर निर्माण में सतत सहयोग किया है।

''नवागढ़ के अभिलेखीय अन्वेषण में मूर्ति प्रतिष्ठा एवं मंदिर निर्माता श्रेष्ठियों में पाहल के नाम की प्रशस्ति तथा मूर्ति, पाहल के पौत्र महिचंद का नाम स्तंभ अभिलेख तथा महावीर प्रतिमा पर संवत् 1195 पर अंकित है तथा उनकी मूर्ति भी संगृहीत है, उससे सिद्ध होता है उन्होंने खजुराहो के साथ नवागढ़ में भी मंदिरों का निर्माण कराया था।[17]

अन्य मूर्ति प्रतिष्ठापकों में देल्हण संवत् 1195, सलदेसल संवत् 1202, रामचन्द्र, सान्ति, जाल्हण, रासल संवत् 1203, सन्न संवत् 1490, बसराज संवत् 1511, वीघानन्द संवत् 1548, नल्ह संवत् 1781, अर्जुन संवत् 1971 तथा वर्तमान में कई श्रेष्ठियों के नाम उल्लेखनीय हैं।[18]

एक महज़्वपूर्ण तथ्य यह भी है महाराजा हर्ष सन् 910 ई. के पुत्र यशोवर्मन (सन् 950 ई.) चंदेल वंश के प्रथम स्वतंत्र शासक थे, आपने जैनधर्म का विस्तार ही नहीं किया, वह स्वयं इतने प्रभावित थे कि संसार के भय से राज्य त्यागकर नंदि संघ के आचार्य वीरनन्दि से श्रवणबेलगोला में दीक्षा लेकर गोल्लाचार्य के रूप में अतिशय प्रभावना की।[19]

इस तथ्य की पुष्टी श्रवणबेलगोला के शिलाशासन में रामनवमी मंडप, आदिनाथ मंदिर एवं महादेवी शान्तला मंडप के अभिलेख से तो होती ही है, डॉ भागचन्द्र भागेन्दु दमोह, डॉ यशवंत मलैया, कोलोराडो स्टेट युनिवर्सिटी अमेरिका, डॉ. भागचन्द्र भास्कर नागपुर, ब्र. डी. राकेश सागर, ब्र. जयकुमार निशांत टीकमगढ़, डॉ. शीतलचन्द्र जी, जयपुर एवं पं. विनोद कुमार रजवांस ने भी बहुमत से स्वीकार किया है।[20]

गोल्लाचार्य की शिष्य परज़्परा में त्रैकाल्ययोगी, अभयनन्दि, माणिज़्यनन्दि, प्रभाचन्द्र, नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक (भगवान् गोमटेश बाहुबली की मूर्ति के प्रतिष्ठाता आचार्य) आचार्य नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ती, नयनन्दि, वसुनन्दि (जयसेन) जैसे महान् आचार्य हुये हैं।[21]

इसके पश्चात् चंदेल शासक मदनवर्मन की धार्मिक सहिष्णुता के कारण खजुराहो, अहार (मदनेशपुर), बानपुर, दुधही, चांदपुर, नवागढ़, कुण्डलपुर एवं सौरों जैन तीर्थ के रूप में स्थापित हुये।[22] आपके राज्यकाल में जैनधर्म का विशेष रूप से

प्रचार-प्रसार हुआ। आपके जैन धर्मावलम्बी होने एवं जैन साधुओं से प्रभावित होने के कई साक्ष्य मिलते हैं। आपकी परिषद् में बहुत से जैन मंत्री एवं कोषाधिपति थे। आपको मदन ब्रह्म नाम से ख्याति मिली है।[23]

मदनवर्मन स्वयं जैन धर्मावलम्बी तो हुये परन्तु अन्य मतों से कोई वैमनस्य नहीं था।[24]

यह उल्लेखनीय तथ्य है कि चन्देल राजाओं में यशोवर्मन वैष्णव (अंत में जैन मुनि गोल्लाचार्य हुये) धंग शैव एवं मदनवर्मन जैन था।[25]

परमर्द्धिदेव के राज्य में धनधान्य की कमी नहीं थी। अनेक मन्दिरों एवं तड़ागों के निर्माण से उस काल की समृद्धि का अनुमान लगाया जा सकता है, वर्तमान में टीकमगढ़ (म.प्र.) जिले में 962 चंदेल तालाब आज भी अन्वेषित किये गये हैं।[26]

परमर्द्धिदेव स्वयं ब्राह्मण धर्म के समर्थक थे किन्तु सभी को अपने धर्म पालन की स्वतंत्रता थी। ब्राह्मण धर्म के साथ ही साथ जैनधर्म का भी प्रचार था। अनेक जैन मंदिरों का निर्माण तथा जैन मूर्तियों की प्रतिष्ठा भी उस काल में हुई। शासकीय पदों की नियुक्ति में धर्म का प्रतिबन्ध न था। माहिल जो मन्त्रीपद पर प्रतिष्ठित था वह जैन था[27], माहिल की बहिन परमर्द्धि देव की महारानी महलना भी जैन परिवार की थी। जिससे परमर्द्धिदेव ने उनके पिता मालवंत को पराजित कर पाणिग्रहण किया था।

परमर्द्धिदेव ने अजयगढ़ में तालाब और मन्दिर बनवाये, महोबा में सन् 1167 ई. में जैन मूर्ति की प्रतिष्ठा कराई, सन् 1180 (संवत् 1237) में अहार जी (मदनेशपुर) में मूलनायक शान्तिनाथ की 21 फुट ऊँची मूर्ति की प्रतिष्ठा कराई, जिसमें नंदपुर (वर्तमान नवागढ़) में जिनालय बनाने का उल्लेख हैं।[28]

नवागढ़ के अभिलेखीय अन्वेषण एवं सर्वेक्षण में प्राप्त सम्बंधित साहित्य, इतिहास ग्रंथों, अभिलेखों में नवागढ़ (नंदपुर) का नाम विशेष रूप से दृष्टव्य हुआ है।[29]

नवागढ़ के आसपास ऊमरी, बड़ागांव, द्रोणगिरि, अहार आदि क्षेत्रों के सर्वेक्षण में एक तथ्य और प्राप्त हुआ है कि बुन्देलखण्ड में धसान नदी से संलग्न ग्रामों एवं नगरों में जैन समाज की गोलापूर्वान्वय का बाहुल्य रहा है । इस अन्वय के श्रेष्ठियों ने समय-समय पर मन्दिरों का निर्माण कराकर मूर्ति प्रतिष्ठा कराई हैं।[30]

प्राचीन काल से वर्तमान तक निर्मित जिनालयों की एक लम्बी शृंखला है। शायद ही ऐसा गाँव होगा जहाँ जैन धर्मावलम्बी न रहते हों और उनके द्वारा बनाये जैन मन्दिर न हों।[31]

पटेरिया क्षेत्र (गढ़ाकोटा म.प्र.) में श्रावक शिरोमणि श्रेष्ठी शाह रामकिशुन मोहनदास जैन ने एक दिन के रुई के व्यापार की मुनाफे से एक मन्दिर का निर्माण कराया, पपौरा जी में पड़ेले परिवार ने चौबीसी का निर्माण कराकर प्रतिष्ठा कराई।[32] इससे सिद्ध होता है बुन्देलखण्ड के तत्कालीन प्रमुख नगरों में जैन समाज के गोलापूर्वान्वय के श्रेष्ठियों का बाहुल्य एवं वर्चस्व रहा है। वह अत्यंत वैभवशाली, प्रभावशाली एवं समृद्ध रहे हैं।

यहाँ तक कि चंदेल शासक मदनवर्मन द्वारा स्थापित महत्त्वपूर्ण जैन तीर्थ क्षेत्र मदनपुर एवं मदनेशपुर (अहार) में अधिकांश मंदिर गोलापूर्वान्वय के श्रेष्ठियों द्वारा निर्मित कराये गये हैं।[33] यही नहीं प्राचीनतम क्षेत्र सोनागिरि, द्रोणगिरि, नवागढ़, नैनागिरि, चन्देरी, कुण्डलपुर, महोबा, पपौरा, पटेरिया, क्षेत्रपाल (ललितपुर), फलहोड़ी बड़ागाँव, दरगुवां, कारीटोरन, गिरार आदि के कई मन्दिरों में उनके द्वारा विराजित मूर्तियाँ प्राप्त हैं।[34] नवागढ़ की बगाज टोरिया पर मदनवर्मन की नखशिख अलंकृत एक मूर्ति विराजमान है, जो उनकी यशोगाथा का साक्ष्य है।

मुझे नवागढ़ के अभिलेखीय सर्वेक्षण में गुप्तकालीन उत्कीर्ण मुद्रा, प्रतिहार कालीन मूर्तिशिल्प के साथ कई मूर्तियों के पादपीठ पर संवत् अभिलेख मिले हैं।

संग्रहालय में संगृहीत प्रतिमाओं में ऋषभदेव संवत 1123, उपाध्याय संवत् 1188, महावीर संवत् 1195, शांतिनाथ एवं अन्य संवत् 1202, चार मानस्तंभ संवत् 1203, आसन संवत् 1781, वेदियों में विराजित प्रतिमाओं में चौबीसी संवत् 1490, संभवनाथ संवत् 1511, ताम्र पार्श्वनाथ संवत् 1548, पार्श्वनाथ संवत् 1586, विमलनाथ संवत् 1885, महावीर संवत् 1971 से लेकर वर्तमान संवत् 2076 तक की प्रतिमा प्रतिष्ठा की शृंखला प्राप्त हुई है।

इस शृंखला में एक तथ्य और उद्घाटित हुआ है, तीर्थंकर महावीर, शांतिनाथ चारों मानस्तंभ प्रशस्ति, घुटना तथा अन्य खंडित अवयव में जैन परम्परा के गोलापूर्व अन्वय के श्रेष्ठियों के नाम अंकित हैं।

इस तथ्य को डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, वाराणसी डॉ. शान्ति स्वरूप सिन्हा वाराणसी, डॉ कस्तूरचन्द्र सुमन, दमोह डॉ. के. पी. त्रिपाठी, हरिविष्णु अवस्थी टीकमगढ़ ने अपने सर्वेक्षण में उल्लेखित किया है।[35]

नवागढ़ के क्षेत्र निर्देशक ब्रह्मचारी जयकुमार जैन 'निशान्त' प्रतिष्ठाचार्य द्वारा अन्वेषित जैन पहाड़ी के प्राकृतिक साधना शैलाश्रय में नवागढ़ के श्री रामनारायण यादव एवं श्री रामनाथ गूजर द्वारा अन्वेषित गुप्तकालीन (तीसरी सदी) जैन मुनि की कायोत्सर्ग मुद्रा तथा चरण चिह्नों[36] से सिद्ध होता है, यहाँ तीसरी सदी के पहले से जैन आचार्य एवं मुनि संघों का श्री बिहार बुन्देलखंड में होता रहा है। उनकी चर्या में वहाँ के नगरों के समर्पित गोलापूर्वान्वय परिवारों ने वैयावृत्ति (सेवा) करने का सौभाग्य प्राप्त किया। वह उनसे प्रभावित ही नहीं थे अपितु उस अन्वय के श्रेष्ठियों ने दीक्षा लेकर श्रमण परम्परा का उन्नयन भी किया है।

मुनि गुणचन्द्र संवत् 353 (सन् 296 ई.) वज्रनन्दि संवत् 364 (सन् 307 ई.)[37] चन्देल शासक यशोवर्मन संवत् 1007 (सन् 950 ई.) गोल्लाचार्य के नाम से जिनने श्रवणबेलगोला में दीक्षा ली थी।[38] तथा गुणचन्द्र संवत् 1048 (सन् 991 ई.) ने दीक्षा लेकर इस अन्वय का बहुमान बढ़ाया है।

उपरोक्त अन्वेषणानुसार नवागढ़ प्राचीन नंदपुर की स्थापना गुप्तकाल के पूर्व हुई थी, जिसका विकास गुप्तकाल एवं प्रतीहार काल में हुआ तथा चंदेल शासनकाल में यह व्यावसायिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक, शैक्षणिक, राजनैतिक एवं धार्मिक सद्भाव के विशेष समृद्धशाली नगर के रूप में प्रतिष्ठित हुआ था।

खनन के समय प्राप्त मंदिरों के अवशेष, मिट्टी एवं पाषाण के मनके, विभिन्न मुकुटों वाले शीर्ष, कुमार अकलंक एवं निकलंक बिम्ब, उपाध्याय के विशिष्ट बिम्ब, शताधिक विशाल एवं मनोज्ञ मूर्ति शिल्प, चंदेल बावड़ी तथा कूप, पहाड़ियों पर नगरीय संयोजना के साक्ष्य प्राप्त हुये हैं।[39]

मदनपुर के अभिलेखानुसार संवत् 1239 में[40] चंदेलों के असीम वैभव एवं समृद्धि के आकर्षण तथा राजनैतिक वैमनस्यता से बुन्देलखंड (जेजाक मुक्ति) का पराभव परमर्द्धिदेव (परमाल) तथा दिल्ली के शासक पृथ्वीराज चौहान के युद्ध से हुआ। जिसमें महोबा, लासपुर (बिलासपुर) संल्लक्षणपुर, मदनपुर, चाँदपुर, दुधही, नवागढ़ सहित कई नगरों को पूर्णतः ध्वस्त कर दिया गया।[41]

इस प्रकार बुन्देलखंड के विशिष्ट नगरों की ऐतिहासिकता, सांस्कृतिक वैभव, विशाल भवनों धार्मिक स्थापत्यों, मूर्ति शिल्पों का नामोनिशान मिटकर मात्र इतिहास में शेष रह गया है। आवश्यकता है इन महत्त्वपूर्ण पुरातात्त्विक स्मारकों में छिपे रहस्यों को उद्घाटित करने की।

जैसे नवागढ़ में छिपे आयाम उजागर हुये हैं, इसी प्रकार महोबा, संलक्षणपुर, दुधही, चाँदपुर आदि प्राचीन नगरों की भूमि में न जाने कितने रहस्य छिपे हैं। मेरा शासन प्रशासन एवं पदाधिकारियों से निवेदन है सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित करने के पुनीत कार्य को सम्पादित कर विरासत को गौरवान्वित करें।

सन्दर्भ सूची

1. चित्रकूट (रामायण), चेदि (महाभारत), दशार्ण (मेघदूत), चि.चि.टों. (सी.यू.की.) चीनी यात्री ह्वेनसांग, गोल्लदेश(कुवलयमाला कहा), जेजाकभुक्ति, युद्धदेश, मध्यदेश, विन्ध्येलखण्ड, वज्रदेश, बुन्देलखंड आदि ।
2. (क) कुवलयमालाकहा, उद्योतनसूरि, भाग-2 पृष्ठ 252,

   (ख) बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पं. गोरेलाल तिवारी, पृष्ठ 3
3. चंदेल और उनका राजत्व काल, केशवचन्द्र मिश्र, पृष्ठ 202-203
4. जैन शिलालेख संग्रह, भाग-4, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली
5. विदिशा का वैभव,
6. बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व- डॉ. एस. डी त्रिवेदी, पृष्ठ 15
7. (क) बुन्देलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पं. गोरेलाल तिवारी, पृष्ठ 19-20

   (ख) आर्कियोलॉजीकल सर्वे ऑफइंडिया रिर्पोट, भाग-10, पृष्ठ 101
8. दा हिस्ट्री ऑफ दा गुर्जर प्रतीहार्स, डॉ. बैजनाथ पुरी, पृष्ठ 145
9. जैन प्रतिमा विज्ञान, डॉ मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, प्रकाशकीय दशरथ जैन, पृष्ठ 27
10. बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व, डॉ. एस. डी. त्रिवेदी, पृष्ठ 15
11. बुन्देलखण्ड का इतिहास और जैन पुरातत्त्व, प्रो. दिगम्बर दास जैन, पृष्ठ 155
12. बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व, एस. डी त्रिवेदी, पृष्ठ 35 एवं 53
13. एपिग्राफिका इण्डिका, भाग-1, पृष्ठ 135-136

14. खजुराहो का जैन पुरातत्त्व, डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, पृष्ठ 27

15. खजुराहो का जैन पुरातत्त्व, डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, पृष्ठ 27

16. दा अर्ली रूलर्स ऑफ खजुराहो, शिशिर कुमार मित्र, पृष्ठ 205-206

17. नवागढ़ (नंदपुर) का इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, पृष्ठ14

18. बुन्देलखण्ड का नवोदित तीर्थ नवागढ़, डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन, गोलापूर्व, मई 2013

19. जैन शिलालेख संग्रह भाग-4, भारतीय ज्ञान पीठ, दिल्ली

20. पटेरिया बैठक रिपोर्ट, डॉ. यशवंत मलैया, कोलोराडो स्टेटयुनिवर्सिटी

21. जैनेन्द्र सिद्धांत कोश, भाग-1 पृष्ठ 325.

22. कालंजर प्रबोध, डॉ. हरिओम तत्सत् ब्रह्म शुक्ल, पृष्ठ48

23. चंदेल कालीन महोबा एवं जनपद हमीरपुर और महोबा के पुरावशेष, वासुदेव चौरसिया, पृष्ठ 31

24. खजुराहो प्रतिमाएँ, डॉ. उर्मिला अग्रवाल, पृष्ठ 9

25. बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व, डॉ. एस. डी. त्रिवेदी, पृष्ठ 90-91

26. जल प्रबन्धन बुन्देलखण्ड की पारम्परिक जल संरचनाएँ, हरिविष्णु अवस्थी, पृष्ठ 32

27. (क) ऑर्कियोलॉजीकल सर्वे रिपोर्ट भाग-7, पृष्ठ 14

(ख) चंदेल कालीन बुन्देलखण्ड का इतिहास, डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय, पृष्ठ 104

28. (क) अहार के अभिलेख, डॉ कस्तूरचंद्र सुमन

(ख) गोलापूर्व डायरेक्ट्री, पं. मोहनलाल काव्यतीर्थ

(ग) प्राचीनाभिलेखा : डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु

29. (क) बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ 19

(ख) कालंजर प्रबोध, डॉ. हरिओम तत्सत् ब्रह्म शुक्ल, पृष्ठ 48

(ग) विंध्यक्षेत्र का ऐतिहासिक भूगोल, डॉ. कन्हैयालाल अग्रवाल, पृष्ठ 144

(घ) पुरातात्त्विक सर्वे रिर्पोट (महरौनी) डॉ. अम्बिका प्रसाद सिंह

30. नवागढ़ एन्टीक्वीटीज फ्राम दा चन्देला पीरियड, डॉ. यशवंत मलैया, पृष्ठ 1

31. फलहोड़ी बड़ागाँव वैभव स्मारिका प्राचीनतम जैन तीर्थ फलहोड़ी बड़ागांव, हरिविष्णु अवस्थी, पृष्ठ 55

32. गोलापूर्व जैन, जनवरी- जून 2020 राजेन्द्र महावीर

33. अतिशय क्षेत्र अहार के प्राचीन शिलालेख, पं. गोविन्ददास कोठिया

34. बुन्देलखण्ड का नवोदित तीर्थ नवागढ़, डॉ. कस्तूर चन्द्र सुमन, गोलापूर्व मई 2013

35. (क) विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़, डॉ मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी, अर्हत वचन 2018

(ख) बुन्देलखण्ड का नवोदित तीर्थ नवागढ़, डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन, गोलापूर्व मई 2013

(ग) श्री दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़, नंदपुर, डॉ के.पी. त्रिपाठी, संस्कार सागर

(घ) नवागढ़ (नंदपुर) का इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, संस्कार सागर

36. (क) नवागढ़ (नंदपुर) पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र, डॉ. गिरिराज कुमार आगरा पृष्ठ 3

(ख) विलक्षण तीर्थ एवं कला क्षेत्र नवागढ़, डॉ. मारुतिनंदन प्रसाद तिवारी

(ग) भारतीय इतिहास में प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़ का योगदान, ब्र. जयकुमार निशांत, पृष्ठ 4

37. (क) दा इंडियन ऐन्टीक्वेरी भाग 20, अक्टूबर 1891, पृष्ठ 351-352

(ख) खंडेलवाल समाज का इतिहास, डॉ. कस्तूरचन्द्र कासलीवाल

(ग) चारित्रधर्म प्रकाश (चारित्रसार) आचार्य चामुण्डराय, पृष्ठ 309

38. (क) शिलालेख संग्रह भाग, भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली

(ख) तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परम्परा भाग 4, डॉ. नेमीचन्द्र जैन ज्योतिषाचार्य, पृष्ठ 441-443

39. नवागढ़ (नंदपुर) का इतिहास, हरिविष्णु अवस्थी, पृष्ठ 54

40. (क) बुन्देलखण्ड का पुरातत्त्व, डॉ एस. डी. त्रिवेदी चित्र क्रमांक 13

(ख) रिपोर्टर्स ऑफटूर्स इन बुन्देलखण्ड एण्ड मालवा इन 1874-75, 1876-79ए कनिंघम भाग 10, प्लेट 32

41. (क) बुन्देलखण्ड का वृहद इतिहास, डॉ. के. पी. त्रिपाठी, पृष्ठ 19

(ख) हमारे प्रेरक, डॉ. पं. विश्वनाथ शर्मा, पृष्ठ 4

(ग) ओरछा का इतिहास, ठाकुर लक्ष्मण सिंह गौर, पृष्ठ 33

(घ) ऑर्कियोलॉजीकल सर्वे रिर्पोट भाग 10, पृष्ठ 98-99

(ड) ऑर्कियोलॉजीकल सर्वे रिर्पोट भाग 21, पृष्ठ 173-174

बुन्देलखण्ड का नवोदित प्रमुख तीर्थ नन्दपुर (नवागढ़) और वहाँ के कतिपय प्रमुख जिन प्रतिमालेख

- डॉ. कस्तूरचंद जैन 'सुमन' जैन विद्या संस्थान श्री महावीर जी

जैन तीर्थ नन्दपुर का नामोल्लेख अहार (टीकमगढ़ मध्यप्रदेश) के अतिप्राचीन संवत् 1237 के प्रसिद्ध तीर्थंकर शान्तिनाथ प्रतिमा के आसन पर उत्कीर्ण नागरी-लिपि और संस्कृत भाषा के प्रतिमालेख में मिलता है । प्रशस्ति नौ पंक्तियों में निज़्नप्रकार है ।

1. ओ नमो वीतरागाय ।।गृहपतिवंशसरोरुह सहस्त्ररश्मिः सहस्र-कूटै यः । वाणपुरे व्यधिताक्षीत्स्त्रीमानि-

2. देवपाल इति ।।1।। श्री रत्नपाल इति ततनयो वरेण्यः पुण्यैकमूर्जिरभ-वद्वसुहाटिकायां । कीर्तिर्ज्जगन्ति य

3. परिभ्रमणस्त्रमाज़ार्यस्यस्थिराजनि जिनायतनाच्छलेन ।।2।।
एकस्तावद नूनबुद्धिनिधिना श्री शान्तिचैत्यालय

4. यो दिष्ट्या नंदपुरे परः परनदानंदप्रदः श्रीमता । येन श्री मदनेससागरपुरे तज्जन्मनोनिर्ज़्ममे सोयं श्रेष्ठि वरिष्ठ गल्हण इति श्री रल्हणज़्याद् ।।3।। भूत ।।3।। तस्मादजायत कुलाज़्बर पूर्ण्णचंद्रः श्री जाहडस्तदनुजोदयचंद्र नामा ।

5. ध सुदानसारः ।।4।। ताज़्यामसेशदुरितोघसमैक हेतुं निर्ज़्मापितं भुवनभूषण भूतमेतत् । श्री शान्तिचैत्यमिति नित्यसुखप्रदानात् ।

6. मुक्तिं श्रियो वदनवीक्षण लोलुपाज़्याम् ।।5। छ छ छ ।।
संवत् 1237 मार्ग्गसुदि 3 स्त्रीमत्परमाडिदेव विजयराज्ये

7. चन्द्रभास्कर समुद्रतारका यावदत्र जनचिज़हारकाः ।
धर्ज़्मकारिकृत सुद्धकीर्तनं । तावदेवजयतात्सुकर्तन ।।6।।

8. वल्हणस्य सुतस्श्रीमान रूपकारों महामतिः । पापटोवास्तुसाज़्ज्ञस्तेन विंव सुनिर्ज़्मितं ।

भावार्थ

पद्य -1 - पंच परमेष्ठियों की वीतरागता के लिए नमस्कार हो। गृहपति वंश रूपी कमलों के लिए सूर्य के समान हुये श्रीमान् देवपाल ने वाणपुर नगर में एक सहस्त्रकूट चैत्यालय का निर्माण कराया ।

पद्य - 2- इनके पुत्र का नाम रत्नपाल था । वसुहाटिका नगरी में पवित्रता की प्रधान मूर्ति थे । इनकी कीर्ति तीनों लोकों में परिभ्रमण के श्रम से थककर जिनायतन के बहाने स्थिर हो गयी थी ।

पद्य - 3- रत्नपाल अपर नाम रल्हण के गल्हण नामक पुत्र हुआ । इसने नंदपुर नगर में शांतिनाथ चैत्यालय तथा दूसरा चैत्यालय अपने जन्मस्थान मदनेशसागरपुर वर्तमान अहार में बनवाया गया था ।

पद्य-4- श्रेष्ठी गल्हण के दो पुत्र हुए जाहड और उदयचंद। इनमें जाहड कुलरूपी आकाश के लिये पूर्णचन्द्र थे और उदयचंद परोपकारी, धर्मात्मा और दानी थे।

पद्य-5- इन दोनों भाईयो ने सज़्पूर्ण पापों की शान्ति हेतु, पृथिवी के भूषणस्वरूप सुखप्रदायी होने से मुक्तिरूपी लक्ष्मी के मुखावलोकन के लिए श्री शान्तिनाथ तीर्थंकर की प्रतिमा निर्मित कराई थी।

पद्य-6- प्रतिमा संवत् 1237 मार्ग सुदि तृतीया शुक्रवार के दिन प्रतिष्ठित हुई । उस समय श्रीमान् परमर्द्धिदेव का राज्य था। कहा भी गया है कि जब तक चन्द्र, सूर्य तारे, समुद्र मनुष्यों के चिज़हारी हैं तब तक धर्मकारियों का सुक्रीर्तिमय यह सुकीर्तन विजयी रहे । प्रतिबिज़्ब बल्हण के पुत्र वास्तुशाज़ के ज्ञाता पापट थे।

इस प्रतिमालेख में आलोक में दो ऐतिहासिक नगर पढ़ने में आये हैं-वाणपुर और नन्दपुर । इनमें वाणपुर टीकमगढ़ से मात्र ग्यारह किलोमीटर दूर पश्चिम में विद्यमान है जहाँ सहस्त्रकूट रचना के दर्शन आज भी सुलभ है।

नन्दपुर के सन्दर्भ में वयोवृद्ध विद्वान श्री पं. गुलाबचन्द्र जी 'पुष्प' से ईसवी 1993 में ज्ञात हुआ था कि यह नगर झाँसी से सोजना मार्ग से सोजना से चार किलोमीटर उज़र पूर्व कोण में नाबई नाम से प्रसिद्ध है।

अहार प्रतिमालेख में उल्लिखित नंदपुर नामक ही संभव नाबई नाम से भी प्रसिद्ध रहा है। नन्दपुर की दूरी भी अहार से संभवतः वाणपुर के समान ही निकटवर्ती

ही रही है । संवत् 1237 के पूर्व यह नगर जैन केन्द्र रहा प्रतीत होता है। जैन परिवार धार्मिक रहे हैं। उनकी धार्मिक प्रवृतियों को देखकर ही संभवतः यहाँ भी तीर्थंकर शान्तिनाथ चैत्यालय श्रेष्ठी गल्हण द्वारा निर्मित कराया गया था।

नन्दपुर (नवागढ़) के प्रतिमालेख

ब्र. जयकुमार जी 'निशान्त' नन्दपुर नामक तीर्थक्षेत्र के जीर्णोद्धार हेतु समर्पित हैं। प्रतिमा लेख पढ़ने के लिए उन्होंने पत्र भी लिखा किन्तु मैं वहाँ नहीं पहुँच सका ।

ब्र. निशान्त जी ने मेरे निवेदन पर नन्दपुर के प्रतिमालेखों के चित्र भेजे जिनके पढ़ने से निज़्न जानकारी प्राप्त हो सकी है। प्रतिमालेख निज़्न प्रकार हैं-

चित्र संज़्या प्रथम संवत् 1202

इस चित्र में एक दूसरे को देखते हुए दो हरिण आगे का एक-एक पैर ऊपर उठाये हुए, मुँह खोले हुए चित्रित हैं। इस चित्र से अहार प्रतिमालेख में कथित श्रेष्ठी द्वारा नन्दपुर में शान्तिनाथ चैत्यालय पर बनवाया जाना प्रमाणित होता है।

चिन्ह की बायीं ओर इसी चित्र में निज़्न अभिलेख भी हैं- पं. 1 (सं) 1202 गोला पं. 2 पूज़्र्व अन्व (अन्वे) भ्राता (काता) पं. सलदेसल । चिन्ह हरिणों की दायीं ओर पं. 1 साबु काकेनस सुत पं. 2- त साबु (साह) आसल

प्रस्तुत प्रतिमालेख से यह भी ज्ञात होता है कि यह वही नगर है जिसका अहार शान्तिनाथ प्रतिमालेख में नन्दपुर नाम आया है ।

चित्र संज़्या द्वितीय -संवत् 1202

इस चित्र के ऊपरी भाग में छत्र सहित क्रमशः तीन शीर्ष भाग मात्र अंकित है। नीचे चार पंक्ति का अभिलेख उत्कीर्ण हैं-

पं. 1- (अर) य वि नाभि वाजेन कुन्तो

पं. 2- गोलापूर्व्वान्वये - (वि)

पं. 3 - दिसा- तस्य पु..

पं. 4 - संवत् 1202 (अपठनीय)

चित्र संज़्या तृतीय संवत 1203

यह अभिलेख सिर विहीन पद्मासन मुद्रा में ध्यानस्थ प्रतिमा की आसन पर नागरी लिपि और संस्कृत भाषा की दो पंक्तियों में उत्कीर्ण है ।

पं. 1 - संवत् 1203 आषाढ़ वदि 10 गोला

पं. 2 - पूर्व्व अन्वे सावु (साव) सल सुत बल्हण

यही दो पंक्ति का लेख मानस्तज़्भ की सर्वांग विभूषित ध्यानस्थ पद्मानस्थ प्रतिमा की आसन पर उत्कीर्ण मिला है ।

चित्र संज़्या चतुर्थ

बांह सिर विहीन महावीर प्रतिमा

पद्मासन मुद्रा में ध्यानस्थ खण्डित इस प्रतिमा की आसन पर बायीं ओर पूँछ उठाये मुँह फुलाये विपरीत दिशा में मुँह किये चिन्ह स्वरूप सिंह उत्कीर्ण हैं। मध्य भाग अलंकृत है । उसकी दोनों ओर एक पंक्ति का अभिलेख निज़्न प्रकार उत्कीर्ण हैं

सं 1195 गोलापूर्व्वान्वये साधु महिचंद भार्या तिसुदि (अलंकरण) तत्सुत

साधु देल्हण वधू बीलामामी सल्हा एते

चित्र संज़्या पंचम- पार्श्वनाथ प्रतिमा

पद्मासन मुद्रा में ध्यानस्थ प्रतिमा के सिर पर नौ संज़्यक दर्शाये गये हैं। सर्प का आकार प्रतिमा की आसन से आरज़्भ हुआ है। केश भी प्रदर्शित हैं । नेत्र, नासिका, ओष्ठ, सौज़्य हैं। कर्ण स्कन्धों से जुड़े हैं। वक्षस्थल उभरा हुआ है । प्रतिमा चौकोर आसन पर विराजमान है । आसन पर बायीं ओर पद्मावती शासनदेवी है । इसका सिर सर्प फण से विभूषित है । दूसरी ओर धरणेन्द्र देव पद्मासनस्थ हैं ।

धरणेन्द्र और पद्मावती के निकट नागरी लिपि तथा संस्कृत भाषा में निज़्न अभिलेख है। इसके दो भाग हैं । प्रथम भाग तीन भागों में विभाजित है - (1) श्री पारीख (2) तीर्थ का प्र. (3) ती मा 8 ।।

द्वितीय भाग (दायीं ओर) सकें (शक संवत्) 1586 को (2) मी गजमती वा (3) 3

संभवत् यह प्रतिमा गजमतीवाद के द्वारा प्रतिष्ठित कराई गई थी ।

चित्र संज़्या षष्ठ चरण युगल

चरण तले दो पंक्ति का नगरी लिपि संस्कृत भाषा का निज़्न लेख है-

1. भट्टारक पद्म देव   2. प्रणमंति

चित्र संज़्या 65 ए (सप्तम्)

ऊपरी भाग में पायल से विभूषित दो चरण मात्र हैं। इनके नीचे दो पंक्ति का लेख है-

(1) सावु वील्हा तस्य सुत ल्समस (2) अंविका प्रणमति ।।

चित्र संज़्या अष्टम् - अर्हत् प्रतिमा संवत 1203

यह प्रतिमा पद्मासन मुद्रा में ध्यानस्थ है । कर्ण स्कन्धभाग से जुड़े हैं। आकृति धूमिल है । आसन पर दो पंक्ति का लेख है -

(1) संवत् 1203 आषाढ वदि 10 गोला

(2) ला पूर्ज्व अन्वे सावु रासल सुत संति

नोट - चित्र संज़्या तीसरे का और यह लेख दोनों समान है ।

चित्र संज़्या नवम्

यह चित्र किसी शासन देव का है । इसके दायें हाथ में गदा आयुध प्रतीत होता है। बायाँ पैर मुड़ा हुआ है । नीचे आसन पर दो पंक्ति का लेख उत्कीर्ण है-

(1) संवत् 1203 असाढ़ वदि 10 गोलापूर्व अ

(2) न्वे सावु रामचंद सुत बालु

प्रस्तुत प्रतिमालेखों से नन्दपुर गोलापूर्वान्वयी श्रावकों की आवासभूमि रही ज्ञात होती है । यहाँ के जैन श्रावकों के अहार क्षेत्र सज़्बन्ध भी रहे प्रतीत होते हैं। बुन्देलखण्ड में नन्दपुर अन्य क्षेत्रों के समान आदरणीय धार्मिक क्षेत्र रहा है ।

Navagarh: Antiquities from the Chandel period

Dr. Yashwant K. Malaiya,
Professor of Computer Science, Colorado State University

[Navagarh is a Jain Pilgrimage site that has developed only since 1959. It has significant Pre-historic and historic remains that have received attention only in recent years. This article discusses on the Jain antiquities of the Chandel period as well as a few that may from the early middle age.]

Its history during the Chandella period needs to be studied in conjunction with the antiquities of nearby sites, specifically Badagaon-Dhasan, Aahaar Kshetra and Papora ji, which are also pilgrimage centers as well as Bhelsi, which is mentioned by Naval Shah Chanderia's **Vardhamana Purana** in the sixteenth chapter. It is located at the Navai village, about 8 km from Sojna in central India in Uttar Pradesh, Just across the border from Madhya Pradesh.

The ancient cite was noticed as a collection of sculptures and fragments on top of a platform. The site was explored by Pt. Gulabchandra Pushpa, anAyurvedic physician (later famous as a Pratishthacharya) in 1959. The platform was actually the top of an underground chamber which concealed a beautifully polished sandstone image of 18th: Teerthankar Bhagwan Arahnatha in the kayotsargpose.

A modern temple was later constructed at the same exact spot, with the garbhagriha left underground the same spot. A congregational room was excavated infront of it.

In Bundelkhand, several underground chambermed Bhonyras with concealed Chandella period images have been found. According to Balbhadra Jain these are said to be seven which include Pava, Deogarh, Seron, Karguvan, Bandha, Papora. Thuvon.

Navagarh should be included among them since underground structure has been carefully preserved.

The Chandrashila, that formed the roof of the platform, has been preserved. and has been fixed on a wall for display. A large number of historic sculptures are preserved the sanghrahalaya, which is housed in dedicated room Some of them have inscriptions that throw light the history of the spot. The mulnayak image of Bhagwan Aranath does not have an inscription, a finely polished schist image of Bhagwan Mahavira, marked by the Lion lanchhan, has a well preserved inscription of samvat 1195 (1138 AD) mentions that Mahichandra of the Golapurvaanvaya, his son Delhan and their family members.

The craftsmanship of the image is very similar to those seen at the Bhonyras of Papora, Pava, Karguvan, Bandha etc, which appear to be from the same periodbased on the inscriptions, a schist (te) head fragment shows signs of deliberate mutilation.

There are other inscriptions of samvat. 1202, that mention the Golapurvaanvaya. This suggests that the region was populated by the Golapurva Jain community. Most of the sculpture fragments are in red or brown sandstone, but a few fragments are in blackschist.

It is notable that there are two large images that appear to be from the early middle age, perhaps 8th -10th century". The craftsmanship and the conventions are different from the Chandella Period sculptures. These include an Adinath image in khadagasana and a padmasan Parshwanath image. The elbows of the Parshwanath image are spread out, which is common to padmasan images prior to 11th century. At nearby Badagaon-Dhasan lain complex, about 10 km, there are two large images that also appear to be from the early middle age.

There exists an unusual Jain sculpture located among the rocks in the nearby rock-strewn hills that shows a person with mustaches and beard who appears to be holding a garment in one hand and an end of a garment in the other hand. This may be a representation of a distinguished shravaka, shreshthi or King, perhaps Madan Varman.

Notably there are four columns, that were brought here from a reservoir in nearby Sojna. The function of the column is not clear. The lower parts of the columns has been roughed so plaster can adhere to the surface. Notably the columns are inscribed with inscriptions. A reading given the Golapurva Directoryof 1940 appears to be flawed. A better reading is provided in the Golapurva Jain Samaj Ka Bharatiya Sanskrit Ko Avadana, 2019. All of them are dated, Samvat 1203 Ashadh vadi 10 (1146 AD) and mention shravakas of the Golapurvaanvaya.

The carvings on the 4 columns show Teerthankaras with Ambika and Gomedh. It is notable that some of the panels show an Upadhyaya with a tada-patra book in the left hand and the right hand with the expression of preaching. The kamandalu is placed on the seat.

It is notable that the monks appear to have the pichchhi worn on the right arm with the brush raised up. This is in contrast to the modern practice, the pichchhi is either held by the fingers or is placed on the platform. There is a sculpture fragment with shows a pichchhi with the end shaped like a book. Some of the paintings in some manuscripts show the arm inside the loop in the handle of the pichchhis. Thus It appears that the manner of carrying pichchhis in the region during the Chandella period was different.

As demonstrated by the archaeological findings, this region was a major center of Jainism in the Chandella period Ahaarji, about 34 km from Navai, (then known as Madansagarpur) was a major pilgrimage. center during the Chandella period, with the Jains from several regions visiting and installing images during the period. The communities represented were Gargarat (Gangarade), Mahishanapuravada (Maheshwari), Jaiswal, Lamechu, Mathur, Paurpatta (Parwar), Maiditaval (Medatwal), Avadhapura (Ayodhyavasi), Khandelwal, Golarade (Golalare) in addition to the local Golapurvas and Grihapatis. It demonstrates the harmonious cooperation of the Jainst belonging to different communities. The two Chandella-period

inscribed images in Papora bhonyra, which is about 26 km, both mention Golapurva. The Golapurvas still live in the region around Navagarh is large numbers.

All the Inscriptions at Navagarh belong to the period of Chandella ruler Madanvarman (Samvat 1186-1220), two inscribed Papora bhonyra pratimas of Same 1202 (1146 AD) are also front Madanvarman's time. It should be noted that most of the Aahaar inscriptions are also from his time.

Although some of them go to the time of his grandson Parmardhi (also known as Parmal), and a few from Trailokyavarman and Viravarman's time. As described in the famous ballad Alha-Khand, Prithviraj Chauhan attacked Paramardhi in Samvat 1239 (1182-83 AD) but eventually retreated. The last Chandella period Ahar inscription is rom Samvat 1332.

Bundelkhand was attacked by Iltutmishin AD 1233-34 and by Alauddin in 1293 AD.

At this time, the town temples were destroyed and many pratimas were concealed in underground chambers. The Jain centers of Bundelkhand then ceased tofunction for a few centuries.

The archaeological and demographic information confirmed the history provided by Naval Shah Chanderia in Vardhamana Purana of Samvat 1825 (1769 AD)

He mentions a ancestor in remote antiquity settling in Chanderi village (which should not be confused with Chanderi in Ashoknagar district, which probably the village near Kudila, and then his descendants branching to four different villages. The village Bada is likely the nearby BadagaonDhasan.

Navalshah's ancestors conducted a Gajrath Pratishtha at Bhelsi (41 km) in Samvat 1651 (1594 AD). His book presents the earliest available account of a Gajrath

Pratishtha in Bundelkhand Navalshah's account of his family's history is supported by the inscription in the Bhelsi temple that still exists.

The Navagarh temple complex has other vedis that include other historically significant brass and stonepratimas. They are also worth studying by the scholars.

I would like to acknowledge Br. Jaikumar JainNishant, a noted Pratishthacharya, for inviting me.along with a group of other scholars to Navagarh introducing me to the religious and archaeological. significance of Jain antiquities at Navagarh.

References:

Balbhadra Jain, Bharat Ke Digambar Jain Tirth, 1976, Part 3, p. 105,

Niraj Jain, Navagarh, Ek Mahatvapurna Madhyayugeen Jain Tirth, Anekanta, year 15, Issue 6, 1963, p. 177-79

Golapurva Jain Samaj Ka Bharatiya Sanskrit Ko Avadana, Ed. Surendra Kumar Jain, 2018.

Papora Darshan, Pt. Vimal Kumar Shastri, Shri Digambar jain Atishya Kshetra Papauraji, Tikamgarh, 2014.

Yashwant Kumar Malaiya, Chandelakalin Madansagarpur ke Shravaka Anekanta, July-Sept. 1993

Yashwant Kumar Malaiya, Vardhaman Purana ke Solahven Adhikar ka Adhyayan, Anekant, 1974, pp. 58-64.

NEWLY DISCOVERED ROCK ART SITE, NAVAGARH IN DISTRICT LALITPUR, UTTAR PRADESH

Giriraj Kumar, Jay Kumar Nishant and Abhimanyu

Introduction

Navagarh is a small village in Mehrauni Tehsil of Lalitpur district in Uttar Pradesh in western part of Bundelkhand, bordering Madhya Pradesh. Bundelkhand is the land of war heroes and cultural and religious activities. The world-famous temples of Khajuraho built by the rulers of Chandela dynasty in 9-10 century AD form the proud UNESCO World Heritage of the region. The second author, a Jain priest at Navagarh, observed a rock art site in the Phyton granite hill. He invited the first and the third authors to visit and study the site. On his invitation both the scholars visited the site on 28 January 2017. The first author also explored the region two times in March and July in 2018. The observations are being put here for the benefit of the readers.

A brief cultural history of the village

Navagarh, also known as Nandpur, is an ancient cultural site. The government revenue name of the village is Navai. It is located in Tehasil Mahrouni, district Lalitpur in Uttar Pradesh an the border of Madhya Pradesh and Uttar Pradesh, 30 km southeast of Tikamgarh in Madhya Pradesh, 130 km from Jhansi (UP) and 65 km from Lalitpur (UP). It is a part of Blundelkhand which is having the world-famous temples of Khajuraho and Orchha.

The village has a Jain temple of 10 century AD discovered by Pandit Gulaabchand Pushp. It belongs to 18th Tirthankar Swami Aranath. It has been renovated by the Jain truet with the help of local people in the leadership of Brahmchari Jay Kumar Nishant, son of Pandit Gulabchand Pushp. Now the beautifully built temple is a lively entity being worshipped and properly taken care of by the trust headed by Nishant, the chief priest, the second author of the present paper. The history of Jain Tirthankaras and their contributions has been beautifully

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातज़्व

carved out on the inner and outer walls of the temple. So, the temple appears as learning Institule in a true sense.

Navagarh is a granite region and there are remains of ancient habitation on the top of the hill on the southwest of the village. It yielded posters and some antiquities of historical period. Some antiquities are like rudraksh on chert and terracotta figurines. It is occupied mainly by poor families belonging to Pal (Gadariya), Luhar (Vishvakarma), Kachhi (Kush waha). Kumhar (Prajapati), Badhai (Carpenter). Gurjar, Yadav belonging to Other Backward Caste (OBC) group and Ahirwar (ST group).

Geomorphology

Navagarh village is located by the side of granite hill and is surrounded by granite hills from all the sides. The hills are 20 to 50 m in height. The quartz, grains are of medium size and granite is also of medium to fine quality. At the foot of the hills, chert.junks are found which have been used to prepare artefacts by the Stone Age man.

In our first visit on 28 January, 2017 we studied the rock paintings in the tortoise rock and a cupole in the Siddhon-ki-Toriya (newly discovered by the first author in the explorations), explored both the region near the hills, found a hammerstone lying buried in the reddish-brown soil. It was almost circular and flat, the surface on its both sides are smooth because of its use. It appeared to be of greater antiquity, might be of Stone Age.

At that time, Kumar also discovered a hand-axe on chert of the Middle Phase of Acheulian. It is broken from the head. It indicates that the stone age man explored the region at least in the middle Acheulian times. However, it is single evidence. The region needs to be explored extensively to find more such evidences and to prove the Acheulian antiquity of the region and inter connect the links to understand the continuity of the cultural history of the region.

There is a granite hillock 1.5 km west of the temple, called as Siddhon-ki-Toriya. Here is a big granite rock, vertically fractured in tow halves. It bears a single cupule which is roughly circular. The rock is roughly 8.5m in length, 6.0m in width and 3.5m in height. The grain size of the rock varies from 1.2 mm-0.4 mm. The cupule is 60 x 69 x 26.5 mm in dimension. The cupule is weathering however its surface is having the traces of Kinetic Energy Metamorposis. It means it was produced by direct percussion technique. This is the solitary cupule we discovered in the region. But we expect much more such evidence; hence the region needs to be explored extensively for more such evidence.

Rock paintings

There is another hillock called as Phyton hill because of the five rocks spreading like the fingers of a hand. The word Phyton may be aberration of five stone. It is about 3 km in the west of the village Navagarh. Here rock paintings have been found in a rock shelter in a big granite boulder. The shelter is 3.5 m in length, 2.3 m in depth and 1.55 m in height, and appears like a tortoise from the distance, that is why Nishant calls it as Tortoise Rock. It bears some clearly visible compositions of animals and geometric designs of pre cattle domestication Stone Age (microlithic / Mesolithic age). A person has written his name 'Veer Gurjar' in thick and bold letters in white colour (CaCO3). The detail of some significant rock art compositions is given below.

Composition No. One

In one composition there is a wild animal like a bison facing right and having three geometrical designs, two in front of it, one above the other and another above it. The bison is 19.5 x 17 cm in size, body decorated with multiple vertical lines and horns are fully grown and curved in side. In its front is a geometrical form filled with slightly slanting lines. Then there are two rectangular blocks, lower one decorated with four lines crossing each other in the centre. This

composition measuring 52 cm x 44 cm has been executed in the right side on the wall of the rock shelter in red colour with a fine brush. In the upper side of this composition there are traces of lines in comparatively thick brush and executed in ochre colour. Besides there are three symbols in dark red colour probably made later on. There is another design, roughly square in shape, filled with dots and executed in fine brush in red colour. The exfoliation of the rock surface on its right side has damaged this design partially.

The figures are concealed under a whiteencrustation of salts. Besides, there is an animal in outlines in faded red colour. It has been executed in fine brush and has been superimposed by the bision. Thus, in this composition can clearly see three phases of the execution rock paintings, two early phases of animals and designs of the Stone Age and the third one of symbols of comparatively later phase.

Composition No. two

On the left side of the shelter wall there is another composition with 7 wavy lines executed in medium size thick brush in red colour and placed one above the other. The composition measures 60 cm x 17 cm. Besides, there are two geometrical designs executed in fine brush in red colour. The left one measuring 11 x 10 cm is almost circular and has two concentric circles. The broad space between them has been decorated with straight lines. The left one measuring 16 cm x 12 cm is oblong in shape and has been divided in to two parts by a horizontal line.The lower part is comparatively bigger and has been decorated with 6 cresent shaped lines. The upper part is unequally divided by a vertical line and decorated with 9 lines, slantig from left to right. Both the designs are being concealed under thick encrustation of white colour. Besides, there are many traces of early figures in faint red colour on the roof of the rock shelter.

Petroglyph of a Jain deity

There is a figure of a Jain deity engraved in o narrow and dark cave in which we have to crawl down to reach there. Probably this

place might have a place for meditation and prayer by the Jain monks (munis) and someone has carved the figure I did not measure it, however it is 59 cm in height and 23 on th width. It holds an object in his right hand: 11 Nardly visible in the darkness of the cave.

Discovery of a handaxe on chert

What is important is that on the slope of the hill nearly 500 m west of the village we found a small hand axe on chert. It is well prepared and bears a sinking platform at 120^0, bulb of percussion has been partially romoved by flaking, head is broken, edges are zigzag prepared by removing five flakes from the obverse side and five flakes from its reverse side. Then the edge has been retouched from both the sides. It bears light red patination. We also found a circular hammerstone from red soil at a distance of nearly 30 m from the Phyton rockand 50 m from the painted rock shelter and a fossil bone exposed from the red soil in the field on the bank of a nala. Besides, Middle palaeolithic artefacts on chert and microliths on quartz were also discovered from the region by the first author in the subsequent visits in 2018.

Concluding remarks

Navagarh alias Nandpur and Navai village has a hoary past. Previously 9-10th century Jain temple along with many sculptures was found here. There is an old habitation site on the hill about 500 m in the west of the village. The rock shelters and caves in the hills have been used for meditation by the Jain munis and monks. However, discovery of the rock paintings took the cultural antiquity of the region to the Mesolithic age. Our visit also brought out a cupule on the granite rock on Siddhon-ki-Toriya hill. It is a new form of rock art at Navagarh, made by reductive technique and might be older than the rock paintings. However, the discovery of a handaxe on chert by us adds a new dimension to the cultural history of the region. It belongs to the Middle Phase of Acheulian which isdated between two to five lakhs years in India. It indicates that the Stone Age man explored the region at least in the middle Acheulian times. Kumar, in his second and third visit on 25-27 March and 3-6 July 2018 respectively found some Middle

Paleolithic artefacts on chert from Sapaun-ki-Toriya and some artefacts looking like Acheulian artefacts on some fragile stone! at 2.5 km from Navagarh on the right side of the road. Therefore, the region needs to be explored extensively to find more such evidence and to prove the Acheulian antiquity of the region. It is necessary to interconnect the links for understanding the continuity of the cultural history of the region.

- Prof. Giriraj Kumar
(Contact author)
Prof. in Rock Art Science and Indian Culture Secretary General, RASI
Dayalbagh, Agra- 282005.India
Email : girirajrashi.india@gmail.com

Jay Kumar Nishant
Pushanjali, Behind Nagar Bhawan, Tikamgarh
Email:jainishant49@gmail.com

Abhimanyu
Associte Professor, Department of Sanskrit,BHU,Varanasi
Email : abhimanyu.du@gmail.com

सन्दर्भ ग्रन्थ

प्रमुख जैन ग्रन्थ

आदिपुराण - आचार्य जिनसेन

महापुराण - आचार्य जिनसेन

हरिवंशपुराण - आचार्य यतिवृषभ

कषायपाहुड - आचार्य गुणधर

षट्खंडागम - आचार्य पुष्पदन्त एवं भूतबली

सर्वार्थसिद्धि - आचार्य पूज्यपाद

त्रिलोकसार - आचार्य नेमिचन्द्र

सिद्धांतसार दीपक - आचार्य सकलकीर्ति

पद्मनन्दि पंचविंशतिका - आचार्य पद्मनन्दि

मोक्षपाहुड - आचार्य कुन्दकुन्द

उमास्वामीश्रावकाचार - आचार्य उमास्वामी

प्रतिष्ठा, ज्योतिष-वास्तु ग्रन्थ

प्रतिष्ठातिलक - आचार्य सैद्धांतिक देव

प्रतिष्ठापाठ - आचार्य जयसेन

प्रतिष्ठासारोद्धार - पं. आशाधर

प्रतिष्ठा-सार संग्रह - आचार्य वसुनन्दि

प्रतिष्ठा रत्नाकर - पं. गुलाबचन्द्र 'पुष्प'

वास्तुसारिणी - मातृप्रसाद पांडेय

वास्तुसार - ठक्कुर फेरु

मुहूर्त चिन्तामणि - दैवज्ञ राम

मुहूर्त गणपति - दैवज्ञवर्य गणपति

सर्वार्थ चिन्तामणि - पं. महीधर शर्मा

भारतीय ज्योतिष - डॉ. नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य

वृहत् पाराशर होराशाज़्म् - पारासर मुनि

मुहूर्त दर्पण - डॉ. नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य

ज्योतिष रत्नाकर - राजवैद्य पं. बारेलाल जी

प्रतिमा विज्ञान - डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी

जैन प्रतिमा विज्ञान - श्री बालचन्द्र जैन

ऐतिहासिक,पुरातात्विक, सांस्कृतिक, धार्मिक पुस्तकें

ग्रन्थ का नाम : लेखक / संपादक

1. जैन मूर्तियों का उद्भव और विकास : डॉ. ब्रजेश रावत
2. देवगढ़ की जैनकला सांस्कृतिक अध्ययन : डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु
3. जैन आगमों में वर्णित वृक्ष एवं पर्यावरणीय अनुचिंतन : सिंघई जयकुमार जैन
4. चन्देल और उनका राजत्व काल : केशव चन्द्र मिश्र
5. बुन्देलखण्ड संस्कृति परम्परा और विरासत : डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी
6. भारतीय इतिहास एक दृष्टि : डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन
7. प्राचीन शिलालेख अहार जी : पं. गोविन्द दास कोठिया
8. गोलापूर्व डायरेक्टरी : पं. मोहनलाल काव्यतीर्थ
9. बुन्देलखंड का संक्षिप्त इतिहास : गोरे लाल तिवारी
10. पुरातात्विक सर्वेक्षण रिपोर्ट : डॉ. अम्बिका प्रसाद सिंह
11. प्राकृत भाषा अभिलेख : प्रो. रमेश कुमार पांडेय
12. मदनपुर तीर्थ का वैभव : इंजी. मनमोहन सिंह जैन
13. भारत की जैन गुफाएँ : डॉ. हरिहर सिंह
14. खजुराहो के जैन मन्दिरों की मूर्तियाँ : रत्नेशकुमार वर्मा
15. जैन प्रतिमा विज्ञान : डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी
16. बुन्देलखण्ड का पुरातत्व : डॉ. एस. डी. त्रिवेदी
17. महावीर जयन्ती स्मारिका 2015 : डॉ. सनतकुमार जैन
18. कुवलय माला कहा भाग -2 : उद्योतन सूरि / डॉ. प्रेम सुमन

19. ज्ञान प्रभा (कमल गिरी) :

20. हठयसाल दर्पण : पं. खेमरान पाठक

21. संस्कार सागर : ब्र. जिनेश मलैया

22. बुन्देलखंड का बृहद इतिहास : डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी

23. कालिंजर प्रबोध : डॉ. हरिओम तत्सत् ब्रह्म शुक्ल

24. चन्देल कालीन महोवा एवं जनपद हमीरपुर और महोबा के पुरावशेष : वासुदेव चौरसिया

25. खजुराहो का जैन पुरातत्व : डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी

26. The early rural of khajuraho : Dr. S.K. Mitra

27. प्रागैतिहासिक अतिशय क्षेत्र नवागढ़ : ब्र. जयकुमार निशान्त

28. मध्यप्रदेश का जैन शिल्प : नरेश कुमार पाठक

29. चन्देल कालीन बुन्देलखंड का इतिहास : डॉ. अयोध्या प्रसाद पांडेय

30. शैलचित्र हमारी धरोहर : प्रो.गिरिराज कुमार

31. महावीर जयन्ती स्मारिका : सज़्पादन डॉ. सनतकुमार जैन

32. ककरवाहा गौरव श्री पं मन्नूलाल प्रतिष्ठाचार्य, जन्म शताज़्दि समारोह : डॉ. सुन्दरलाल जैन

33. सिन्धू घाटी की सज़्यता एवं आर्यों का प्रश्न/मिशेल दनिनो : रुदकी निशेनवादी

34. अनेकांत : डॉ. जयकुमार जैन

35. गोलापूर्व जैन : पं. मोहन लाल काव्यतीर्थ

36. पपौरा दर्शन : पं. कमल कुमार शाज़्री

37. प्राचीनाभिलेखः : प्रो. भागचन्द्र जी भागेन्दु

38. स्थान नाम : समय के साक्षी (ललितपुर जनपद के संदर्भ में) डॉ. राकेश नारायण द्विवेदी

39. प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार : डॉ. नरेश पाठक

40. क्षुल्लक चिदानन्द स्मृति ग्रन्थ : पं. गोरेलाल शाज़्री

41. प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार : डॉ. नरेश पाठक

42. बुन्देलखंड का इतिहास भाग -5 : दीवान प्रतिपाल सिंह

43. कुवलय माला कहा द्वितीय : प्रो. प्रेम सुमन

44. Studies in Jain Art : Drumakant Pramanand and Sagarmal Jain

45. Inscriptions of the Paramarsh Chandellas Kachchhapaghats and Two Minor Dynasties - I Vol. 3 : Harihar Vitthal Trivedi

46. Inscription of the Chandellas Kachchhapahtas Etc vol, 7 part 3

47. Journal of Madhya Pradesh Ithihas Parisad : Dr. V.D. Jha

48. Temples of the pratihara period of central India : R.D. Trivedi

49. Genral Index to the report of the Archealogical Survey of India : Vincent Arthur Smith Vol. 1 to 2

50. Report of a Tour Bundelkhand and Rewa in 1883-84 and of A Tour in Rewa. Bundelkhand : J.P. Beglar, and a. Caninngham CSI, CSE, Vol. 2

51. Report of a Tour Bundelkhand and Malwa and In the central provinces 2000 : Malwa and Gwalior J.D. Beghlar and A Caninnigham CSI, CSE

52. Jaina Tembles of Western India : Dr. Harihar Singh

53. इनसाइज़्लोपीडिया ब्रिटानिका-भाग-4

54. कनिंघम, ए.दि. एंशियन्ट ज्योग्राफी ऑफ इंडिया, पृ. 406

55. संकालिया एच.डी. प्री हिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री इटसेटरा

जैन के.सी. हिस्ट्री एंड प्रोटोहिस्ट्री ऑफ इंडिया, नई दिल्ली

56. कृष्ण कुमार, ए. स्टडी इन दि स्टोन एज ऑफ खजुराहो इन सेन्ट्रल इंडिया पुरातत्व

57. वार्टस, टी. ऑ. युगन् -ज्व्यां, ट्रेवेज इन इंडिया, दो 1904-5, पृ. 250

58. ए.एस.आई. रिपोर्ट (कनिंघम) वाल्यूम 10

इ. पी. इंडिका, वाल्यूम-1

59. डिस्ट्रिज़्ट गजेटियर झाँसी (1965)

60. अल्ब्रूनीज गजेटियर झाँसी (1065)

61. सरकार डी.सी. इंडियन एपीग्राफी

62. पी.सी. रिपोर्ट ऑफ दि एंटीकुटीज इन दि डिस्ट्रिज़्ट ऑफ ललितपुर, पृ. 37

63. इलियट भाग 1, पृ. 10

64. हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मेडिकल इंडिया, भाग-2, इलियट, भाग-1

65. दा अर्ली रुलर्स ऑफ खजुराहो - एस.के. मित्रा

66. रिपोर्टस ऑफ टूर्स इन बुन्देलखंड एंड मालवा इन-कनिंघम

67. इपिग्राफिया इंडिका - (विभिन्न भागों में) आर्कियोलॉजीकल सर्वे ऑफ इंडिया

68. एनसियेंट बुन्देलखंड - के.के. शाह

69. द राईज एंड डिज़्लाइन ऑफ बुद्धिज्म इन इंडिया - डॉ. कनाईलाल हजारा

70. द हिस्ट्री ऑफ द गुर्जर प्रातिहार्य - डॉ. वैजनाथपुरी

71. स्टोन इज कल्चरल कज़्युनिटी इन नवागढ़ (नंदपुर) - रीजन डॉ. गिरिराज कुमार
72. नवागढ़ (नन्दपुर) इतिहास - हरिविष्णु अवस्थी
73. जैन शिलालेख संग्रह - डॉ. गुलाबचन्द्र जैन
74. तीर्थंकर महावीर और उनकी आचार्य परज़्परा - डॉ.नेमिचन्द्र शाज़्ी
75. बुन्देलखंड के शिलालेख - हरिविष्णु अवस्थी
76. गोलापूर्व जैन समाज एवं सर्वेक्षण - सज़्पादक - डॉ. सुरेन्द्र कुमार जैन
77. जैन कलातीर्थ, देवगढ़ - डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी, डॉ. शान्तिस्वरूप सिन्हा
78. अहार क्षेत्र के अभिलेख - डॉ. कस्तूर चन्द्र सुमन
79. खजुराहो का जैन पुरातज़्व - डॉ. मारुतिनन्दन प्रसाद तिवारी
80. म.प्र. एवं छज़्ीसगढ़ के पुरातज़्व का सन्दर्भ ग्रन्थ - डॉ. आर. के. शर्मा
81. क्षत्र चूड़ामणि - वादीभ सिंह सूरि
82. चक्रवर्ती अरनाथ - सज़्पादक - ब्र. जयकुमार जैन निशांत
83. अहार जी सिद्धक्षेत्र एवं उसके निकटवर्ती तीर्थक्षेत्र - डॉ. सुनील जैन संचय
84. प्राचीन क्षेत्र अहार के शिलालेख - पं.गोविन्द दास जैन, कोठिया न्यायतीर्थ
85. मध्यप्रदेश में पुरातज़्वीय शोध - प्रो. कृष्णदज़् बाजपेयी,
86. क्षुल्लक चिदानन्द स्मृति ग्रन्थ : पं. गोरेलाल शाज़्ी

शोधपत्र

1. अद्भुत अद्वितीय कलात्मक क्षेत्र नवागढ़ - डॉ. बी. व्ही. खरबड़े
2. बुन्देलखंड का नवोदित तीर्थ नवागढ़ - डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन
3. चन्देल शासनकाल में जैन धर्म का विकास : श्रीमती अर्पिता रंजन
4. बुन्देलखंड का इतिहास और जैन पुरातज़्व : प्रो. दिगज़्बर दास जैन
5. श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नावई नवागढ़, नन्दपुर - डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी
6. भारतीय इतिहास में प्रागैतिहासिक क्षेत्र नवागढ़ का योगदान - जयकुमार निशान्त
7. नवागढ़ पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र - प्रो. गिरिराज कुमार, आगरा
8. नवागढ़ (नन्दपुर) पाषाण युग का एक सांस्कृतिक क्षेत्र - डॉ. गिरिराज कुमार आगरा
9. संस्कृत जैन प्रबन्ध में प्रतिपादित शिक्षा पद्धति - डॉ. नेमिचन्द्र शाज़्ी
10. चन्देल और उनके जनहित के कार्य - डॉ. के. पी. त्रिपाठी
11. Nawagardh Antiquities from the Chandela Period – Dr. Yashwant Malayia,

नवागढ़ : अभिलेख एवं पुरातज़्व

Colorado State University

जिनवाणी संग्रह

दर्शन पाठ - संस्कृत
दश भज़्त्यादि संग्रह - आचार्य पूज्यपाद, चैत्यभक्ति
देवस्तुति - कवि बुधजन
विनय पाठ - नाथूराम
देवस्तुति- पं. दौलतराम जी
दर्शनपाठ - हिन्दी

चित्रकला

1. भारत की चित्रकला - राधाकृष्णदास
2. भारतीय चित्रकला का विवेचन - आर.ए. अग्रवाल
3. जैन चित्रशैली के अभिव्यंजित नारी सौन्दर्य शोध प्रबन्ध-रोली ज़्यौहार

वेद एवं पुराण

ऋग्वेद, शान्तिपर्व, अध्याय 29
अष्टध्यायी - आचार्य पाणिनी
महाभारत - उद्योगपर्व

पी-एच-डी.

1. मध्यप्रदेश के जैन संस्कृति अभिलेखों का अध्ययन- शोध प्रबन्ध 2013 अरविन्दकुमार जैन

अभिलेख

1. हाथी गुफा खारवेल शिलालेख (उड़ीसा)
2. सम्राट खारवेल का ऐतिहासिक शिलालेख,42

अनुवाद

1. प्रबोध चन्द्रोदय - अनुवाद टेलर
2. अलब्रूनी - अनुवाद सन्तराम, भाग-2

पत्र-पत्रिकाओं के सन्दर्भ

1. नवागढ़ एक महज़्वपूर्ण मध्ययुगीन जैनतीर्थ - पं. नीरज जैन, सतना-अनेकान्त अंक (फरवरी 1963)

2. नवागढ़ क्षेत्र का पुरातात्त्विक वैभव - पं. नीरज जैन, सतना-सन्मति संदेश, अंक (मार्च 1971)
3. बुन्देलखंड के मोहन जोदड़ो एवं लोथल के रूप में उभरा नवागढ़-सुधीर जैन, राइजिंग बुन्देलखंड, नवज़्बर 2014
4. बुन्देलखंड का नवोदित प्रमुख तीर्थ नवागढ़ - डॉ. कस्तूरचन्द्र सुमन, दमोह गोलापूर्व जैन पत्रिका अंक (मई-जून, 2013)
5. नवागढ़ के बीहड़ में शैलाश्रय और प्रागैतिहासिक शैलचित्र - डॉ. स्नेहरानी जैन सागर, प्राचीन जैन जीर्णोद्धार (अप्रैल 2015)
6. सन्तों की पुरातन साधना स्थली नवागढ़- डॉ. भागचन्द्र भागेन्दु दमोह, राजस्थान जैन सभा, स्मारिका 2015
7. श्री दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नावई, नवागढ़ नन्दपुर- डॉ. काशीप्रसाद त्रिपाठी, टीकमगढ़, संस्कार सागर अंक (जून 2015)
8. दिगज़्बर जैन अतिशय क्षेत्र नवागढ़-श्री श्रेयांस जैन, ककरवाहा, जैन सन्देश अंक (जुलाई 2015)
9. प्राचीन जैन तीर्थ नन्दपुर - शिलालेखों के दर्पण में -श्री हरि विष्णु अवस्थी, टीकमगढ़ संस्कार सागर अंक (जनवरी 2016)
10. श्रीमज्जिनेन्द्र पंचकल्याणक मानस्तज़्भ प्रतिष्ठा महोत्सव -श्री हंसकुमार जैन मेरठ, सराक सोपान अंक (मार्च 2016)
11. नवागढ़ में मिले हजारों वर्ष प्राचीन शैलाश्रय एवं शिल्प -श्री राजीव जैन शोधार्थी, संस्कार सागर अंक (अगस्त 2016)
12. ललितपुर जनपद के जैन तीर्थक्षेत्र नवागढ़ (नावई)में मिले पाषाण युग के साक्ष्य- डॉ. सुनीलकुमार संचय सराक सोपान अंक (दिसज़्बर 2016)
13. एक हजार वर्ष प्राचीन मूर्तियाँ मिली खुदाई में - डॉ. सुनील संचय, ललितपुर जैन गजट, अंक सितज़्बर 2016
14. ललितपुर जनपद के जैन तीर्थक्षेत्र नवागढ़ (नावई) में मिले पाषाण युग के साक्ष्य - डॉ. सुनील संचय, संस्कार सागर (दिसज़्बर 2016)
15. नवागढ़ क्षेत्र से मिले दस हजार वर्ष पुराने अवशेष - श्री नवनीत जैन मेरठ, सज़्मेदाचल अंक (नवज़्बर 2016)
16. नवागढ़ में मिले मध्य पाषाण युग के अवशेष -श्री शरद जैन, दिल्ली सांध्य-महालक्ष्मी दिल्ली, नवज़्बर 2016
17. जैन तीर्थक्षेत्र नवागढ़ (नावई) में मिले पाषाण युग के साक्ष्य - डॉ. सुनील संचय, जैन गजट, अंक नवज़्बर 2016
20. गुरुकुल परज़्परा का संवाहक नवागढ़ (नन्दपुर) - डॉ. श्रेयांस जैन बड़ौत-अनेकांत

जुलाई-सितज़्बर 2013

21. पाषाण प्रतिमाओं में रूपायत- पार्श्वनाथ-जनवरी 20017, प्राचीन तीर्थ जीर्णोद्धार
22. नवागढ़ (नन्दपुर) की पुरा सज़्पदा और मांगलिक प्रतीक- ब्र. जयकुमार जैन निशान्त - संस्कार सागर, जनवरी 2019